CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कला · क्रांति · कर्मण्यता

सरिता मुक्ता रिप्रिंट

सेट

3

S367

दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सिपाही क्यों लड़ता है?

5367

मेजर तपनचंद्र घोष

State Museum Library Lucknow

आत्मरक्षा के लिए या देश की रक्षा के लिए?

आरंभ से ही मनुष्य अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करता आया है. पहले उसे आत्मरक्षा के लिए जंगली जानवरों के विरुद्ध लड़ना पड़ा, फिर सभ्यता-विकास के साथ उसे स्वयं अपनी ही जाति से युद्ध करना पड़ा.

जैसेजैसे मनुष्यों की संख्या बढ़ने लगी वे अपनेआप को कबीलों के आधार पर या भौगोलिक दृष्टि से एक सीमा में बंधे देशों के आधार पर समुदायों की दृष्टि से व्यवस्थित करने लगे. व्यक्तिगत युद्ध अब सामुदायिक युद्ध बन गया. बाद में उन के नेताओं ने उन में से कुछ को सिपाहियों के रूप में रख लिया.

पेशेवर सिपाहियों के आ जाने के बाद युद्ध सिर्फ अस्तित्वरक्षा के लिए किया जाने वाला संघर्ष ही नहीं रह गया. दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक इस प्रश्न पर विचार करते आए हैं कि पेशेवर सिपाही युद्ध के मैदान में इतनी बहादुरी से क्यों लड़ता है. मनुष्य क्यों अपनी ही जाति के विरुद्ध लड़ने को तैयार हो जाता है. इस की व्याख्या करते हुए कई कारण दिए गए हैं, पर उन में से कोई भी एक पूरी तरह संतोषजनक नहीं है.

मनोवैज्ञानिकों का कहना है, मनुष्य में आत्मरक्षा या जीने की इच्छा सब से अधिक महत्त्वपूर्ण है. लेकिन सिपाही तो स्वयं अपनी ही इच्छा से अपनी जान खतरे में डालता है. यही नहीं, हमारे सामाजिक जीवन में दूसरों की जान लेना सब से घृणित अपराध माना जाता है. हमारी सैनिक चेतना इस प्रकार से प्रशिक्षित की गई है कि दूसरे की हत्या करने का विचार ही घृणित महसूस होता है, फिर सिपाही इस नैतिक चेतना पर किस तरह विजय पा लेता है? और वही मौका पड़ने पर बिना किसी ऐसे अहसास के किस तरह दूसरे मनुष्यों को मारने के लिए तत्पर हो जाता है?

धन सैनिक की मजबूरी

इन के अलावा सैनिक जीवन की और भी बहुत सी कठिनाइयां हैं, जिन्हें आम आदमी पसंद नहीं करते. लेकिन ये कठिनाइयां ऊपर गिनाई गई दो मुख्य बातों की तुलना में अधिक महत्त्व की नहीं हैं.

समयसमय पर इस तरह के अनेक विचार पेश किए गए हैं, जिन के अनुसार देशभक्ति या अनुशासन या बदले में कुछ मिलने का लोभ या दंड का भय या इसी तरह के दूसरे कारण ही सिपाही को अपने स्वभाव के विरुद्ध काम करने के लिए प्रेरित करते हैं. पर साथ ही यह भी सिद्ध किया जा चुका है कि इन में से कोई एक कारण सभी सिपाहियों पर समान रूप से लागू नहीं होता.

इसलिए इस बात का विश्लेषण कर लेना आवश्यक है कि एक साधारण आदमी किस तरह सिपाही बन जाता है. वे कौन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सी बातें हैं जो विभिन्न दिशाओं से उसे प्रभावित करती हैं और आखिर में उसे एक सफल सैनिक बना देती हैं.

इन बातों पर विचार करते हुए मैं ने मुख्य रूप से भारतीय सैनिक को ही निगाह में रखा है. हालांकि दूसरे देशों के सिपाहियों के बारे में भी यही कारण लागू होते हैं. पर मैं ने यहां पर विशेष रूप से उन्हीं बातों पर विचार किया है जो भारतीय सैनिक को प्रभावित करती हैं. साथ ही यह भी याद रखना जरूरी है कि सैनिक भी एक साधारण मनुष्य ही होता है और वह भी विभिन्न परिस्थितियों में अपने व्यक्तित्व के अनुसार अलगअलग ढंग से व्यवहार करता है.

जब रंगरूट रेजिमेंटल सेंटर में ट्रेनिंग के लिए आता है, तो उस समय वह एक सीधासादा अशिक्षित और अंधविश्वासी व्यक्ति होता है. उस की उमर 18 या 19 साल होती है और वह गरीब तथा स्वभाव से धार्मिक और भोलाभाला होता है. उस की गरीबी सब से महत्वपूर्ण बात है. भारतीय गांव वालों के सेना में भरती होने का प्रधान कारण यह है कि वहां उन्हें आसानी से दो वक्त का खाना और साथ में थोड़ाबहुत पैसा मिल जाता है.

यह सच है कि दस प्रतिशत सैनिक पुश्तैनी पेशा होने के कारण ही फौज में भरती होते हैं. पर अधिकतर गरीबी की वजह से ही सेना में भरती होने आते हैं. यही कारण है कि भारत में अधिकतर सिपाही उन प्रदेशों से आते हैं जहां खानेपीने की चीजें महंगी हैं.

इस उमर में जवान और पैसे के लिए तंग रंगरूटों को बदलना और मोड़ना आसान होता है. सब से पहले उन्हें अनुशासन की कठोरताओं का अभ्यास कराया जाता है. फिर उन्हें हर मामले में अपने से बड़े अफसरों की आज्ञा को देववाणी समझ कर पालन करना सिखाया जाता है. कसरत का अभ्यास कराने के साथसाथ उन्हें हर काम में अनुशासन के कठोर नियमों का पालन करना सिखाया जाता है.

यह ट्रेनिंग इतनी कठोर होती है कि उन्हें तब तक बैरक छोड़ कर बाहर जाने की इजाजत नहीं दी जाती जब तक उन की अनुशासन पालन की योग्यता एक निश्चित स्तर तक नहीं पहुंच जाती. यह सब सिर्फ इस उद्देश्य से किया जाता है कि उन के शरीर और मस्तिष्क पूरी तरह आज्ञापालन करना सीख जाएं.

अपने पेशे के प्रति विशेष गर्व

भारतीय सैनिकों को साधारण नागरिकों के साथ मिलनेजुलने और उठनेबैठने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता. दरअसल उन्हें अलगअलग रखा जाता है क्योंकि अधिकारी यह नहीं चाहते कि इतनी कठोर और लंबी ट्रेनिंग के बाद आज्ञापालन की जिस क्षमता को उन में पैदा किया गया है, वह साधारण नागरिकों के प्रभाव से नष्ट हो जाए. उन के अहं और व्यक्तित्व को अनुशासन के चक्र में पीस दिया जाता है.

एक तरह से यह ट्रेनिंग उन के सोचनेविचारने के ढंग को ही बदल देती है. अधिकारी नहीं चाहते कि ट्रेनिंग का यह असर जल्दी ही खतम हो जाए. इसी लिए सैनिकों के बीच यह कहावत प्रचलित है कि आदमी जितना कम पढ़ालिखा हो उतना ही अच्छा सैनिक बनता है. इस में कुछ सच्चाई भी है. विचारवान व्यक्ति विचारहीन व्यक्ति जितना आज्ञापालक नहीं बन सकता.

इस ट्रेनिंग के दूसरे चरण में सैनिक के मन में अपने साथियों या सहयोगियों के प्रति मित्रता की भावना पैदा की जाती है. उन्हें इस तरह से मिलजुल कर रहना सिखाया जाता है कि उन में एकदूसरे के प्रति मित्रता और सहयोग की ऐसी भावना पैदा हो जाती है जो भाईचारे की भावना से भी ज्यादा गहरी होती है. सैनिक अपने साथी के लिए जान देने से भी नहीं हिचकता.

एक यूनिट के सैनिकों में जो प्यारप्रेम होता है, वह सचमुच अनुकरणीय है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अन्य सुविधाओं के न होने पर कोई सैनिक लड़ाई के मैदान में देश के नेताओं जितना देशप्रेम कैसे प्रदर्शित कर सकता है?

युद्ध में लड़ने वाले सैनिकों को एक यूनिट से दूसरी यूनिट में न भेजने का यही प्रधान कारण है. ऐसे सैनिकों के बहुत से उदाहरण मिलते हैं, जो तरक्की मिलने पर भी दूसरी यूनिट में जाने को राजी नहीं हुए.

तीसरा ढंग है सैनिक में अपने तथा अपने पेशे के प्रति विशेष गर्व की भावना पैदा करना. एक बार जब उन में यह अभिमान की भावना पैदा कर दी जाती है तो वे यह सोच कर कि यदि वे अपने से अपेक्षित किसी भी काम में असफल हो गए तो उन का मजाक उड़ाया जाएगा, कुछ भी कर गुजरने को तैयार हो जाते हैं. इस खयाल से कि कोई उसे डरपोक न कहे सिपाही बड़ी से बड़ी कठिनाई का सामना करने को तैयार रहता है. यहां तक कि एक फुटबाल मैच में भी जब उन्हें जीत के लिए उकसाया जाता है तो वे 'जीतेंगे या मरेंगे' की भावना से खेलने लगते हैं.

दूसरे शब्दों में कहा जाए तो हम कह सकते हैं कि सैनिकों को संकट की पूरी तरह उपेक्षा कर के जीने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है. उन्हें ऐसा करने के लिए कहा नहीं जाता, पर उन से यह अपेक्षा की जाती है कि वे आज्ञा मिलने पर इस तरह व्यवहार करें. वे जानते हैं कि ऐसा न करने पर उन्हें कितनी शर्मिंदगी उठानी पड़ेगी.

भारत में सैनिक कुछ ऐसे विशेष क्षेत्रों या गांवों से आते हैं, जिन के निवासी परंपरागत रूप से फौज में भरती हुआ करते हैं. एक ही गांव के सभी हमउमर पुरुषों का सेना में होना बहुत असाधारण बात नहीं है. इस कारण सैनिक को सिर्फ यही भय नहीं होता कि यूनिट में उस का मजाक उड़ाया जाएगा, वह इस बात को अच्छी तरह जानता है कि गांव लौटने पर उस के परिवार के दूसरे सदस्यों और उस के पड़ोसियों की निगाह में उस का सम्मान कम हो जाएगा.

इस के साथ ही उन में अपनी योग्यता तथा अपने हथियारों और अपने से बड़े अधिकारियों के प्रति दृढ़ विश्वास पैदा किया जाता है. हर एक सैनिक इस विश्वास के साथ युद्ध में जाता है कि वह और उस के साथी जरूर विजयी होंगे. उन का यह दृढ़ विश्वास होता है कि व्यक्ति असफल तभी होता है जब वह जी-जान से कोशिश नहीं करता. यही कारण है कि वे भारी संकट में फंसे होने पर भी इस आशा से अपने मोर्चे पर डटे रहते हैं कि शत्रु जल्दी ही पीछे हट जाएगा और वे अंत में विजयी हो ही जाएंगे. सैनिक को हार या असफलताओं के बारे में कभी भी कुछ नहीं बताया जाता.

आसक्ति भावना का अभाव

धर्म का प्रभाव भी बहुत महत्त्वपूर्ण होता है. सैनिकों को यह विश्वास दिलाया जाता है कि उन के परिवारों की अच्छी तरह देखभाल की जाएगी और उन्हें अपनी रेजिमेंट में सम्मानित सम्मान प्रदान किया जाएगा. कभीकभी तो उन्हें ऐसा लगता है कि जीवित रहने से मरने में उन्हें अधिक फायदा है. धार्मिक पुरोहित या गुरु हर एक यूनिट का एक महत्त्वपूर्ण अंग होता है और वह समयसमय पर सैनिक के मन में उठने वाली शंकाओं का समाधान करने में बहुत सहायक होता है. साथ ही उन्हें ऐसे साहित्य और रेडियो ब्राडकास्ट से दूर रखा जाता है, जिस से उन के मन में अपनी सहज आस्था के प्रति शंकाएं उत्पन्न होने की संभावना हो. अज्ञान वरदान है, अंगरेजी की यह कहावत भारतीय सैनिक पर पूरी तरह चरितार्थ होती है.

परिवार के प्रति आसक्ति भाव कर्तव्य के रास्ते में दूसरी बाधा है. ऐ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस आसक्ति से बचाने का वर्तमान ढंग यह है कि सिर्फ एक प्रतिशत सैनिकों को ही अपने साथ परिवार रखने की इजाजत दी जाती है, और यह भी छः साल में सिर्फ एक बार. मतलब यह है कि यद्यपि उन्हें परिवार रखने की इजाजत तो दी जाती है, लेकिन उन्हें सुविधाएं इतनी कम दी जाती हैं कि उन में किसी तरह की आसक्ति पनपने नहीं पाती.

उन की ट्रेनिंग ही खुद ऐसे यथार्थवादी तरीके से कराई जाती है कि वे स्वयं ही स्वभाव से कठोर बन जाते हैं. उदाहरण के लिए जब उन्हें बेयोनट मारने की ट्रेनिंग दी जाती है तो उन के सामने लक्ष्य के रूप में मनुष्य की आकृति का पुतला रखा जाता है. इस पुतले पर निरंतर अभ्यास करने से उन में कठोरता और निर्ममता की भावना जम जाती है. युद्ध में भी वे ऐसे लड़ते हैं जैसे पहले की तरह अभ्यास कर रहे हों.

शांति के समय यह सब इसलिए किया जाता है कि सैनिक युद्ध के लिए तैयार रहें. युद्ध के मैदान में जो कुछ होता है, उस के लिए कुछ दूसरी बातों पर विचार करना होगा. सब से पहला प्रश्न है एक ऐसे व्यक्ति की हत्या करने का जिस ने सैनिक को व्यक्तिगत रूप से किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचाई होती. व्यक्तिगत रूप से सैनिक की इस शंका को यह समझा कर दूर कर दिया जाता है कि जिन लोगों के विरुद्ध वह लड़ रहा है, वे लोग उस के देश और देशवासियों के लिए खतरे का कारण हैं. उसे यह बताया जाता है कि अगर उस ने पहले ही शत्रु के सैनिकों को नष्ट न कर दिया तो वे भारी विनाश का कारण बन जाएंगे.

यही नहीं, अगर उस ने उन्हें न मार दिया तो वे ही उसे मार देंगे. इस तरह मारो या मर जाओ उन का नारा बन जाता है. अंत में सैनिक के लिए आत्मरक्षा के लिए लड़ना जरूरी हो जाता है.

एक बार युद्ध शुरू हो जाने के बाद तो समस्या हल ही हो जाती है, क्योंकि तब तो वह खुद अपनी ही आंखों से अपने साथियों को मरते हुए देखता है जिस से वह उत्तेजित हो जाता है और उस की घृणा जाग जाती है. फिर तो वह खुदबखुद ही लड़ने लगता है. उस समय तो यह कठिनाई पैदा हो जाती है कि सैनिक को किस तरह नियंत्रण में रख कर योजना के अनुसार युद्ध कराया जाए. यह सब 'आटोमेशन' की लंबी ट्रेनिंग के बाद ही संभव हो पाता है.

व्यक्तिगत क्षति का भय

लड़ाई का डर भी एक बाधा है. यह सच नहीं है कि सैनिकों को कभी भी डर नहीं लगता. जब भी कोई सिपाही पहली बार लड़ने के लिए जाता है तो उस के मन में भी अज्ञात के प्रति डर रहता है. इस समस्या को नए सैनिकों के साथ पुराने अनुभवी सैनिकों को मिलाजुला कर हल किया जाता है.

जब नया रंगरूट अनुभवी सैनिकों को बेखटके आगे बढ़ते हुए देखता है तो वह भी उन के पीछेपीछे बढ़ने का साहस कर लेता है. वह यह अच्छी तरह जानता है कि अगर उस ने साहस से काम न लिया तो वह किस तरह हमेशा के लिए उपहास का पात्र बन जाएगा और यह भी कि उसे दंड भी भोगना पड़ेगा. एक बार युद्ध के बीच में पहुंच जाने के बाद तो कोई समस्या नहीं रह जाती. उस का भय बहुत कुछ इम्तिहान में बैठने के भय जैसा ही होता है. भय तभी तक रहता है जब तक पर्चा सामने नहीं आ जाता.

युद्ध के मैदान में वह देखता है कि यद्यपि उस के चारों ओर गोलियां बरस रही हैं और बम फट रहे हैं, फिर भी उसे चोट नहीं लग रही. इस से उस में आत्मविश्वास जागता है. इस के साथ ही उस में साहसी कार्य करने और अपने मृत साथियों का बदला लेने की भावना भी पैदा होती है. य सब उस में आत्मविश्वास को जन्म देते हैं और वह घमासान लड़ाई के लिए तत्पर हो जाता है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ और भी छोटीछोटी बातें हैं जिन के कारण सैनिक कभीकभी बहादुरी के अनोखे कारनामे कर दिखाते हैं. बदले में मिलने वाले सम्मान और पुरस्कार का लालच. उन का आर्थिक मूल्य चाहे कुछ भी हो, साथियों के बीच मिलने वाला सम्मान उन्हें बहुत प्रोत्साहित करता है. हर एक सैनिक इस तरह के सम्मान को पाने के सपने देखा करता है. अकसर वह उस के लिए अपनी जान जोखिम में डालने में भी नहीं हिचकता. सेना बहादुरों का सम्मान करना खूब जानती है. यह एक निश्चित स्वार्थ के लिए किया जाता है, और यह सफल भी रहा है.

अकसर यह कहा जाता है कि सैनिक देशप्रेम की भावना से लड़ता है. सेना के सैनिक कर्मचारी के लिए देशप्रेम विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं होता. देश के जीत लिए जाने की स्थिति में अपनी व्यक्तिगत क्षति का विचार ही उसे लड़ने के लिए उत्साहित करता है.

युद्ध के समय नए भरती किए गए सैनिकों के मन में जरूर देशप्रेम की भावना का बहुत महत्त्व होता है. वे नएनए होते हैं, उन में देशप्रेम का जोश भरा हुआ रहता है. कुछ समय बीत जाने पर यह जोश कम हो जाता है. इस कथन को कुछ लोग चुनौती दे सकते हैं, लेकिन इन पंक्तियों का लेखक व्यक्तिगत रूप से इस बात को जानता है कि देशप्रेम की भावना उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होती जितना कि कुछ लोग दावा करते हैं.

अकसर यह प्रश्न पूछा जाता है कि पारिवारिक जीवन से वंचित किए जाने पर सैनिकों की कामभावना को किस तरह नियंत्रित किया जाता है. मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि कठोर शारीरिक श्रम उन्हें इतना थका देता है कि वे नींद के सिवा किसी चीज के बारे में सोच ही नहीं पाते. कठोर शारीरिक श्रम के कारण उन के खाली दिमाग को इधरउधर की बातें सोचने का समय भी नहीं मिलता. चाहे युद्ध का मैदान हो चाहे शांति का समय, सैनिक को दिन भर कठोर परिश्रम करना पड़ता है. यह सब एक उद्देश्य के साथ किया जाता है. इस के सिवा उन्हें नियंत्रण में रखने का कोई और तरीका भी नहीं है.

सैनिक सुरक्षा का प्रबंध

अंतिम महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सैनिक की सुखसुविधाओं की पूरी तरह देखभाल की जाती है. अंगरेजों के समय में उस का आज से भी अधिक ध्यान रखा जाता था. इस लेख का लेखक तो सिर्फ यही कह सकता है कि हमारे नेताओं को सिर्फ सैनिकों के देशप्रेम पर ही सारा भार नहीं छोड़ देना चाहिए. सैनिक के सामने आने वाली सभी कठिनाइयों को दूर करने की पूरीपूरी कोशिश की जानी चाहिए.

कुछ सामान्य आवश्यकताएं इस प्रकार हैं: घर से बराबर चिट्ठीपत्रियों का आना, यदि उस की मृत्यु हो जाए तो परिवार की सुखसुविधा का प्रबंध, अच्छा भोजन, और उस की संपत्ति की सुरक्षा. यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिए कि मानसिक परेशानी में फंसा सैनिक कभी भी अच्छी तरह नहीं लड़ सकता. वह तभी पूरे जीजान से लड़ सकता है जब उस का मन घरेलू उलझनों से पूरी तरह मुक्त हो. इसलिए अधिकारियों को चाहिए कि सैनिकों के सामने आने वाली समस्याओं का जल्दी से जल्दी पूरी तत्परता से निवारण करें.

निष्कर्ष के रूप में यह बता देना भी जरूरी है कि इस लेख में जिन कारणों पर विचार किया गया है, वे हर एक सैनिक या सभी सैनिकों पर एक समान रूप से लागू नहीं होते. हर व्यक्ति का सोचने का ढंग अलगअलग होता है. किसी पर एक बात अधिक प्रभाव डालती है तो किसी पर दूसरी. लेकिन इन सभी कारणों का अंतिम और कुल प्रभाव यही होता है कि वे युद्ध के मैदान में डट जाते हैं. ●●

61 : 4079 मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरिता मुक्ता के रिप्रिंटस सैट

सेट नं. 1 : प्राचीन हिंदू संस्कृति, शंबूक वध, अतीत का मोह, पुरोहितवाद, गौपूजा, हमारी धार्मिक सहिष्णुता, कृष्णनीति : हमारा नैतिक पतन, ज्ञान की कसौटी पर परलोकवाद, राम का अंतर्द्वंद्व, राम का अंतर्द्वंद्व : आलोचनाओं व आपत्तियों का उत्तर, भारत में संस्कृति का ब्राह्मण नियंत्रित विस्तार, हिंदू धर्म, संस्कृत, भारतीय नारी की धार्मिक यात्रा, कर्ण, भारतीय नारी की सामाजिक यात्रा, तुलसी और वेद, रामचरितमानस में ब्राह्मणशाही, युगोंयुगों से शोषित भारतीय नारी, भ्रष्टाचार, रामचरितमानस में नारी, सत्यनारायण व्रत कथा, क्या नास्तिक मूर्ख हैं? गांधीजी का बलिदान, यज्ञोपवीत, जंत्र तंत्र मंत्र, कर्मयोग, गरुड़ पुराण, ईश्वर, आत्मा और पाप, राम कथा व सीता चरित्र.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 2 : कितना महंगा धर्म, कितना महंगा धर्म : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, कितना महंगा धर्म (निर्णय), सरिता और हिंदू समाज, तुलसी साहित्य : अनुवादों की सफल नुमाइश के सिवा क्या है? तुलसी साहित्य : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, हिंदुओं के मंदिर कैसे हों? रावण, रामचरितमानस के अविश्वसनीय प्रसंग, रामचरितमानस के कुछ असंगत स्थल, श्रीकृष्ण, गीता : कर्मवाद की व्याख्या या कृष्ण का आत्म प्रचार, क्या कौमार्य रक्षा दकियानूसी है? कृष्ण और राधा, श्रीमद्भागवत, भागवत और भूगोल, समाजवाद बनाम स्वतंत्रता, कामायनी, हिंदू विवाह पद्धति, पुत्रेष्टि यज्ञ, तुलसीदास और हिंदू समाज, हिंदी साहित्य का गलत इतिहास, धनुषयज्ञ, कृष्ण और गोपियां, हमारे देव मंदिर, क्या समाजवाद अनिवार्य है? विवाह पूर्व यौन संबंध, श्रीकृष्ण : अपने जीवन की संध्या में, सताई गई नारी, कृष्ण और कुब्जा.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 3 : सिपाही क्यों लड़ता है, प्रेम पत्र न लिखिए, डायरी न लिखिए, इसलाम और स्त्री, योगी अरविंद, गीता में अंतर्विरोध, गायत्री मंत्र, गायत्री मंत्र : आलोचना व आपत्तियों का उत्तर, ट्रेड यूनियन, संसद सदस्य श्री चादर वाला केस : मुकदमे की काररवाई, सेशन जज का निर्णय, उच्च न्यायालय का निर्णय, सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय, घाटे वाले बालाजी, आखिरत की अटकलें, हिंदी साहित्य की बपौती, फूल मोतियों के, मटर की उन्नत किस्में, बीज उपचार, भीष्म, मुसलिम विवाह, भगवान श्री रजनीचर, महाभारत की ऐतिहासिकता, महाभारत की ऐतिहासिकता : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, रेंट कंट्रोल एक्ट एक विफल कानून, आप की लड़की प्रेम करती है, यूनियन, सौंदर्य प्रतियोगिता, वैज्ञानिक ज्ञान बनाम अध्यात्म ज्ञान, पूंजीपति, नियोग, सरिता और हिंदू समाज.

मूल्य 5 रुपए

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसलाम और स्त्री

महरउद्दीन खान

भारत में भी नारी विषयक नियमों में परिवर्तन आवश्यक

सृष्टि के विकास में स्त्री और पुरुष का समान योगदान रहा है, ऐसा कुछ लोगों का विचार है. पर मनुष्य के विकास में स्त्री का योगदान पुरुष से कहीं अधिक है. इतना होने पर भी पिछले युगों में नारी वर्ग पर पुरुष वर्ग ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया और भांतिभांति के लुभावने नारे दे कर उसे घर की शोभा मात्र बना दिया. आज वह युग लद चुका है और स्त्री व पुरुष को समान अधिकार प्रदान किए जाने लगे हैं. लैंगिक आधार पर भेदभाव करना आज के युग में सभ्यता की निशानी नहीं कहा जा सकता बल्कि आज युगों से पिछड़े नारी वर्ग को पुरुष के समान बनाने के लिए केवल समानाधिकार ही नहीं, विशेषाधिकार प्रदान करने की भी आवश्यकता है.

नारी की अवहेलना

आज संसार के सभी धर्म (इसलाम के अतिरिक्त) नारी और पुरुष की समानता को, सिद्धांत व व्यवहार दोनों ही रूपों में, स्वीकार करते हैं, पर इसलाम इन दोनों में से किसी भी रूप में इस तथ्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है. मुसलमान आज भी चारचार शादियों के विधान को बनाए रखना चाहते हैं तथा जब भी इस दिशा में सुधार के लिए कोई उदार मुसलिम या गैरमुसलिम आवाज उठाता है तो उस का जबरदस्त विरोध किया जाता है और यह दलील पेश की जाती है कि यदि कोई पुरुष सब पत्नियों से समान व्यवहार कर सकता है तो एक से अधिक विवाह करने में क्या आपत्ति है! लेकिन ऐसा होना असंभव है. कुरान शरीफ में भी यह बात स्पष्ट की गई है. 'वलन तस्तीउ अंतादिलू वयनान्निसाई' (1-4-129) इस का अर्थ है. 'और यह तुम से कभी न हो सकेगा कि सब बीवियों से बराबरी रखो.' इस आयत को देखते हुए सब पत्नियों से समान व्यवहार करने की जो दलील थी वह सिद्ध हो जाती है.

एक मुसलिम नारी पर जो अत्याचार होते हैं या समाज में जो भी उस की स्थिति है वह सब कुरान शरीफ की आड़ में है. कुरान शरीफ के अनुसार, 'निसाम्रो कुम हर सुल्लकुम फातू हर सकुम शीलम' (1-2-123) अर्थात 'बीवियां तुम्हारी खेतियां हैं, तुम्हारे वास्ते, पस जाओ खेत अपने में जिस तरह से चाहो तुम.' इस प्रकार इसलाम में पत्नी को 'प्रापर्टी' समझा जाता है और पति को उस के किसी भी प्रकार से प्रयोग करने का खुला अधिकार है. क्या आज के युग में पति-पत्नी का इस प्रकार का संबंध उचित ठहराया जा सकता है. पीछे किसी युग में ऐसा संभव रहा होगा पर आज गृहस्थ जीवन में पति व पत्नी के अधिकार समान होने चाहिए.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'अररिजालू कव्वा मूना अलन्निसाई' (कुरान शरीफ 1-4-34) इस आयत का अर्थ है, 'मर्द हाकिम है औरतों पर.' समझ नहीं आता कि खुदा ने ऐसे संदेश क्यों दिए थे? खुदा के नारी वर्ग से इस प्रकार के व्यवहार के कारणों का पता नहीं चल पाता. क्या यह संभव नहीं कि पुरुष वर्ग ने नारी वर्ग पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिए कुरान शरीफ में इन सब बातों का समावेश कर दिया हो, क्योंकि खुदा से ऐसी आशा नहीं की जा सकती कि वह अपनी दोनों कृतियों में इस प्रकार का अंतर करेगा और जब कोई दावे से इन्हें खुदाई संदेश कहता है तो वास्तव में खुदा के अस्तित्व पर संदेह उत्पन्न होने लगता है.

जहां तक मेरा विचार है, अब से 1,400 वर्ष पूर्व इसलाम के प्रसार के लिए पर्याप्त युद्ध लड़ने पड़े थे जिन में पुरुषों की कमी हो जाना स्वाभाविक था. पुरुषों की कमी तथा स्त्रियों की अधिकता होने के कारण एक पुरुष को चार विवाह करने की छूट दे दी गई थी मगर उस छूट को आज तक स्थायी रखना समझदारी की बात प्रतीत नहीं होती.

इसलाम धर्म में जिस प्रकार पुरुष को चार विवाह करने की छूट है उसी प्रकार पत्नी को तलाक देने की भी पूरीपूरी छूट है. एक मुसलमान पति अपनी पत्नी को जब चाहे तलाक दे सकता है और पत्नी बेचारी को तलाक का कारण तक पूछने का अधिकार भी नहीं है. पति के मुख से तलाक सुन लेने पर वह बेसहारा हो जाती है. इस छूट का लाभ लोग यहां तक उठाते हैं कि चारचार बच्चों की मां बन जाने पर पत्नी को तलाक दे दिया जाता है. अनुमान लगाइए कि यदि बुढ़ापे में किसी स्त्री को तलाक दिया जाए तो उस की क्या दशा होगी?

अभी पिछले दिनों मैं ने इस संबंध में कुछ आंकड़े एकत्र किए जिन से पता चला कि तलाकशुदा औरतों में 90 प्रतिशत ऐसी महिलाएं थीं जिन को कई बच्चे होने के पश्चात तलाक दिया गया.

इस के विपरीत यदि पति पहली पत्नी का भरणपोषण करने में समर्थ है तो लाख दुर्गुण होने पर भी पत्नी को तलाक मांगने का अधिकार नहीं है और यदि वह ऐसा करती है तो उस का यह कार्य कुफ्र में शामिल किया जाता है. अभी हाल ही में केरल हाई कोर्ट द्वारा मुसलिम नारी द्वारा तलाक की मांग को उचित करार देना वास्तव में एक प्रशंसनीय निर्णय है जिसे मुसलमानों को स्वीकार करना चाहिए तथा इसी निर्णय के संदर्भ में भारत सरकार को चाहिए कि वह इस निर्णय को संपूर्ण भारत के लिए एक कानून का रूप दे दे. सरकार का यह प्रयास मुसलिम नारी की मुक्ति की दिशा में एक सराहनीय पग होगा.

बदलती मान्यताएं

कुरान शरीफ (1·4-15) के अनुसार, 'जो औरतें बेहयाई का काम करें तुम उन को घरों में कैद कर दो, यहां तक कि मौत उन का खात्मा कर दे.' इस आयत में बेहयाई की परिभाषा स्पष्ट नहीं की गई. आज से कुछ समय पूर्व घर से बाहर स्त्री का नंगे सिर घूमना बेहयाई कहा जाता था, मगर आज यह प्रगतिशीलता की पहचान है. इसलाम के अनुसार पति के अतिरिक्त पुरुष को देखना भी बेहयाई है मगर आज ऐसा संभव नहीं है. इस संदर्भ में बुरका धारण करना भी एक मुसलिम नारी के लिए 'हया' की बात में शामिल है, मगर मेरे विचार में बुरके का आविष्कार अरब की रेगिस्तानी तथा धूलभरी हवाओं से बचने के लिए किया गया होगा. बुरके का मुसलिम नारी के लिए आवश्यक बताना विभिन्न परिस्थितियों में अत्यंत बेहूदा बात है.

आधुनिक युग की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह मनोविज्ञान का युग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है. आज प्रत्येक समस्या को मनोवैज्ञानिक आधार पर सुलझाने का प्रयास किया जाता है, पर इसलाम में पत्नी को समझाने के लिए मारने का स्पष्ट आदेश है, कुरान शरीफ (1-4-34). मारपीट द्वारा किसी मनुष्य को कुछ समझाना मनोविज्ञान के प्रतिकूल है. पर इसलाम का ऐसा आदेश यह प्रकट करता है कि इसलाम प्रत्येक दृष्टि से नारी को पंगु बनाए रखना चाहता है. इसलाम में पत्नी को मारने-पीटने का आदेश यह प्रकट करता है कि नारी वर्ग पशु के समान है जिस के साथ दुर्व्यवहार करना चाहिए.

समझ नहीं आता कि मुसलिम नारी इतने दिनों से अपने प्रति किए जा रहे अपमान को अब तक कैसे सहन करती आ रही है! क्या उस के पास आत्मसम्मान नाम की कोई चीज नहीं है? उसे तो अब तक बगावत कर देनी चाहिए थी. वास्तव में नारी के प्रति ऐसे अपमान-जनक सिद्धांत खुदाई संदेश नहीं बलकि कुछ ढोंगियों की करामात है जो उन्होंने अपनी वासनापूर्ति के लिए निर्मित कर के उन पर खुदा के नाम की मुहर लगा दी ताकि भविष्य में नारी वर्ग इन बातों का विरोध न करे. लेकिन अब वह युग लद जाना चाहिए. पिछले दिनों पूना तथा महाराष्ट्र में हुए सम्मेलनों से मुसलिम नारी को प्रेरणा प्राप्त कर अपने सोए आत्मसम्मान को जागृत करना चाहिए. यदि इस युग में भी मुसलिम नारी सदियों से पुराने बंधनों में ही जकड़ी रही तो फिर भविष्य में उस की दशा वर्तमान से भी अधिक शोचनीय हो जाएगी.

कुछ मुसलमानों को इस बात पर बड़ा गर्व है कि इसलाम में लड़की तथा लड़के को पिता की संपत्ति पर समानाधिकार है, पर वास्तविकता कुछ और है. इसलाम के अनुसार दो लड़कियां एक लड़के के बराबर हैं. कुरानशरीफ के अनुसार 'यूसीकुमुल्लाहू फी औलादेकुम लिज्जकरी मिस्लू हज्जिल उनसयीय' (1-4-11) अर्थात 'वसीयत करता है तुम को अल्लाह बीच औलाद तुम्हारी के कि एक मर्द का हिस्सा बराबर है दो औरतों के.'

इस प्रकार पुरुष को स्त्री से दोगुने अधिकार प्रदान करना इस बात का प्रमाण है कि नारी पुरुष के मुकाबले आधी हैसियत रखती है. क्या आज के युग में कोई सही दिमाग वाला व्यक्ति इस बात को स्वीकार कर लेगा? मगर मुसलमान भाई अभी तक इन लकीरों के फकीर बने हुए हैं. कुछ धर्माधिकारियों को भय है कि इन नियमों में परिवर्तन होने पर उन की सत्ता डोल जाएगी. मगर आज के युग में इसलाम की अनेक मान्यताएं समाप्त हो चुकी हैं तो फिर नारी के संबंध में इन घिसेपिटे दकियानूसी नियमों को बनाए रखने का क्या औचित्य है?

ढोंगी धर्माचारी जिम्मेदार

मुसलिम विवाह कानून में संशोधन की बात करते ही धर्म के ठेकेदार कुरान शरीफ की दुहाई देने लगते हैं कि इन नियमों में परिवर्तन नहीं हो सकता, ऐसा खुदाई आदेश है. मगर मैं इन मठाधीशों से पूछना चाहता हूं कि आज कितने खुदाई आदेशों का पालन हो रहा है? कुरान शरीफ के अनुसार चोर के हाथपैर काट डालने की सजा है तथा व्यभिचारी पुरुष और स्त्री को सौसौ कोड़े लगाने की व्यवस्था है, पर आज इन नियमों का पालन नहीं हो सकता. इसलाम एक पुरुष को दो स्त्रियों के बराबर मानता है पर भारतीय कानून के अंतर्गत पुरुष और स्त्री में कोई भेद नहीं है. इसलाम के अनुसार 'जुलकाद,' 'जुलहान,' 'मोहर्रम' और 'रजब' इन चार महीनों में युद्ध का निषेध किया गया है पर इस नियम का पालन नहीं होता, यहां तक कि इसलाम के आरंभ में ही मोहर्रम मास में कर्बला का युद्ध हुआ.

कुरान शरीफ के अनुसार मुसलमानों को आपस में नहीं लड़ना चाहिए मगर बंगला देश में मुसलमानों ने न केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिंदुओं का बल्कि मुसलमानों का भी भीषण संहार किया. लखनऊ में प्रायः शियासुन्नी उपद्रव होते रहते हैं. इसलाम के अनुसार गैरमुसलिमों पर जजिया लगाने का निर्देश है मगर यह नियम भी आज अवैध है और सभ्य समाज में संभव भी नहीं. एक मुसलिम नारी के लिए पर पुरुष को देखना कुफ्र है मगर आज इस नियम का पालन नहीं हो रहा है, इसलाम में फोटो खिचवाना तथा उन्हें घरों में लगाना निषिद्ध है. पर आज इन नियमों की सर्वत्र अवहेलना होती है, मगर धर्म के ठेकेदार चुप लगाए रहते हैं. यदि उन्हें इसलाम का इतना ही मोह है तो इन सब नियमों का कड़ाई से पालन करते हुए क्यों नहीं चोर के हाथ काट देते? क्यों मुसलमान आपस में लड़ते हैं? इसलाम में सूद लेना मना है मगर कितने मुसलमान हैं जो ऐसा नहीं करते? इसलाम शराब के पूर्णतया विरुद्ध हैं मगर लाखों मुसलमान शराब पीते हैं तथा लगभग सभी मुसलमान शायरों की शायरी, साकी, शराब और जामोमीना से सराबोर है.

जब इतने नियमों का पालन नहीं हो रहा तो फिर मुसलिम नारी से संबंधित नियमों में परिवर्तन क्यों नहीं हो सकता? इतने नियमों के परिवर्तन से जब इसलाम पर कोई आंच नहीं आई तो विवाह कानून में परिवर्तन से इसलाम पर क्या बट्टा आ जाएगा? मैं उन लोगों से, जो मुसलिम विवाह, तलाक व विरासत के नियमों में परिवर्तन के विरोध में हैं, पूछना चाहता हूं कि क्यों नहीं वे उपर्युक्त नियमों का कड़ाई से पालन कराते! मगर यह उन के लिए संभव नहीं चूंकि वे स्वयं भी इन सब नियमों का पालन न कर सकते हैं, न करा सकते हैं.

तो उन्हें नारी विषयक नियमों में परिवर्तन का भी विरोध नहीं करना चाहिए. फिर जब मिस्र, ट्यूनिशिया, ईरान तथा पाकिस्तान आदि मुसलिम देश शरीयत में परिवर्तन कर नारी को मुक्त कर चुके हैं तो भारत में यह काम क्यों नहीं होना चाहिए? ●●

सरिता-मुक्ता के महत्त्वपूर्ण रिप्रिंट

	दर
पहला सैट	
लगभग 30 रिप्रिंट	5.00
दूसरा सैट	
लगभग 30 रिप्रिंट	5.00
तीसरा सैट	
लगभग 30 रिप्रिंट	5.00

दिल्ली बुक कंपनी, एस-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डायरी न लिखिए

शकुंतला

जीवन में असंतोष व विनाश का कारण!

छः अगस्त, 1971.

"कली खिलती है मुसकराने के लिए,
खत लिखा है जवाब पाने के लिए."

आठ अगस्त, 1971.

"ले के खत उन का किया
जब्त बहुत कुछ लेकिन,
थरथराते हुए हाथों ने
भरम खोल दिया."

11 अगस्त, 1971.

"हम से जाया न गया,
उन से बुलाया न गया,
फासला प्यार का दोनों से
मिटाया न गया."

भावनाओं के प्रति नासमझी

यह सब क्या है? रमेश पन्ने पलटता जाता और पढ़तेपढ़ते उस की आंखों में खून उतरता आता. गुस्से से उस के होंठ फड़फड़ाने लगे, हाथ कांपने लगे. उस की आंखों के सामने न जाने क्याक्या दृश्य नाचने लगे. कई काल्पनिक चित्र बनबन कर बिगड़ने लगे. उम्र के जोश और भावनाओं के खरोश में वह यह भूल गया कि ये पंक्तियां जिगर मुरादाबादी की हैं, फिराक की हैं या सिनेमा के किसी गीत की हैं और उस की बहन ने अनजाने में ही पसंद आने पर उन्हें अपनी डायरी में उतार रखा है. उसे तो शेर की हर पंक्ति के पीछे एक कहानी नजर आ रही थी जो सीधे उस की बहन के साथ जुड़ी थी.

उस की बहन निर्मला. ओह! कितनी भोली लगती है वह देखने में. मां तो उसे कालिज भेजती ही न थी. यह रमेश ही था जिस ने उस का पक्ष लिया. दलीलें दे दे कर निर्मला को कालिज भिजवाया कि उस की जिंदगी बन जाएगी. तब उसे मालूम न था कि वह कालिज जाते ही गुल खिलाएगी. "अभी मां से कह कर..." और वह गुस्से से पांव पटकता सीधा मां के पास पहुंच गया, "निर्मला की पढ़ाई छुड़वा दो मां."

"क्यों, क्या हो गया?"

"हो तो कुछ नहीं गया, मां, पर हो जाएगा."

"यह तू कह रहा है? तू ने ही तो..."

"हां, मैं ने ही जिद कर के उसे कालिज भिजवाया था, मां, और आज मैं कह रहा हूं निर्मला की पढ़ाई जल्दी छुड़वा दो वरना...

"वरना क्या?" मां लगभग चीख पड़ीं.

"वरना हमारे खानदान के नाम को बट्टा लग जाएगा. निर्मला का ध्यान पढ़ने में नहीं है. वह तो..." और रमेश ने बिना कुछ सोचेसमझे निर्मला की उड़ाई डायरी मां के सामने रख दी.

जब कालिज में पढ़ने वाले भाई ने हमउम्र बहन की भावनाओं को समझने का प्रयत्न नहीं किया तो पुराने विचारों की कम पढ़ीलिखी मां भला क्या समझती?

बस घर भर में एक हंगामा मच गया.

सारा मामला रात को मां ने पिता की अदालत में पेश किया. पिता ने कुछ समझा, कुछ नहीं, पर पत्नी के रोनेधोने और जिद के आगे उन्हें भी झुकना पड़ा.

दूसरे दिन निर्मला कालिज से लौटी तो उस के सामने फरमान आ गया, "कल से उसे कालिज नहीं जाना है." बेचारी को अभी तक कुछ पता ही नहीं था कि हुआ क्या?

"लेकिन क्यों?" उस के पूछने की देर थी कि मां ने उस पर गालियों और अपशब्दों की बौछार शुरू कर दी. काफी देर बाद जा कर यह राज उस के सामने खुला कि उस की डायरी रमेश के हाथ लग गई है और उस में लिखी शेरोशायरी ने ही यह गुल खिलाया है. फिर तो उस ने लाख समझाने की कोशिश की और लाख सिर पटक कर रह गई पर कालिज के दरवाजे उस के लिए बंद हो चुके थे. यही नहीं, उस का घर से बाहर निकलना भी बंद कर दिया गया और फिर शीघ्र ही एक लड़का खोज कर उस की शादी कर दी गई.

बदनामी का भय

इस तरह एक डायरी लिखने के कारण निर्मला का सारा भविष्य ही बदल गया. पढ़ाई छूटने का तो उसे मलाल था ही, बिना कारण जो उस पर इलजाम लगाया गया और घर भर में उसे जो नीचा देखना पड़ा, उस का रंज उसे भूलता ही न था. रहरह कर उसे पछतावा होता, न वह डायरी लिखती न बेकार में उसे यह सब झेलना पड़ता. भाई रमेश के साथ भी इसी बात पर उस का मनमुटाव हो गया. वह भाई से किस लिए नाराज है, पति से यह बताते भी डरती थी कि कहीं डायरी की बात पता चलने पर वह भी उस पर शक न करने लगें.

ऐसे एक नहीं, कई उदाहरण हैं जब कि डायरी में लिखे निजी अनुभवों या शेरोशायरी ने लड़कियों का जीवन जोखिम में डाल दिया या उन्हें बेकार में बदनामी के कारण मानसिक कष्ट उठाना पड़ा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मालती और सरला पक्की सहेलियां थीं. मालती पढ़ने में कुछ तेज थी, सरला पढ़ने में कमजोर पर अमीर घर की थी. मालती सरला की पढ़ाई में मदद कर दिया करती और सरला समयसमय पर उस की आर्थिक जरूरतें पूरी कर दिया करती. दोनों काफी अंतरंग थीं. पर मालती की डायरी लिखने की आदत ने दोनों में एक दिन दरार डाल दी.

दोनों का एक सहपाठी मित्र था अनिल, जिसे मन ही मन सरला चाहने लगी, पर अनिल की बातों से झलकता था कि वह मालती से प्रभावित है. मालती की बौद्धिक योग्यता की वह कई बार खुले आम प्रशंसा भी कर चुका था. अनिल का व्यक्तित्व आकर्षक था इसलिए उस की तारीफ मालती के लिए कुछ अहमियत रखने लगी थी. यद्यपि बात इस से आगे नहीं बढ़ी थी, पर मालती अपने अनुभवों को रोज डायरी में लिखती जाती थी. एक दिन वह डायरी सरला ने मालती से छीन कर पढ़ ली और बस हंगामा खड़ा हो गया. मालती और सरला में मनमुटाव इतना बढ़ा कि बोलचाल तक बंद हो गई. यही नहीं सरला अपने पैसे के बल पर मालती को हर तरह से अपमानित करने और करवाने पर तुल गई. क्लास भर में मालती बदनाम हो गई. अनिल को पता चला कि उस का नाम खामख्वाह उछाला जा रहा है तो उस ने सरला और मालती दोनों से मिलना-जुलना बंद कर दिया. फिर एक उड़ती-उड़ती बात मालती के घर तक भी जा पहुंची. इस के आगे क्या हुआ होगा, आप अनुमान लगा ही सकती हैं. और यह सारा कांड हुआ केवल डायरी लिखने के कारण. यदि मालती डायरी न लिखती तो उसे यह मानसिक यातना झेलनी न पड़ती और अपनी अंतरंग सहेली का साथ भी न छोड़ना पड़ता.

किसी ने आप को प्रेमभरी बात कह दी या डांट दिया और आप मन के उद्‌गार निकालने के लिए झट लिखने लगीं डायरी... पर क्या आप ने यह भी सोचा कि यह आप की जिंदगी में क्या कठिनाई पैदा कर सकती है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दाम्पत्य जीवन में कटुता

रागिनी की कहानी इस से भी अधिक दर्दनाक है. पिछले कुछ वर्षों से वह लगातार डायरी लिखती आ रही थी. जब वह शादी के बाद ससुराल गई तो पिछले छः वर्षों की अपनी डायरियों की संचित निधि भी साथ ले गई. निश्चित ही उस की निजी डायरियों में विवाहपूर्व के उस के निजी अनुभव अंकित होंगे. कब, किस युवक से उस की कैसे भेंट हुई? किस की बातों का कब, कैसा प्रभाव उस के मन पर पड़ा? किस की किन बातों को उस ने पसंद या नापसंद किया? आदि. वैसे देखा जाए तो इस में असामान्य क्या है? हर लड़की के मन पर ये प्रतिक्रियाएं होती हैं. फिर उहीं में से छन कर एक दिन निर्णय जागता है. पर रागिनी की गलती यह थी कि उस ने उन प्रतिक्रियाओं और समयसमय पर उठने वाली भावनाओं को डायरी में लिपिबद्ध किया. यही नहीं, प्यार के जोश में उन्हें एक दिन अपने पति को पढ़ा भी दिया. सचाई से लिखी बातों को उसी सचाई और भोलेपन से पति को पढ़वाने में उसे कोई गलती नहीं मालूम हुई. पर यही गलती उस के जीवन का अभिशाप बन कर उस के सामने आ गई. पति अकसर उस पर संदेह करते और डायरी की बातें खोदखोद कर पूछते रहते. धीरेधीरे पनपतेपनपते उन की यह संदेहबेल इतनी बढ़ी कि उन का दांपत्य जीवन कड़वाहट से भर उठा.

आज रागिनी एक परित्यक्ता औरत है और रहरह कर अपनी डायरी वाली गलती पर आंसू बहा रही है. वह पति से तलाक ले कर अपनी नई जिंदगी शुरू कर सकती है, पर उसे यह कभी भी सहन नहीं होगा कि पति उस पर सब के सामने चरित्रभ्रष्टा होने का आरोप लगा कर तलाक प्राप्त करे, इसलिए चुप है. इस पर भी अभी दो दिन पूर्व उसे सूचना मिली कि उस का पति इसी आधार पर शीघ्र तलाक प्राप्त करने के प्रयत्न में है तो उस का हृदय दुःख से विदीर्ण हो उठा और रोतेरोते आ कर उस ने मुझ से अपनी यह सारी व्यथा कह सुनाई.

उस की डायरी उसे चरित्रहीन सिद्ध कर सकेगी या नहीं, यह दूसरी बात है. पर उसे ले कर उस की जो फजीहत की जाएगी वह क्या कम है? न वह डायरी लिखती न उस की जिंदगी इस तरह तबाह होती.

छिपाए रखने की चिंता

इसलिए डायरी लिखने की आदत किशोरियों, तरुणियों या युवतियों के लिए किसी भी तरह ठीक नहीं... हमारा सामाजिक परिवेश इतना उदार नहीं कि इस आवश्यकता का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर उसे सही संदर्भ में देख सके. अकसर आप जो सामान्य रूप से लिखती हैं, उस का सीधा संबंध आप के जीवन व चरित्र से जोड़ लिया जाता है और फिर सनसनी फैलाने में या दूसरों की बदनामी करने में रख लिया जाता है. मान लीजिए आप की डायरी किसी के हाथ नहीं पड़ती है और ऐसा कुछ नहीं होता है फिर भी उसे हर समय सब की नजरों से बचा कर रखने की चिंता तो आप को लगी ही रहती है.

तो ऐसी चीज से क्या लाभ जो हर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समय चिंता और भय का कारण बनी रहे और किसी समय [illegible] जोखिम में डाल दे.

"मनुष्य की आदत है भूलना. जो बातें वैसे आ कर हमारे दिमाग से गुजर जाती हैं, डायरी में लिख लेने से हमेशा याद रह जाती हैं. तब उन की कचोट भी हमेशा बनी रहती है जब कि बिना लिखी कोई बिरली बात ही मन की परतों के नीचे जा कर जमती है. रोज नए अनुभव ले कर और पुरानी बातों को पीछे छोड़ कर ही हम आगे बढ़ते हैं. इस दृष्टि से डायरी की पुरानी यादें कई बार हमें पीछे की ओर ले जाने में भी अपना रोल अदा करती हैं. इस के अलावा निराशाभरी शेरोशायरी की पंक्तियां दोहराते रहने से कई बार मन पर इतना गहरा असर होता है कि सारा जीवन अवसाद से भर उठता है. इसलिए जोखिम की बात न उठाएं तब [illegible] डायरी लिखना कोई अच्छी बात नहीं.

बढ़ते कदमों को आगे बढ़ाने के लिए हमेशा भविष्यचिंतन लाभकारी होता है, अतीतचिंतन नहीं.

यदि आप कुछ न कुछ अवश्य लिखना चाहती हैं तो किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति से भेंट होने पर उन के प्रेरक संस्मरण या पढ़ी गई पुस्तकों व पत्रिकाओं से ऐसे उद्धरण लिखिए जो जीवन में हमेशा आप के काम आएं और आप को प्रेरणा देते रहें. बस, इन उद्धरणों और संस्मरणों का स्वरूप भी सामयिक नहीं होना चाहिए, शाश्वत मूल्य के प्रेरक संस्मरण ही हमेशा जीवन को ऊंचा उठाने में सहायक हो सकते हैं. डायरी का उपयोग केवल इसी रूप में करें, अन्यथा नहीं.

सरिता-मुक्ता के महत्त्वपूर्ण रिप्रिंट

पहला सैट	**दर**
लगभग 28 रिप्रिंट	5.00
दूसरा सैट	
लगभग 31 रिप्रिंट	5.00
तीसरा सैट	
लगभग 30 रिप्रिंट	5.00

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

63 : 4079 मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रेमपत्र न लिखिए

शकुंतला

ये प्रेमपत्र आप के खिलाफ आरोपपत्र भी बन सकते हैं.

आप किसी से प्रेम करती हैं? चौंकिए नहीं. किसी से प्रेम करना या प्रेम हो जाना कोई बुरी बात नहीं. बुरी बात है, प्रेम में भटक जाना और ऐसी गलतियां कर बैठना कि जिन के कारण उम्र भर पछताना पड़ जाए. आप का प्रेम सही है या गलत, यह देखना आप का काम है. मैं तो केवल यह कहना चाहती हूं कि यदि आप अपने प्रेमी तक अपने मन की बात पहुंचाने के लिए प्रेमपत्रों का सहारा ले रही हैं तो यह एक बहुत बड़ी गलती कर रही हैं आप. प्रेम करना गलत न हो, प्रेमपत्र लिखना अवश्य एक गलत काम है और यह गलती आप को भूल कर भी नहीं करनी चाहिए.

आप फिर चौंक गईं. भला यह कैसे हो सकता है कि जिसे आप अपना सर्वस्व मान कर हृदय दे बैठी हैं, उसे प्रेमपत्र न लिखें? यह कैसी सलाह दे रही हूं मैं? आप प्रेमपत्र न लिखेंगी तो क्या मेघदूत भेजेंगी?

परिणामों से ओझल!

आप का रोष ठीक है. फिर भी आप के हित के लिए मैं कहूंगी कि आप प्रत्यक्ष में चाहे जितनी भी बहकीबहकी बातें कर लें, पर प्रेमपत्र कभी भूल कर भी न लिखिए. क्यों? इसी लिए कि इस का परिणाम अभी आप की नजरों से ओझल है. पर एक वक्त ऐसा आ सकता है जब कि ये फूलों से महकते प्रेमपत्र आप के गले की फांस बन जाएं और आप का जीना दूभर कर दें. विश्वास नहीं हो रहा तो सुनिए :

15-16 से 20-22 वर्ष की उम्र ऐसी होती है जब कोई भी तरुणी मस्तिष्क से कम और हृदय से अधिक काम लेती है. इस उम्र में अच्छे, बुरे की ठीक पहचान तो होती नहीं, बस सारी दुनिया हसीन और रंगीन मालूम देती है. तब मीठे सपनों और रोमांस की रंगीन दुनिया में खोई रहने वाली लड़कियां जिसे प्रेम करती हैं वह वास्तव में प्रेम नहीं, विपरीत लिंग का अस्थायी आकर्षण मात्र होता है. ऐसे ही आकर्षण को प्रेम मान नीता अपने पड़ोसी आवारा से छोकरे हरि को अपना दिल दे बैठी. लुकछिप कर मिलना और पत्रों का आदानप्रदान शुरू हुआ. नीता अपनी भावनाओं को उंड़लउंड़ेल कर प्रेमपत्र लिखती रही और हरि उन्हें संभाल कर रखता रहा.

अब पछताये होत क्या...

अब जब कभी नीता को वह एकांत में पाता, वासना पूर्ति के लिए अपना प्रस्ताव उस के सामने रख देता. नीता के आनाकानी करने पर वह तुरंत उस के प्रेमपत्र निकालता और उन्हें हवा में झुलाता हुआ कहता, "ये तुम्हारे भाई को दिखाने जा रहा हूं. बोलो, अब क्या कहती हो?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और नीता को डर कर, मजबूर हो कर आत्मसमर्पण करना पड़ता. फिर एक दिन नीता गर्भवती हो गई और हरि ने उस के साथ ऐसा व्यवहार किया जैसे उसे जानता ही न हो. वह न तो सच्चा प्रेमी था, न इस प्यार को गंभीरता से ही ले रहा था. नीता से मन भर जाने पर वह दूसरी लड़की की ओर मुखातिब हो गया और नीता लुटीपिटी सी रह गई. उसे रहरह कर पछतावा हो रहा था, उस ने प्रेमी को पहचानने में तो गलती की सो की, पर यदि वह प्रेमपत्र न लिखती तो इस मुसीबत में कभी नहीं फंस सकती थी. लेकिन अब क्या करे वह? वह तो किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रही. कितनी लांछना, कितनी पीड़ा सहनी पड़ेगी अब उसे. इस विचार के आते ही वह आत्महत्या की बात सोचने लगती. वह तो उस की एक भाभी काफी समझदार थी कि उस ने नीता की जिंदगी बचा ली, वरना खुदकुशी कर के वह मर गई होती.

नीलिमा की कहानी भी सुनिए, उस ने भी प्रेम किया था और प्रेमपत्र लिख-लिख कर अपने प्रेम को व्यक्त किया था. जीवन भर एकदूसरे के साथ निभाने की कसमें खाई गईं. फिर एक दिन ऐसा आया जब नीलिमा को मातापिता की इच्छा और दबाव के आगे झुकना पड़ा और उन के द्वारा खोजे गए लड़के से विवाह की अपनी अनुमति देनी पड़ी. आम लड़कियों की तरह नीलिमा ने भी मान लिया कि यह विवाह विवाह नहीं, आत्मबलिदान है और उसे अपने कर्त्तव्य की खातिर अपने प्यार को कुरबान करना है. विवाह के बाद उस ने अपनी पूर्व इच्छाओं को दबा लिया और मनप्राण से पत्नी के कर्त्तव्य निभाने लगी. उस ने अपने पूर्व प्रेमी को भी सब कुछ भूल जाने लिए कहा और चाहा कि वह भी अपने स्वार्थ का त्याग कर उस के सुखी दांपत्य जीवन की कामना करे. लेकिन उस के प्रेमी को यह स्वार्थत्याग दरकार न था. वह अभी भी नीलिमा के साथ संबंध बनाए रखना चाहता था और जबतब उस के पास आ धमकता था.

नीलिमा ने लाख प्रेम के वायदे दिए. रोरो कर उसे उस के जीवन से निकल जाने के लिए कहा, पर कोई लाभ नहीं हुआ. यदि नीलिमा के प्रेमपत्र उस के पास न होते तो वह सख्ती से भी उस का आना बंद कर सकती थी. पर अब क्या करे वह? उस का प्रेमी जबतब उसे प्रेमपत्र दिखा कर उस के पैसे भी ऐंठता और शरीर-संबंध की भी मांग करता. नीलिमा उस से घृणा करने लगी.

उसे देखते ही सिहर उठती और घर से चले जाने के लिए कहती. पर प्रेमपत्रों के माध्यम से उस का गला तो उस के हाथों में दबा हुआ था. कसमसा कर रह जाती. स्थिति की गंभीरता अब पूरी तरह उस के सामने स्पष्ट हो चली थी कि प्रेम-पत्र लिख कर उस ने अपने सुखी दांपत्य जीवन की कब्र तो बहुत पहले ही खोद डाली थी. जब वह एकदम असहाय हो गई तो उसे हिस्टीरिया के दौरे पड़ने लगे और ज्योंज्यों दवा की, रोग बढ़ता ही गया. आखिर में एक मनःचिकित्सक ने उस के मन की थाह ली. उस के भूतपूर्व प्रेमी को बुलवा कर प्रेमपत्र उस से लिए और जलाए गए. तब जा कर कहीं नीलिमा ठीक हो सकी.

अच्छे बुरे परिणाम?

क्या प्रेमपत्र लिखते समय नीता ने या नीलिमा ने इन भयंकर स्थितियों का अनुमान लगाया था. नहीं. वह उम्र ऐसे अनुमान लगाने की होती नहीं. न ही अच्छे-बुरे की ठीक पहचान करने की. मान लीजिए, आप को अपने प्रेमी पर पूरा विश्वास है फिर भी क्या गारंटी है कि यह प्रेमसंबंध विवाह में बदले ही. यदि विवाह न हो सका तो भले ही आप का प्रेमी प्रेमपत्रों को ले कर आप से ब्लैकमेलिंग न करे, उन के लिए एक खटका तो आप के मन में बना

हो रहेगा. श्रौर मन में किसी बात का भय या खटका बना रहना कभी भी सुखी वैवाहिक जीवन के लिए ठीक नहीं हो सकता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उचित मार्ग निर्देशन लें.

यह जरूरी नहीं कि यह स्थिति विवाह के बाद ही उत्पन्न हो. यह भी तो हो सकता है कि कारणवश मतभेद उत्पन्न हो जाने पर श्राप प्रेमी से श्रागे संबंध न बढ़ाना चाहें श्रौर वह बदले की भावना पर उतारू हो इन प्रेमपत्रों के कारण श्राप को ब्लैकमेल करे या कम से कम श्राप की इतनी बदनामी कर दे कि श्राप को श्रपनी सहेलियों, मातापिता, भाईबहनों के सामने नीचा देखना पड़े श्रौर रिश्तेदारी में बदनामी फैलने पर श्राप के विवाह में बाधा उत्पन्न हो. इसी लिए श्राप को दो बातों के लिए विशेष सतर्क रहना चाहिए. एक तो श्रपने प्रेमसंबंध को एकदम चोरीछिपे न चला कर दोनों पक्षों के परिवारों में से एक न एक सदस्य--भाई, बहन, भाभी श्रदि को विश्वास में लें. उन्हें श्रपने साथ रखिए ताकि श्राप को उचित मार्गनिर्देशन मिल सके श्रौर श्राप प्रेम में धोखा न खाएं. दूसरे, श्राप को श्रपने प्रेमी पर कितना भी विश्वास हो, श्राप प्रेमपत्र कभी भूल कर भी न लिखें. क्या पता किसी कारण यह विवाह न हो पाए श्रौर श्राप का प्रेमी इस संबंध को सहज रूप से स्वीकार न कर पाने के कारण बदले या निराशा की भावना से भर उन प्रेमपत्रों के कारण श्राप को परेशानी में डाल दें. ऐसा कुछ न भी हो, तो भी मन में भय या खटका तो बना ही रहेगा जिस से प्रेम का सारा श्रानंद किरकिरा हो ज़ाएगा.

इस प्रकार का प्रेमपत्र लिखने से हर समय हानि या जोखिम का भय है. कम से कम भय या खटका श्राप की मानसिक शांति को भंग कर ही सकता है जब कि न लिखने से श्राप को कोई हानि या परेशानी नहीं होगी. यदि प्रत्यक्ष चर्चा के बाद ऐसा कुछ रह जाता है जिसे श्राप कह कर नहीं, लिख कर ही श्रभिव्यक्त कर सकती हैं तो उसे श्रपने भावी दांपत्य जीवन के लिए बचा कर रखने में श्राप को क्या श्रापत्ति है? पूरी जिज्ञासाश्रों का समाधान विवाह से पहले ही कर लेने से वैवाहिक जीवन का श्रानंद शीघ्र ही चुक जाता है श्रौर पतिपत्नी जल्दी ही एकदूसरे से ऊब उठते हैं. इस खतरे से बचने के लिए भी जरूरी है कि विवाहपूर्व संबंधों को एक सीमा से श्रागे न दिया जाए श्रौर प्रेम संबंधी रहस्यों व जिज्ञासाश्रों को बचा कर श्रपने श्राकर्षण को तरोताजा बनाए रखा जाए. वैवाहिक जीवन की सफलता के लिए व्यक्तित्व के श्राकर्षण की नवीनता श्रावश्यक है. श्रपनी भावनाश्रों की श्रभिव्यक्ति का एकदम विस्फोट न कर उस का शनैःशनैः प्रस्फुटन श्रौर विकास इस श्राकर्षण को बनाए रखने का एक राज है, जिसे हर युवती को जाननासमझना चाहिए.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूंजीपति बनिए

आज पूंजी, पूंजीपति, पूंजीवाद-- घृणा के प्रतीक हैं. किसी को गाली देनी हो या किसी समाज की भर्त्सना करनी हो तो उसे पूंजीवादी करार दे दीजिए, मानो पूंजी ही सारी मुसीबतों की जड़ हो.

धर्म के धंधेबाजों ने भी सर्वत्र पूंजी यानी धन की बुराई की है, पर किसी धर्म के सौदागर ने इस को पाने की इच्छा नहीं त्यागी.

इस जीवन में, खूनपसीना बहा कर प्राप्त किए गए धन का (बेईमानी, जोर-जबरदस्ती द्वारा प्राप्त धन के लिए यहां भी खूनपसीना बहाना पड़ता है) क्या करें? धर्म के धंधेबाजों को बांट दो. क्यों? भगवान खुश होंगे. तो क्या धन कमाने वाले के पास धन देख कर भगवान नाराज होंगे, और जो व्यक्ति धन कमाने वाले को बेवकूफ बना कर उस का धन छीन ले उस के पास देख कर खुश होंगे?

फिर भगवान व धर्म के धंधेबाजों एवं राजनीतिबाजों के चेलेचमचों में क्या अंतर हुआ?

उधर राजनीतिबाज कहते हैं, "धन तो ठीक है, पर जब वह पूंजी बन जाता है तो घृणायोग्य बन जाता है." पर क्या बिना पूंजी इस संसार का कोई भी काम चल सकता है?

जब मानव और आगे बढ़ता है तो उसे उद्योगों के लिए पूंजी चाहिए. बिना पूंजी कौन सा उद्योग चल सकता है? आज स्थिति यह है कि एक व्यक्ति को रोजगार में लगाने के लिए कम से कम 10,000 रुपए की पूंजी चाहिए. बिना पूंजी मानव न कभी जिंदा रहा है, न रह सकता है. रोजगार बिना पूंजी के नहीं हो सकता. बिना रोजगार गरीबी नहीं मिटती. मानसिक व शारीरिक सुख बिना पूंजी नहीं मिल सकता.

पूंजी धन संचय किए बिना नहीं बनती. धन बिना मेहनत किए नहीं आता. और आमदनी से कम खर्च किए बिना धन पूंजी नहीं बन सकता. व्यक्ति ही पूंजी बनाता है, वह ऊपर से नहीं टपकती. सरकार (यानी राजनीतिबाज) उसे जब्त कर सकती है, नष्ट कर सकती है, पर बना नहीं सकती.

पूंजी तो व्यक्ति ही बनाता है. जब तक उसे पूंजी बनाने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाएगा, तब तक न देश में रोजगार बढ़ेंगे, न बेकारी कम होगी और न ही समृद्धि आएगी.

जिस देश में करोड़ों लोगों को भरपेट भोजन न मिलता हो, वहां पूंजी और पूंजीपतियों को गालियां दे कर राजनीतिबाज उन्हें बेवकूफ तो बना सकते हैं पर उन का पेट नहीं भर सकते. उन का पेट तो तभी भरेगा, जब देश में पर्याप्त कलकारखाने और उद्योगधंधे होंगे. और वे तब होंगे जब देश में पर्याप्त पूंजी होगी. याद रखिए, पूंजी और गरीबी का आपस में बैर है. पर राजनीतिबाजों ने उसे गरीब और पूंजीपति का बैर बना दिया है.

पूंजी बनाइए, पूंजीपति बनिए. पूंजी व्यापारउद्योग में लगाइए, स्वयं काम में लगिए. दूसरों को रोजगार दीजिए. यदि व्यक्तिगत पूंजीवाद से आप को चिढ़ है तो सरकार को ही उधार दीजिए---बैंक में धन जमा कर के, सरकारी बांड, सेविंग सर्टिफिकेट खरीद कर. वैसे समाजवाद यानी सरकारी पूंजीवाद से कोई समृद्ध नहीं बन सकता. इस से केवल राजनीतिबाज ही समृद्ध और शक्तिशाली बनता है.●

पूंजी बनाइए, नए रोजगार पैदा कीजिए, देश को समृद्ध कीजिए.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योगी अरविंद

प्रयागदत्त पंत

साधना की आड़ में पलायन सिखाने वाला व्यक्ति

'अध्यात्मविद्या विद्यानाम्,' 'योगः कर्मसु कौशलम्'—इस प्रकार के नारे दे कर आप अपनी प्रौढ़ता और विद्वत्ता का सिक्का सरलता से जमा सकते हैं. हो सकता है, आप को कुछ चेले भी मिल जाएं जो तन, मन और धन से आप की सेवा करें और आप को सम्मान भी दें. यह भी संभव है कि विदेशों में भी आप के दसबीस आध्यात्मिक केंद्र स्थापित हो जाएं और आप कह सकें कि आप ने विदेशियों को चेले बना कर स्वदेश का मान बढ़ा दिया. किंतु यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि आप ने संसार को सच्चा ज्ञान दिया, मानव को ऊपर उठाया, जरा, व्याधि और मृत्यु आदि के दुखों से छुटकारा दिला दिया और सुखी बना दिया. आप का गुरुपद इस बात का प्रमाण नहीं है कि जिन विदेशियों को आप ने चेले बनाया, वे समझदार ही हों. विज्ञान को कोस कर कोई ज्ञानी अपनी परिपक्वता सिद्ध करना चाहे, यह सर्वथा अनुचित है.

योगिराज अरविंद घोष (पांडिचेरी आश्रम वाले) का जीवन इस बात का प्रमाण है कि मानव समस्याओं का हल योग नहीं है. योग मानवीय उत्तरदायित्व से पलायन मात्र है तथा होनहार और जागरूक युवकों को सुला देने वाला धीमा नशा है.

श्री अरविंद का जन्म 15 अगस्त 1872 को कलकता के एक प्रतिष्ठित धनी परिवार में हुआ. इन के पिता डाक्टर कृष्णधन घोष अंगरेजी आचारविचार, भाषा और पाश्चात्य सभ्यता के पक्के अनुयायी थे. बालक अरविंद को सात वर्ष की अवस्था में इंगलैंड भेज दिया गया, जहां उन्होंने अपने जीवनकाल के 14 महत्त्वपूर्ण वर्ष बिताए. अपनी तीव्र बुद्धि तथा अध्ययनशीलता से छात्र अरविंद ने शिक्षकों को प्रभावित किया और छात्रवृत्तियां तथा पारितोषिक प्राप्त किए. अध्ययन काल में ही स्वतंत्रता के मूल्य का ज्ञान और अपने परतंत्र देश के लिए कुछ करने की भावना इन में जाग्रत हो गई तथा वह लंदन निवासी देशप्रेमी भारतीयों की एक संस्था 'कलम और कटार' के सक्रिय सदस्य बन गए.

21 वर्ष की अवस्था में जब श्री अरविंद भारत लौटे तो अपने साथ नवीन ज्ञानविज्ञान का भारी कोष तथा ग्रीक, लैटिन, फ्रेंच तथा अंगरेजी भाषाओं का अच्छा ज्ञान भी लाए. दीर्घ काल से मातृपितृ सान्निध्य से वंचित श्री अरविंद जब स्वदेश पहुंचे तो पिता की मृत्यु हो चुकी थी तथा माता मानसिक रूप से अस्वस्थ थी.

श्री अरविंद प्रारंभ में 1893 से 1906 तक बड़ौदा में रहे. इसी बीच इन का विवाह मृणालिनीदेवी से हुआ तथा इसी बीच इन्होंने अपनी मातृभाषा बंगला और संस्कृत सीखनी प्रारंभ की. इन्हीं दिनों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह राष्ट्रीय आंदोलन और क्रांतिकारियों के संपर्क में भी आए और 1906 में स्वराज्य आंदोलन में कूद पड़े. इन के कवित्वपूर्ण ओजस्वी लेखों और भाषणों ने राष्ट्रीय आंदोलन में प्राण फूंक दिए. लाला लाजपतराय, लोकमान्य तिलक और अन्य उग्रवादी कांग्रेसियों की ही भांति श्री अरविंद भी ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना और समझौते की नीति के विरोधी थे तथा स्वराज्य-प्राप्ति के लिए हिंसा की भी सहायता लेने के पक्ष में थे.

राजनीतिक जीवन का अंत

1905 1910 तक बंग भंग आंदोलन के विरोध में ब्रिटिश सरकार का जो दमनचक्र चल रहा था, उसी बीच 1908 में अलीपुर बम केस में श्री अरविंद को फंसा कर उन्हें जेल भेज दिया गया. इस जेलयात्रा के साथ ही श्री अरविंद के राजनीतिक जीवन का भी अंत हो गया. स्वतंत्रता की साधना का जिम्मा दूसरों पर छोड़ कर अब वह योग साधना करने लगे.

शिक्षित कर्मठ नवयुवकों को योग की ओर झुका देने के लिए हमारे देश का वातावरण पर्याप्त अनुकूल है. यहां तोते (शुकदेव) और कौवे (काकभुशुंडी) भी अध्यात्म बोलते हैं और निरक्षर भट्टाचार्य भी 'तत्त्वमसि' का भाषण देते हैं. हमारे शिक्षक तावीज बांध कर विज्ञान पढ़ाने कक्षा में जाते हैं. हमारे समाज में निठल्ले साधुओं को आदर दिया जाता है और मेहनतकश मजदूर को छोटा समझा जाता है. श्री अरविंद पर भी इस वातावरण का प्रभाव पड़ गया.

योग की ओर झुकाव

वह चिंतनशील और भावुक तो थे ही, कविता और कहानी भी लिखते थे. विलायत में रहते हुए मिसेज ड्रिवेट की धार्मिकता का भी उन पर प्रभाव पड़ा था. भाग्य और ज्योतिष की भविष्यवाणियों पर भी वह ध्यान देते थे. बड़ौदा में रहते हुए वह प्लांचेट पर प्रेतात्माएं बुलाने जैसे कार्य भी किया करते थे. कहा जाता है कि एक बार प्लांचेट पर स्वामी रामकृष्ण परमहंस की प्रेतात्मा आई और कह गई, 'मंदिर गढ़ो' (इस प्रकार के अंधविश्वासों में भावुक लोग, चाहे वे कितने ही मेधावी और शिक्षित क्यों न हों, सरलता से पड़ जाते हैं.) एक बार बड़ौदा नरेश के साथ कशमीर भ्रमण करते हुए इन्हें शंकराचार्य पर्वत देखने का अवसर प्राप्त हुआ. उन का कविहृदय कल्पना की उड़ानें भरने लगा और उन्हें लगा, 'ब्रह्म तत्व' से साक्षात्कार हो गया.

बड़ौदा में कुछ योगियों से भी इन का संपर्क हुआ जिन से इन्होंने योगसाधना में घंटों आंखें मूंद कर बैठे रहना सीख लिया. एक 'नागा स्वामी' से काली का तेज मंत्र सीख कर जपने लगे. इस के अतिरिक्त रामायण, महाभारत, पुराण आदि का अध्ययन भी चल रहा था. कुल मिला कर इन सब बातों का यह प्रभाव पड़ा कि अलीपुर जेल में जब श्री अरविंद को एकांत मिला तो उन्होंने साधना प्रारंभ कर दी और स्वराज्य आंदोलन से मुंह मोड़ लिया.

जिस आधुनिक शिक्षा को पाश्चात्य कह कर हम अब हेय समझते हैं, उसी शिक्षा ने उन्हें स्वतंत्रता के लिए लड़ने की प्रेरणा दी थी. कथापुराण और योगियों की शिक्षा ने उन्हें उस मार्ग से हटा दिया. बहिर्मुखी प्रतिभा अंतर्मुखी हो गई. देश को इस नवयुवक से जो आशा बंध गई थी, वह हवा हो गई. क्रांतिकारी नेता अपना एक सहयोगी खो बैठे. बड़े नेताओं से ले कर छोटे स्वयंसेवकों तक, कई लोगों ने उन से प्रार्थना की कि वह राजनीति न छोड़ें. उन के लिए छोटे भाई बारींद्र घोष ने कालापानी से लौट कर उन्हें कई पत्र लिखे जिन में उन्होंने स्पष्ट किया कि श्री अरविंद की उदासीनता से उन के क्रांतिकारी मित्रों और परिवार वालों को कितना धक्का लगा. किंतु इस का कोई परिणाम नहीं हुआ. स्वराज्य के लिए जागृति पूर्ण रूप से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मातापिता, पत्नी और बच्चों को छोड़ कर अपने ऊपर तथाकथित दिव्य शक्तियों का अवतरण कराना कर्मयोग और ज्ञानयोग का समन्वय है या दर्शन और अध्यात्म का खोखलापन?

हो भी नहीं पाई थी कि श्री अरविंद जेल से छूट कर 'योग मंदिर' में चले गए. राजनीति, गुप्त बैठकों, आम सभाओं, क्रांतिकारी योजनाओं, पुलिस की धरपकड़, पिटाई, वारंट, गिरफ्तारी, जेल—इन सब से छुट्टी पा कर रातदिन, 'आत्म दर्शन' के लिए ध्यान में डूबे रहना वह अधिक सुखकर समझने लगे.

किंतु बंगाल में रह कर ध्यान में घंटों बैठे रहना कैसे संभव होगा? इसी बीच सिस्टर निवेदिता ने एक संकेत दिया कि वह ब्रिटिश भारत से कहीं बाहर चले जाएं. एक दिन 'कर्मयोगी' नामक पत्र, जिस का वह संपादन कर रहे थे, के कार्यालय में यह खबर फैल गई कि श्री अरविंद को 'भगवान से' चंदरनगर चले जाने का आदेश प्राप्त हुआ है. श्री अरविंद उसी हालत में कार्यालय छोड़ कर बाहर आ गए और गंगा पार चंदरनगर में पहुंच कर श्री मोतीलाल राय के घर 'अज्ञातवास' में छिप गए. वहां पुलिस के हस्तक्षेप का भय कम था, फिर भी लोगों की जानकारी के भय से उन्हें चार दिन गोदाम में ठहराया गया और जब तक एक मुकदमे के सिलसिले में उन की खोज होने लगी, तब तक वह पांडिचेरी पहुंच चुके थे.

अध्यात्म का नशा

कहा जाता है कि श्री अरविंद का सारा काम 'भगवान के आदेश' पर ही हो रहा था. उत्तर प्रदेश के सूचना विभाग ने श्री अरविंद की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में 'योगिराज अरविंद' नामक पुस्तिका निःशुल्क वितरण के लिए छपवाई है. उस में लिखा है कि अलीपुर जेल में उन को ईश्वर के दर्शन हुए. उन्हें भगवान का आदेश हुआ कि वह मानव जाति के कल्याण के लिए एक नए जीवन की सफलता के लिए कार्य करें. भला सरकार की लिखी बात झूठ कैसे हो सकती है? वह भी धर्मनिरपेक्ष सरकार की. किंतु समझ में नहीं आता कि मानव जाति का कल्याण स्वयं करने के बजाए 'भगवान' इस महत्त्वपूर्ण मामले को दूसरों के हाथों सौंप कर व्यर्थ ही देर क्यों करते हैं? और क्या भारतीय स्वराज्य का मामला मानव कल्याण के अंतर्गत नहीं आता था? श्री अरविंद आश्रम, पांडिचेरी द्वारा प्रकाशित एक पुस्तक में लिखा है कि गीता के रूप में उन्हें स्वयं वासुदेव मिल गए. गीता के रूप में मिलने और वैसे मिलने में अंतर होता है क्या? पता नहीं दोनों पुस्तकों में से कौन सी सही है.

अलीपुर कारावास के पश्चात अध्यात्म का ऐसा नशा चढ़ा कि श्री अरविंद दिन में ही स्वप्न देखने लगे. उन्होंने कहा, "मैं ने जेल में कैदियों, चोरों, हत्यारों और बदमाशों की ओर देखा और ज्योंज्यों मैं उन्हें देखता गया, मुझे वे लोग वासुदेव ही वासुदेव दिखाई दिए. उन मलिन आत्माओं और अपव्यवहृत शरीरों में नारायण मुझे मिले."

चंदरनगर में जब वह गोदाम में छिपे थे तो कहा जाता है कि उन्हें चार दिव्य शक्तियां ध्यान में दर्शन देती थीं.

'परोक्ष सत्ता' द्वारा लेखन कार्य

कुछ दिनों तक श्री अरविंद स्वचालित लेखन (आटोमेटिक राइटिंग) के चक्कर में भी पड़े. इस स्वचालित लेखन में किसी व्यक्ति के हाथ में कलम पकड़ा दी जाती और जो वह लिखता, उस का आध्यात्मिक अर्थ लगा लिया जाता तथा यह मान लिया जाता कि लेखन किसी 'परोक्ष सत्ता' के द्वारा हुआ है. इस प्रकार लिखतेलिखते एक पुस्तक तैयार हो गई, जिसे पांडिचेरी में किसी जमींदार ने, जो उन का भक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो गया था, 'यौगिक साधन' नाम से छपवा दिया. बाद में इस पुस्तक की बिक्री रोक ली गई और यह कहा गया कि पुस्तक जब समाप्ति पर थी, तब अंतिम दिन राजा राममोहन राय जैसी एक छाया सामने विलीन होती देखी गई थी. इस से यह अनुमान लगाया गया कि पुस्तक राजा राममोहन राय की आत्मा ने लिखी. चूंकि पुस्तक श्री अरविंद की नहीं थी अतः इसे हटा लिया गया. किंतु नहीं मालूम कि जहां इस देश में आध्यात्म की लाखों पुस्तकें चलती हैं, वहां राजा राममोहन राय की तथाकथित आत्मा द्वारा लिखी पुस्तक ने ही क्या बिगाड़ा था जो उसे हटा लिया गया? और यदि उसे बाद में हटाना ही था तो छापा ही क्यों गया था?

कहा जाता है कि एक दिन आश्रम में श्री अरविंद खतरनाक मात्रा में अफीम खा गए किंतु बच गए. यह भी कहा जाता है कि एक मुसलमान फकीर ने प्रेतविद्या के द्वारा इन के घर पर पत्थर फिंकवाए और साधक लोग प्रेतबाधा से परेशान हो गए. भाग्यवाद, ज्योतिष, प्रेतात्माएं, दिव्य शक्तियां, दानवी शक्तियां, प्लांचेट, नशा, भगवान का आदेश––सभी गोरखधंधे अध्यात्मवाद में हैं और श्री अरविंद का अध्यात्मवाद इन अंधविश्वासों से अछूता नहीं है. श्री अरविंद ने 'श्री मां' को एक पत्र में लिखा, "मेरे लिए तो मुझे जो दिव्य वाणी कहती है, वह मैं बिना दाएंबाएं देखे करता जाता हूं. परिणाम मेरा नहीं है और अब तो ऐसा लगता है कि परिश्रम भी शायद ही मेरा हो."

अंतरात्मा की आवाज

मतलब यह है कि आप अपने मन को सारे दायित्वों से मुक्त कर दीजिए, न दाएं-बाएं देखिए, न परिणाम की चिंता कीजिए, मस्तिष्क को विचारों से शून्य कर दीजिए (हालांकि वह कभी शून्य नहीं होता), फिर जो समझ में आए, उसे दिव्य वाणी का आदेश मान कर कीजिए. पर इस में कौन नई बात है? हर मनमानी करने वाला आदमी यही करता है. इसी मनमानी को हमारे देश में 'अंतरात्मा की आवाज' कहा जाता है. इस आवाज को हर कोई बिना योगसाधना के सुनता है. हमारे देश में पिछले राष्ट्रपति के चुनाव के अवसर पर इसी आवाज अर्थात 'दिव्य वाणी' को सुन कर मतदाताओं ने अपनाअपना मत दिया था.

श्री अरविंद की जीवनी में तीन माताओं का उल्लेख मिलता है. प्रथम, उन को जन्म देने वाली माता, जिन का सामीप्य उन्हें बहुत कम मिला और जो बेचारी बाद में मानसिक रूप में अस्वस्थ हो गईं. दूसरी, 'भारत माता' जो उन्हें योग प्रवेश से पहले अनुप्राणित करती रहीं. उन्होंने कहा था, "लोग स्वदेश को एक जड़ पदार्थ, कुछ मैदान, खेत, वन, पर्वत, नदी भर समझते हैं, मैं स्वदेश को मां मानता हूं, उस की भक्ति करता हूं, पूजा करता हूं.' पांडिचेरी जाने के बाद उन्हें एक तीसरी मां मिलीं, जिन की बदौलत पांडिचेरी आश्रम की काया पलट गई, लक्ष्मी आने लगी और आश्रमवासियों की संख्या धीरेधीरे बढ़ कर हजारों तक पहुंच गई. इन 'रहस्यमयी' माता का परिचय प्राप्त करने के लिए मैं ने श्री अरविंद आश्रम द्वारा प्रकाशित कई पुस्तकें पढ़ डालीं किंतु मुझ यह नहीं ज्ञात हो सका कि इन माताजी का नाम क्या है. हां, इतना अवश्य ज्ञात हुआ कि यह फ्रांस के किसी धनी बैंकर की पुत्री हैं तथा विवाहित हैं. आश्रम द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में उन का परिचय कुछ इस प्रकार दिया रहता है, " और मां, जो आदि हैं, वही अंत भी हैं, वही यात्रा हैं, वही गंतव्य भी हैं, वही साधना हैं, वही सिद्धि हैं." अध्यात्म की पुस्तकें इसी प्रकार की भाषा में हर प्रश्न का उत्तर देती हैं. चाहे लाख मगज मारो, असली बात की टोह नहीं लग पाती. भाषा कवित्वपूर्ण, भावपूर्ण और आकर्षक होती है किंतु आधार कुछ भी नहीं होता.

ब्रह्मचर्य और वात्सल्य का स्थान

जो हो, हमारे आश्रमों की यह एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परंपरा रही है कि वहां कोई 'मां' हो जिस से आश्रमवासी ब्रह्मचारी और कुछ नहीं तो. वात्सल्य का एक मधुर शब्द ही पा सकें. आजकल तो आश्रमों में विदेशी गोरी माताएं अकसर दिखाई देती हैं किंतु पहले की बात और थी. उन दिनों किसी भाग्यशाली आश्रम को ही ऐसी मां मिल सकती थी. श्री अरविंद 1910 में पांडिचेरी आए और श्री माताजी 1914 में आईं. अध्यात्म का पूरा रंग उन पर नहीं चढ़ा था. प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ जाने पर मातृभूमि पर संकट आया जान वह 1915 में फ्रांस वापस चली गईं. वह 1920 में लौट आईं. दूसरे विश्वयुद्ध के समय वह स्वदेश नहीं लौटीं. तब तक वह अध्यात्म में पूरी तरह रम चुकी थीं, क्योंकि अध्यात्म के आगे देश का संकट गौण हो जाता है.

पांडिचेरी आने के बाद श्री अरविंद और उन के साथी आश्रमवासियों को अभावों का जीवन बिताना पड़ा था. कभी-कभी तो रात को बिना खाए भी सो जाना पड़ता था. वे चटाइयों पर सोते थे. चंदरनगर से श्री मोतीलाल राय चंदा एकत्र कर के कुछ वर्षों तक इन्हें भेजते रहे, किंतु बाद में उन्होंने भी इन से संबंध विच्छेद कर लिया. 1920 में 'श्री मां' जब लौट आईं और श्री अरविंद की कुछ पुस्तकें भी चल निकलीं तो पर्याप्त धन आने लगा और आश्रमवासी मोटे होते चले गए. 1921 में श्री अरविंद की सेहत को देख कर श्री अंबालाल आश्चर्य में पड़ गए थे.

सांसारिक संघर्षों से पलायन

देश में स्वदेशी आंदोलन बढ़ता जा रहा था. नेता लोग अवसर निकाल कर श्री अरविंद से मिलने आते और सहयोग की प्रार्थना करते. श्री अरविंद उलटे उन्हें योग साधना करने की राय दे देते. देशबंधु चितरंजनदास को भी ऐसी सलाह मिली किंतु उन्होंने उसे स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया. इसी प्रकार श्री मोतीलाल राय, श्री अमरेंद्रनाथ चटर्जी और दूसरे नेताओं को भी उन्होंने भड़काया, किंतु वे और देशभक्त अपने कर्तव्य पथ से विचलित नहीं हुए.

यद्यपि पांडिचेरी बंगाल से बहुत दूर मद्रास के दक्षिण में फ्रांसीसी अधिकार में थी, किंतु वहां भी ब्रिटिश भारत के गुप्तचर श्री अरविंद को किसी तरह लपेट में ले लेने के चक्कर में घूमते थे. उधर कोई क्रांतकारी श्री अरविंद से मिलने आता तो गुप्तचर और भी सक्रिय हो जाते, आश्रम की शांति को खतरा पैदा हो जाता. श्री अरविंद को यह बाधा सहन न हो सकी. वह तो इस झंझट से बचने इतनी दूर आए थे. उन्हें गोदाम में छिपना पड़ा था. जिस जहाज में बैठ कर वह यहां आए थे, उस का टिकट दूसरे के नाम लिया गया था. जब किसी के आग्रह पर उन्हें राजनीति संबंधी कोई वक्तव्य प्रकाशित करना ही पड़ता तो वह अपने नाम से नहीं, वरन 'एक भारतीय राष्ट्रवादी' नाम से करवाते थे. अध्यात्म और योग ने एक उग्र क्रांतिकारी को कायर बना दिया और 'सर फरोशी की तमन्ना' बदल कर 'सर छिपाओ की तमन्ना' हो गई. अतः 1926 में श्री मां को आश्रम के प्रबंध का सारा भार सौंप कर श्री अरविंद ने एकांतवास ले लिया. जो उन के जीवनपयत चलता रहा. वह वर्ष में केवल चार दिन 'दर्शन' देने अपने कमरे से बाहर आते. इन चार 'दर्शन दिवस' में से एक था 15 अगस्त, क्योंकि इस दिन उन का जन्मदिवस बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था. एक अन्य 'दर्शन दिवसों' 24 नवंबर को पड़ता था, क्योंकि इस दिन श्री मां (आश्रम की डिवाइन मदर) पांडिचेरी में अपना निवास छोड़ कर श्री अरविंद के साथ स्थायी रूप से रहने के लिए आई थीं. इस एकांतवास से आश्रम को दो लाभ हुए. एक तो क्रांतिकारी आगंतुकों और अनावश्यक मिलने वालों से छुट्टी मिल गई और दूसरे, पुस्तकें लिखने का अच्छा अवसर मिल गया, शिष्य लोग लिख कर प्रश्न पूछते, प्रश्न को श्री अरविंद के पास भेज दिया जाता और कुछ प्रतीक्षा के पश्चात लिखा हुआ उत्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मिल जाता. पर्याप्त संख्या में प्रश्नों के उत्तर जमा होने पर उन्हें छपवा दिया जाता. हमारे देश में अध्यात्म के नाम पर गप्पें भी बिक जाती हैं, फिर वे तो श्री अरविंद की लेखनी से लिखे पत्र थे.

पारलौकिक शक्ति बनने का ढोंग

इस प्रकार आश्रम को एक अच्छा व्यवसाय मिल गया और उस की ख्याति बढ़ने लगी. कोई योगी हो, धनी परिवार से आया हो, संस्कृत के साथ अंगरेजी भी जानता हो—ख्याति बढ़ाने के लिए इतना ही पर्याप्त है. श्री अरविंद में तो इस से कहीं अधिक विशेषताएं थीं. आश्रम का भाग्य चेत गया. उत्सव और 'दर्शन दिवस' मनाए जाने लगे. चमेली के फूलों से सारा बरामदा सजाया जाता. श्री अरविंद और श्री मां विराजते. प्रकाश किया जाता. भक्त लोग आशीर्वाद लेने आते. उत्सव को अधिक प्रभावोत्पादक बनाने के लिए श्री अरविंद और श्री मां की कुरसी के पीछे दीवार से परदे पर तीन सर्पाकार चीनी दानवों के चित्र टांगे जाते. (चीन देश के अध्यात्म, जिसे अब चीनियों ने कूड़े में डाल दिया है, के अनुसार मन, अंतरिक्ष और पृथ्वी के तीन दानव जब मिलेंगे, तभी सत्य पृथ्वी पर उद्घाटित होगा.) भक्तों को सारा अध्यात्म समझाया जाता. कोई भक्त आनंद विभोर हो कर कहता, 'आज भगवान पृथ्वी पर प्रकट हुए हैं,' कोई कहता, 'भौतिक परिमंडल में यह अधिमानसी आनंद चेतना का पदार्पण है,' आदि. इस सारे नाटक का विवरण पत्रपत्रिकाओं और पुस्तकों में छपवा दिया जाता.

श्री अरविंद अपने योग को 'पूर्णयोग' कहते हैं. पहले के योगों को अपूर्ण माना गया है. श्री अरविंद का विचार था कि उन की बताई गई योगसाधना से मानव शीघ्र ही अपने बौद्धिक स्तर से उठ कर अतिमानस (सुपर माइंड) के स्तर पर पहुंच जाएगा. अतिमानस स्तर वाला मनुष्य दैवी मनुष्य होगा और यह संसार देवलोक हो जाएगा. यह स्थिति स्वतः विकसित हो रही है और कई जन्मों के पश्चात मनुष्य उस स्थिति में होगा. किंतु यदि उन की योगसाधना की सहायता ली जाए तो मनुष्य इसी जन्म में कुछ ही वर्षों की साधना से यह स्थिति पा सकता है.

अपने योग के संबंध में अपने छोटे भाई श्री वारींद्र घोष को उन्होंने एक पत्र में लिखा था, "अन्नमय देह, प्राण, मन-बुद्धि, विज्ञान और आनंद आत्मा की पांच मूर्तियां हैं. मनुष्य जितना ही ऊपर उठता है, उतना ही उस के आध्यात्मिक विकास की चरम सिद्धि की अवस्था समीप आती जाती है. विज्ञान में पहुंच जाने पर आनंद में जाना सहज हो जाता है, अखंड अनंत आनंद की अवस्था में दृढ़ प्रतिष्ठा हो जाती है, केवल त्रिकालातीत परब्रह्म में नहीं—देह में, जगत में. जीवन में. पूर्ण सत, पूर्ण चैतन्य, पूर्ण आनंद विकसित हो कर जीवन में मूर्त होते हैं. यह प्रयास ही मेरे योग की मूल बात है."

योग का गलत प्रयोग

अब तक तो श्री अरविंद के योग का पर्याप्त प्रसार हो चुका है. उपर्युक्त पूर्ण सत, पूर्ण चैतन्य और पूर्ण आनंद विकसित हो कर कितनों के जीवन में मूर्त हो चुका है, यह तो मैं नहीं जानता किंतु इतना जानता हूं कि श्री अरविंद की यह बात जितनी आकर्षक और लुभावनी है, उतनी ही आकर्षक किसी भी दूसरे योगी की बात होती है तथा हर पद्धति का योगी दूसरी पद्धति को दोषयुक्त कहता है.

भारत में योग नया नहीं है. हजारों वर्ष पहले पतंजलि ने योगशास्त्र पर ग्रंथ लिखा था. पतंजलि के योग के आठ अंग थे—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, ईश्वर-प्रणिधान, ध्यान, धारणा और समाधि. पतंजलि के योग में और चाहे जो हो, इतनी अच्छाई अवश्य थी कि यमनियमों के पालन के लिए कहा जाता था. इन से जीवन अनुशासित होता था. आसन और प्राणायाम से व्यायाम मिलता था और स्वास्थ्य ठीक रहता था. किंतु अब के योगी उपर्युक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आठ अंगों में से प्रथम चार उपयोगी अंगों पर जोर देना लाभकारी न समझ कर सीधे 'प्रभुदर्शन' करा देते हैं.

श्री अरविंद ने शंकराचार्य के 'माया' सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया. सतयुग आदि युगविभाजन को भी उन्होंने नहीं माना. तुलसी आदि संतों के अनुसार कलियुग का अंतिम चरण आने तक भविष्य में पापों के बढ़ने की संभावना है. अभी तो कलियुग प्रथम चरण में ही है. किंतु श्री अरविंद के दर्शन के अनुसार संसार का भविष्य उज्ज्वल है, सब कुछ अनुकूल दिशा में बदल रहा है, बदला हुआ मनुष्य दिव्य मनुष्य होगा, संसार नरक नहीं रहेगा वरन स्वर्ग जैसा सुखमय बन जाएगा. इसी बात को श्री अरविंद ने अपने विशाल साहित्य में तरहतरह से कहने की चेष्टा की है. अपनी इस दार्शनिक भविष्यवाणी का आधार श्री अरविंद ने वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित जीवों के 'क्रमिक विकास सिद्धांत' को बनाया. इस प्रकार उन्होंने दर्शन और विज्ञान के बीच समन्वय स्थापित कर दिया तथा अपने दर्शन को वैज्ञानिक सिद्ध करने की चेष्टा की.

दर्शन और विज्ञान का समन्वय

अब दार्शनिक लोग विज्ञान के साथ समझौता करना चाहते हैं. पिछली शताब्दी में जब डार्विन ने जीवोत्पत्ति के विषय में उक्त क्रमिक विकास सिद्धांत को प्रतिपादित किया था तो तथाकथित दार्शनिकों और अध्यात्मवादियों ने इस सिद्धांत से अपने दर्शन का समन्वय करना बिलकुल अस्वीकार कर दिया था. डार्विन के खोजपूर्ण निष्कर्ष ने उन के खोखले दर्शन की जब पोल खोल दी तो बीसवीं सदी के अध्यात्मवादी समन्वय की नीति अपनाने लगे हैं और अब विज्ञान से इस निराधार दर्शन का समन्वय वैज्ञानिक विचारधारा को पंगु बना रहा है. यही कारण है कि हमारे देश में, जहां हर कोई दार्शनिक है, विज्ञान ने उतनी उन्नति नहीं कर पाई, जितनी अन्य देशों में. मतमतांतरों के चक्रव्यूह में फंसी भारतीय जनता दिशाहीन हो चुकी है. सैकड़ों प्रचलित मतों में से एक भी ऐसा नहीं जो सही दिशा दे सके.

5 दिसंबर, 1950 को गुर्दे के एक रोग के कारण श्री अरविंद ने 'महासमाधि' ले ली! 'मृत्यु हो गई.' ऐसा नहीं कहा जाता, क्योंकि अध्यात्म दर्शन के अनुसार कभी किसी की मृत्यु होती ही नहीं: "न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः.'

श्री अरविंद की पत्नी श्रीमती मृणालिनीदेवी की मृत्यु 1918 में ही इंफ्लूएंजा के कारण हो गई थी. तब श्री अरविंद पांडिचेरी आ चुके थे. वह तो योगी थे, पत्नी की खबर लेने कैसे जाते? मृणालिनीदेवी मरने से पहले पति के दर्शन करने बंगाल से पांडिचेरी नहीं आईं और इस कारण वह दुखी हो कर मरीं तो इस में योगी अरविंद का क्या दोष? उन्होंने तो 'दर्शन दिवस' निर्धारित कर ही रखे थे. अतः दोष मृणालिनीदेवी का ही था. आश्रम की श्री मां (डिवाइन मदर) भी तो अपने पति से मिलने नहीं जाती थीं. योगी अथवा योगिन जब दिव्य शक्तियों से नाता जोड़ लेते हैं तो संसार से उन का क्या मतलब? यह बात समझ में नहीं आती कि श्री अरविंद ने पहले कभी यह क्यों कहा था कि उन का योग संन्यास अथवा संसार परित्याग नहीं है. क्या कर्मयोग और ज्ञानयोग का 'समन्वय' यही है कि माता, पिता, पत्नी और बच्चों को उन के हाल पर छोड़ कर अपने ऊपर तथाकथित दिव्य शक्तियों का अवतरण कराएं? क्या संसार का 'रूपांतरण' यही है? मैं ने ऐसे बीसियों योगी देखे हैं जो मानवता को दुखों से छुटकारा दिलाने का दावा करते हैं जब कि उन के बच्चे बाप के प्यार को तरसते हैं और असहाय पत्नी आठआठ आंसू रोती है. क्या इन योगियों का स्वयं का जीवन अध्यात्म और दर्शन के खोखलेपन का प्रमाण नहीं है?

श्री अरविंद ने योग के नशे में भटक जाने से पहले देश के लिए जो कुछ किया,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिल जाता. पर्याप्त संख्या में प्रश्नों के उत्तर जमा होने पर उन्हें छपवा दिया जाता. हमारे देश में अध्यात्म के नाम पर गप्पें भी बिक जाती हैं, फिर वे तो श्री अरविंद की लेखनी से लिखे पत्र थे.

पारलौकिक शक्ति बनने का ढोंग

इस प्रकार आश्रम को एक अच्छा व्यवसाय मिल गया और उस की ख्याति बढ़ने लगी. कोई योगी हो, धनी परिवार से आया हो, संस्कृत के साथ अंगरेजी भी जानता हो—ख्याति बढ़ाने के लिए इतना ही पर्याप्त है. श्री अरविंद में तो इस से कहीं अधिक विशेषताएं थीं. आश्रम का भाग्य चेत गया. उत्सव और 'दर्शन दिवस' मनाए जाने लगे. चमेली के फूलों से सारा बरामदा सजाया जाता. श्री अरविंद और श्री मां विराजते. प्रकाश किया जाता. भक्त लोग आशीर्वाद लेने आते. उत्सव को अधिक प्रभावोत्पादक बनाने के लिए श्री अरविंद और श्री मां की कुरसी के पीछे दीवार से परदे पर तीन सर्पाकार चीनी दानवों के चित्र टांगे जाते. (चीन देश के अध्यात्म, जिसे अब चीनियों ने कूड़े में डाल दिया है, के अनुसार मन, अंतरिक्ष और पृथ्वी के तीन दानव जब मिलेंगे, तभी सत्य पृथ्वी पर उद्घाटित होगा.) भक्तों को सारा अध्यात्म समझाया जाता. कोई भक्त आनंद विभोर हो कर कहता, 'आज भगवान पृथ्वी पर प्रकट हुए हैं,' कोई कहता, 'भौतिक परिमंडल में यह अधिमानसी आनंद चेतना का पदार्पण है,' आदि. इस सारे नाटक का विवरण पत्रपत्रिकाओं और पुस्तकों में छपवा दिया जाता.

श्री अरविंद अपने योग को 'पूर्णयोग' कहते हैं. पहले के योगों को अपूर्ण माना गया है. श्री अरविंद का विचार था कि उन की बताई गई योगसाधना से मानव शीघ्र ही अपने बौद्धिक स्तर से उठ कर अतिमानस (सुपर माइंड) के स्तर पर पहुंच जाएगा. अतिमानस स्तर वाला मनुष्य दैवी मनुष्य होगा और यह संसार देवलोक हो जाएगा. यह स्थिति स्वतः विकसित हो रही है और कई जन्मों के पश्चात मनुष्य उस स्थिति में होगा. किंतु यदि उन की योगसाधना की सहायता ली जाए तो मनुष्य इसी जन्म में कुछ ही वर्षों की साधना से यह स्थिति पा सकता है.

अपने योग के संबंध में अपने छोटे भाई श्री वारींद्र घोष को उन्होंने एक पत्र में लिखा था, "अन्नमय देह, प्राण, मन-बुद्धि, विज्ञान और आनंद आत्मा की पांच मूर्तियां हैं. मनुष्य जितना ही ऊपर उठता है, उतना ही उस के आध्यात्मिक विकास की चरम सिद्धि की अवस्था समीप आती जाती है. विज्ञान में पहुंच जाने पर आनंद में जाना सहज हो जाता है, अखंड अनंत आनंद की अवस्था में दृढ़ प्रतिष्ठा हो जाती है, केवल त्रिकालातीत परब्रह्म में नहीं—देह में, जगत में. जीवन में. पूर्ण सत, पूर्ण चैतन्य, पूर्ण आनंद विकसित हो कर जीवन में मूर्त होते हैं. यह प्रयास ही मेरे योग की मूल बात है."

योग का गलत प्रयोग

अब तक तो श्री अरविंद के योग का पर्याप्त प्रसार हो चुका है. उपर्युक्त पूर्ण सत, पूर्ण चैतन्य और पूर्ण आनंद विकसित हो कर कितनों के जीवन में मूर्त हो चुका है, यह तो मैं नहीं जानता किंतु इतना जानता हूं कि श्री अरविंद की यह बात जितनी आकर्षक और लुभावनी है, उतनी ही आकर्षक किसी भी दूसरे योगी की बात होती है तथा हर पद्धति का योगी दूसरी पद्धति को दोषयुक्त कहता है.

भारत में योग नया नहीं है. हजारों वर्ष पहले पतंजलि ने योगशास्त्र पर ग्रंथ लिखा था. पतंजलि के योग के आठ अंग थे—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, ईश्वर-प्रणिधान, ध्यान, धारणा और समाधि. पतंजलि के योग में और चाहे जो हो, इतनी अच्छाई अवश्य थी कि यमनियमों के पालन के लिए कहा जाता था. इन से जीवन अनुशासित होता था. आसन और प्राणायाम से व्यायाम मिलता था और स्वास्थ्य ठीक रहता था. किंतु अब के योगी उपर्युक्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आठ अंगों में से प्रथम चार उपयोगी अंगों पर जोर देना लाभकारी न समझ कर सीधे 'प्रभुदर्शन' करा देते हैं.

श्री अरविंद ने शंकराचार्य के 'माया' सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया. सतयुग आदि युगविभाजन को भी उन्होंने नहीं माना. तुलसी आदि संतों के अनुसार कलियुग का अंतिम चरण आने तक भविष्य में पापों के बढ़ने की संभावना है. अभी तो कलियुग प्रथम चरण में ही है. किंतु श्री अरविंद के दर्शन के अनुसार संसार का भविष्य उज्ज्वल है, सब कुछ अनुकूल दिशा में बदल रहा है, बदला हुआ मनुष्य दिव्य मनुष्य होगा, संसार नरक नहीं रहेगा वरन स्वर्ग जैसा सुखमय बन जाएगा. इसी बात को श्री अरविंद ने अपने विशाल साहित्य में तरहतरह से कहने की चेष्टा की है. अपनी इस दार्शनिक भविष्यवाणी का आधार श्री अरविंद ने वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित जीवों के 'क्रमिक विकास सिद्धांत' को बनाया. इस प्रकार उन्होंने दर्शन और विज्ञान के बीच समन्वय स्थापित कर दिया तथा अपने दर्शन को वैज्ञानिक सिद्ध करने की चेष्टा की.

दर्शन और विज्ञान का समन्वय

अब दार्शनिक लोग विज्ञान के साथ समझौता करना चाहते हैं. पिछली शताब्दी में जब डार्विन ने जीवोत्पत्ति के विषय में उक्त क्रमिक विकास सिद्धांत को प्रतिपादित किया था तो तथाकथित दार्शनिकों और अध्यात्मवादियों ने इस सिद्धांत से अपने दर्शन का समन्वय करना बिलकुल अस्वीकार कर दिया था. डार्विन के खोजपूर्ण निष्कर्ष ने उन के खोखले दर्शन की जब पोल खोल दी तो बीसवीं सदी के अध्यात्मवादी समन्वय की नीति अपनाने लगे हैं और अब विज्ञान से इस निराधार दर्शन का समन्वय वैज्ञानिक विचारधारा को पंगु बना रहा है. यही कारण है कि हमारे देश में, जहां हर कोई दार्शनिक है, विज्ञान ने उतनी उन्नति नहीं कर पाई, जितनी अन्य देशों में मतमतांतरों के चक्रव्यूह में फंसी भारतीय जनता दिशाहीन हो चुकी है. सैकड़ों प्रचलित मतों में से एक भी ऐसा नहीं जो सही दिशा दे सके.

5 दिसंबर, 1950 को गुर्दे के एक रोग के कारण श्री अरविंद ने 'महासमाधि' ले ली! 'मृत्यु हो गई.' ऐसा नहीं कहा जाता, क्योंकि अध्यात्म दर्शन के अनुसार कभी किसी की मृत्यु होती ही नहीं: "न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः.'

श्री अरविंद की पत्नी श्रीमती मृणालिनीदेवी की मृत्यु 1918 में ही इंफ्लूएंजा के कारण हो गई थी. तब श्री अरविंद पांडिचेरी आ चुके थे. वह तो योगी थे, पत्नी की खबर लेने कैसे जाते? मृणालिनीदेवी मरने से पहले पति के दर्शन करने बंगाल से पांडिचेरी नहीं आई और इस कारण वह दुखी हो कर मरीं तो इस में योगी अरविंद का क्या दोष? उन्होंने तो 'दर्शन दिवस' निर्धारित कर ही रखे थे. अतः दोष मृणालिनीदेवी का ही था. आश्रम की श्री मां (डिवाइन मदर) भी तो अपने पति से मिलने नहीं जाती थीं. योगी अथवा योगिन जब दिव्य शक्तियों से नाता जोड़ लेते हैं तो संसार से उन का क्या मतलब? यह बात समझ में नहीं आती कि श्री अरविंद ने पहले कभी यह क्यों कहा था कि उन का योग संन्यास अथवा संसार परित्याग नहीं है. क्या कर्मयोग और ज्ञानयोग का 'समन्वय' यही है कि माता, पिता, पत्नी और बच्चों को उन के हाल पर छोड़ कर अपने ऊपर तथाकथित दिव्य शक्तियों का अवतरण कराएं? क्या संसार का 'रूपांतरण' यही है? मैं ने ऐसे बीसियों योगी देखे हैं जो मानवता को दुखों से छुटकारा दिलाने का दावा करते हैं जब कि उन के बच्चे बाप के प्यार को तरसते हैं और असहाय पत्नी आठआठ आंसू रोती है. क्या इन योगियों का स्वयं का जीवन अध्यात्म और दर्शन के खोखलेपन का प्रमाण नहीं है?

श्री अरविंद ने योग के नशे में भटक जाने से पहले देश के लिए जो कुछ किया,

उस के लिए यह तुच्छ लेखक उन की जन्म शताब्दी के अवसर पर उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता है. कितना अच्छा होता कि वह योग के चक्कर में न पड़े होते! ●●

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सरिता मुक्ता के रिप्रिंटस सैट

सेट नं. 1 : प्राचीन हिंदू संस्कृति, शंबूक वध, अतीत का मोह, पुरोहितवाद, गौपूजा, हमारी धार्मिक सहिष्णुता, कृष्णनीति : हमारा नैतिक पतन, ज्ञान की कसौटी पर परलोकवाद, राम का अंतर्द्वंद्व, राम का अंतर्द्वंद्व : आलोचनाओं व आपत्तियों का उत्तर, भारत में संस्कृति का ब्राह्मण नियंत्रित विस्तार, हिंदू धर्म, संस्कृत, भारतीय नारी की धार्मिक यात्रा, कर्ण, भारतीय नारी की सामाजिक यात्रा, तुलसी और वेद, रामचरितमानस में ब्राह्मणशाही, युगोंयुगों से शोषित भारतीय नारी, भ्रष्टाचार, रामचरितमानस में नारी, सत्यनारायण व्रत कथा, क्या नास्तिक मूर्ख हैं? गांधीजी का बलिदान, यज्ञोपवीत, जंत्र तंत्र मंत्र, कर्मयोग, गरुड़ पुराण.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 2 : ईश्वर, आत्मा और पाप, कितना महंगा धर्म, कितना महंगा धर्म : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, कितना महंगा धर्म (निर्णय), राम कथा व सीता चरित्र, सरिता और हिंदू समाज, तुलसी साहित्य : अनुवादों की सफल नुमाइश के सिवा क्या है? तुलसी साहित्य : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, हिंदूओं के मंदिर कैसे हों? रावण, रामचरितमानस के अविश्वसनीय प्रसंग, रामचरितमानस के कुछ असंगत स्थल, श्रीकृष्ण, गीता : कर्मवाद की व्याख्या या कृष्ण का आत्म प्रचार, क्या कौमार्य रक्षा दकियानूसी है? कृष्ण और राधा, श्रीमद्भागवत, भागवत और भूगोल, समाजवाद बनाम स्वतंत्रता, कामायनी, हिंदू विवाह पद्धति, पुत्रेष्टि यज्ञ, तुलसीदास और हिंदू समाज, हिंदी साहित्य का गलत इतिहास, धनुषयज्ञ, कृष्ण और गोपियां, हमारे देव मंदिर, क्या समाजवाद अनिवार्य है? विवाह पूर्व यौन संबंध, श्रीकृष्ण : अपने जीवन की संध्या में, सताई गई नारी, कृष्ण और कुब्जा.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 3 : सिपाही क्यों लड़ता है, प्रेम पत्र न लिखिए, डायरी न लिखिए, इसलाम और स्त्री, योगी अरविंद, गीता में अंतर्विरोध, गायत्री मंत्र, फल सब्जी संरक्षण, खट्टे मीठे अचार, सर्दियों की बुनाई, रसोई उद्यान, संसद सदस्य श्री चादर वाला केस, घाटे वाले बालाजी, आखिरत की अटकलें, हिंदी साहित्य की बपौती, फूल मोतियों के, मटर की उन्नत किस्में, बीज उपचार, भीष्म, मुसलिम विवाह, भगवान श्री रजनीचर, महाभारत की ऐतिहासिकता, महाभारत की ऐतिहासिकता : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, रेंट कंट्रोल एक्ट एक विफल कानून, आप की लड़की प्रेम करती है, यूनियन, सौंदर्य प्रतियोगिता, वैज्ञानिक ज्ञान बनाम अध्यात्म ज्ञान, पूंजीपति, नियोग.

मूल्य 5 रुपए

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

65 : 4079 मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गीता में अंतर्विरोध

गंगासहाय 'प्रेमी'

भक्त किस की भक्ति करे, कृष्ण की या ईश्वर की?

आज गीता शब्द भारतीय दर्शन का पर्यायवाची बना हुआ है. भारत में ही नहीं, विदेशों में भी इस का बहुत प्रचार है. धर्म में विश्वास रखने वाले और धर्मनिरपेक्षता में आस्था रखने वाले, दोनों ही गीता का अध्ययन करते हैं. प्राचीन अंधविश्वासों में फंसा हुआ तथा सुधारवादी विचारों का नवीन व्यक्ति, दोनों ही गीता के भक्त हैं. लोग गीता चाहे नियमित रूप से पढ़ते न हों, पर वैसा बताने में गौरव का अनुभव करते हैं. शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, तिलक, गांधी, विनोबा भावे, बच्चन आदि सभी प्रकार के लोगों ने गीता पर टीका लिख कर अपने विचार व्यक्त किए हैं.

गीता में यदि कोई गुण है तो यह कि उस में अनेक दार्शनिक ग्रंथों के विचार सरल भाषा में एकत्र संग्रहीत हैं. अन्य दार्शनिक ग्रंथों की भाषा कठिन होने के कारण सब के लिए सुलभ नहीं है. गीता में इतने अधिक विचार हैं कि साधारण क्या, प्रबुद्ध व्यक्ति के लिए भी उन्हें स्पष्ट रूप से समझना सरल नहीं है. गीता में अनेक स्थानों पर पुनरुक्ति, परस्पर विरोध जैसी त्रुटियां हैं. धार्मिक भावना में तन्मय हो कर गीता का पाठ करने वाले या चर्चा चलाने वाले लोगों का ध्यान तो उधर जा ही नहीं सकता, यह कहना अधिक उचित होगा कि ऐसा पाठक या श्रोता अर्थ की ओर बहुत कम ध्यान देता है. उस को लोकपरलोक बनाने के लिए गीता के शब्द ही पर्याप्त हैं. प्रबुद्ध एवं विचारवान व्यक्ति भी गीता की सभी बातें एक साथ स्मरण नहीं रख सकता.

नीचे हम गीता के कुछ ऐसे स्थलों की चर्चा कर रहे हैं, जिन का अर्थ एक-दूसरे के विरुद्ध है.

I. अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च,
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः. (2-24)

(यह आत्मा अच्छेद्य है, यह आत्मा अदाह्य, अक्लेद्य और अशोष्य है तथा यह आत्मा निस्संदेह नित्य, अचल, स्थिर रहने वाला और सनातन है.)

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि,
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्य-
न्यानि संयाति नवानि देही. (2-22)

(जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्याग कर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्याग कर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त होता है.)

पहले श्लोक में आत्मा को सर्वगत (सब में समाया हुआ), अचल (न चलने वाला) तथा स्थिर रहने वाला बताया गया है. दूसरे श्लोक में कहा गया है कि आत्मा पुराने शरीरों को छोड़ कर नए शरीरों में पहुंच जाता है. ये दोनों बातें एक साथ सत्य कैसे हो सकती हैं? जो सर्वव्यापक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, अचल तथा स्थिर है, उस के एक स्थान से चल कर दूसरे स्थान पर जाने का प्रश्न ही नहीं उठता.

2. त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन,
निर्द्वंद्वो नित्य सत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्. (2-45)

(वेद तीन गुणों का विषय हैं. अर्थात वेदों में रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण तथा इन के विचारों का वर्णन किया गया है. तू इन तीनों गुणों से दूर रह. तू सुख-दुःखादि द्वंद्वों से रहित, नित्य वस्तु में स्थित, योगक्षेम न चाहने वाला तथा आत्मपरायण बन.)

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद् यतयो वीतरागाः,
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये. (8-11)

(हे अर्जुन! मैं संक्षेप में तुझे उस परम पद के विषय में बताता हूं, जिसे वेदों के विद्वान अक्षर (न मिटने वाला) बताते हैं, वीतराग योगी जिस में प्रवेश करते हैं, उसी परम पद को चाहने वाले ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं.)

पहले श्लोक में वेदों का विषय केवल त्रिगुण बताया गया है और दूसरे में वेदों के विद्वानों को न मिटने वाले उस परम पद का वर्णन करने वाला कहा गया है. जब वेदों में रजोगुण और सतोगुण का ही वर्णन है तो वेद का ज्ञाता उस अक्षर परम पद का ज्ञान कहां से प्राप्त कर लेगा. दोनों बातें परस्पर विपरीत हैं.

3. तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया,
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्व-दर्शिनः. (4-34)

(तत्त्व को जानने वाले ज्ञानी पुरुषों से भली प्रकार दंडवत् प्रणाम तथा सेवा कर के तथा निष्कपट भाव से किए हुए प्रश्नों द्वारा उस ज्ञान को जान. वे मर्म को जानने वाले ज्ञानीजन तुझे उस ज्ञान का उपदेश करेंगे.)

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते,
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति. (4-38)

(इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र कुछ नहीं है. उस ज्ञान को योगसंसिद्ध पुरुष कुछ समय पश्चात् स्वयं अपने अंतःकरण में प्राप्त करता है.)

पहले श्लोक में ज्ञान का स्रोत ज्ञानी लोगों को बताया है. उन से ज्ञान प्राप्त करने के साधन भी बताए गए हैं जो सरल नहीं हैं. दूसरे श्लोक में उसी ज्ञान को योग द्वारा स्वयं प्रकाशित होने का विषय बताया गया है. दोनों प्रकारों में न कोई विकल्प है और न स्तर भेद है. यदि यह कहा जाता है कि साधारण पुरुष ज्ञानियों से ज्ञान प्राप्त करे और योगियों को वह स्वयं प्राप्त हो जाएगा, तब भी ठीक था.

4. अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पाप-कृत्तमः,
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि. (4-36)
यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन,
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा. (4-37)

(यदि तू सब पापियों से भी अधिक पाप करने वाला है तो भी ज्ञान रूपी नौका द्वारा संपूर्ण पापों को पार कर जाएगा. हे अर्जुन! जैसे जलती हुई अग्नि लकड़ियों को भस्म कर देती है, उसी प्रकार ज्ञान रूपी अग्नि संपूर्ण कर्मों को भस्म कर देती है.)

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्न-संशयम्,
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय. (4-41)

(जिस ने योग के द्वारा संपूर्ण कर्मों का त्याग कर दिया है, जिस के सब संशय ज्ञान द्वारा नष्ट हो गए हैं, ऐसे आत्मज्ञानी को कर्म नहीं बांधते हैं.)

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञाना-सिनात्मनः,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत. (4-42)

(हे अर्जुन! तू योग में स्थित हो जा. अज्ञान से उत्पन्न हुए संशय को तलवार द्वारा छेद कर उठ खड़ा हो.)

पहले श्लोक में ज्ञान को पाप रूपी समुद्र से पार लगाने वाला बताया है. अगर कोई व्यक्ति बड़ेबड़े पाप करने के बाद ज्ञानी बन जाए तो वे पाप उस का कुछ नहीं बिगाड़ सकते, जैसे नाव में बैठे व्यक्ति का पानी कुछ नहीं बिगाड़ सकता. अर्थात उसे पापों का फल भोगना नहीं पड़ता. ज्ञान हो जाने पर पापी व्यक्ति भविष्य में पाप न करे, यह तो समझ में आता है, पर उस का पाप के फलों से बचना विचित्र बात है.

दूसरे श्लोक में इसी से मिलतीजुलती बात कही गई है--ज्ञान सारे कर्मों को उसी प्रकार समाप्त कर देता है जैसे आग लकड़ी को जला देती है. ज्ञान बुरे कर्मों को भस्म करता होगा. पहले तो ज्ञान के बिना पुण्य कर्मों की ओर रुझान ही नहीं होगा. दूसरे ऐसे ज्ञान को तो लोग दूर से ही नमस्कार करेंगे जो शुभ कर्मों को भी जला दे. इस के स्थान पर यदि यह कहा जाता कि ज्ञान से कर्मफल की अभिलाषा या आसक्ति समाप्त हो जाती है, तो बात किसी प्रकार ठीक हो सकती थी.

तीसरे और चौथे श्लोकों में ज्ञान को संशय का नष्ट करने वाला बताया गया है. यह बात ठीक है. ज्ञान होने पर संशय समाप्त हो जाते हैं.

एक ही प्रसंग में ज्ञान को पापनाशक बताना क्या संगत है? एक वस्तु को तीनों की नाशक बताना क्या परस्पर विरोधी नहीं है?

5. न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः,
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते. (5-14)

(ईश्वर न तो संसार का कर्तृत्व बनाता है, न कर्म बनाता है और न कर्ता को कर्म का फल दिलाता है. यह सब तो स्वभाव से होता है. तात्पर्य यह है कि ईश्वर ने किसी को कार्य करने की शक्ति नहीं दी और न उस ने कर्म अथवा फल की व्यवस्था की है.)

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति,
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया. (18-61)

(हे अर्जुन! ईश्वर सब के हृदय में स्थित है. वह माया के सहारे प्राणियों को इस प्रकार घुमाता है, जैसे गोल चक्कर पर बैठे लोगों को उस का चलाने वाला. इस रूपक में प्राणी चक्कर पर बैठे लोग हैं, माया चक्कर है और ईश्वर चलाने वाला है. जिस प्रकार गोल चक्कर में बैठे लोग अपनी इच्छा से नहीं, ईश्वर के इशारे पर चलते हैं. उसी प्रकार संसार के जीव अपनी इच्छा से नहीं, ईश्वर के इशारे पर चलते हैं.)

उक्त दोनों श्लोकों के भाव सर्वथा परस्पर विरुद्ध हैं. पहले में बताया गया है कि ईश्वर कुछ करता ही नहीं है और दूसरे में बताया गया है कि प्रत्येक प्राणी उसी के इशारे पर चलता है. दोनों में से कौन सी बात सत्य मानी जाए?

6. योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना,
श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः. (6-47)

(संपूर्ण योगियों में भी जो श्रद्धावान हो कर मेरे में लगे हुए अंतरात्मा से मेरे को भजता है, मैं उसी को सर्वश्रेष्ठ योगी मानता हूं.)

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना,
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्. (8-8)

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः,
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप मादित्यवर्णं तमसः परस्तात. (8-9)

प्रयाणकाले मनसाचलेन भक्त्या युक्तो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योगबलेन चैव,
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स त
परं पुरुषमुपैति दिव्यम्. (8-10)

(परमेश्वर के ध्यान के अभ्यासरूप योग से युक्त, और न जाने वाले चित्त से निरंतर चिंतन करता हुआ पुरुष परम प्रकाशस्वरूप, दिव्य पुरुष अर्थात परमेश्वर को प्राप्त होता है. जो पुरुष सर्वज्ञ, अनादि, सब के नियंता, सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म, सब के धारणपोषण करने वाले, अचित्य रूप, सूर्य के सदृश प्रकाशवान, अज्ञानांधकार से दूर, शुद्ध परमात्मा का स्मरण करता है, वह भक्तियुक्त पुरुष, अंतकाल में भी योगबल से भृकुटि के मध्य में प्राण को भली प्रकार स्थापित कर के उस दिव्य पुरुष परमात्मा को प्राप्त होता है.)

पहले श्लोक में कृष्ण या गीताकार ने अपने में श्रद्धा रखने वाले को सब से बड़ा योगी बता कर लोगों को अपनी भक्ति की प्रेरणा दी है जब कि बाद के श्लोकों में लोगों से ईश्वर की भक्ति करने को ही योग बता कर ईश्वर की भक्ति का प्रचार किया है. लोग किस की भक्ति करें कृष्ण की या ईश्वर की?

7. इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते,
एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति
तद्विदः. (13-1)
क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं
मम. (13-2)

(हे अर्जुन! यह शरीर क्षेत्र कहलाता है. जो इस शरीर को जानता है, उसे ज्ञानी लोग क्षेत्रज्ञ कहते हैं. तू सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ अर्थात जीवात्मा मेरे को जान. क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ को जानना ज्ञान है, ऐसा मेरा मत है.)

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं
समासतः, (13-18)

(इस प्रकार क्षेत्र, ज्ञान तथा जानने योग्य परमात्मा को संक्षेप से कहा गया है.)

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञान-
मुत्तमम्,
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो
गताः. (14-1)

(मैं ज्ञानों में उत्तम ज्ञान को पुनः कहूंगा. इसे जान कर सभी मुनि परम सिद्धि को प्राप्त हुए हैं.)

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद् गुह्यतरं
मया. (18-63)

(इस प्रकार मैं ने तुझ से अत्यंत गोपनीय ज्ञान कहा है.)

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्ति-
रार्जवम्,
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्म-
विनिग्रहः. (13-7)
इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च,
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्श-
नम्. (13-8)
असक्तिरनभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु,
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टो-
पपत्तिषु. (13-9)
मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचा-
रिणी,
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि.
(13-10)
अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्श-
नम्,
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतो-
ऽन्यथा. (13-11)

(अभिमान का अभाव, दंभ का अभाव प्राणिमात्र को न सताना, क्षमाभाव, सरलता, गुरु की सेवा, शुद्धि, मन की स्थिरता, इंद्रियों का वश में करना, भोगों में आसक्ति न रखना, अहंकार का अभाव, जन्म, मृत्यु, जरा, रोग आदि में दुःखरूपी दोष का विचार करना, पुत्र, स्त्री, घर, धन आदि में आसक्ति और ममता का अभाव, अनुकूल तथा प्रतिकूल दोनों की प्राप्ति पर मन का सदा समान भाव होना, मुझ में अनन्य भाव से परम भक्ति, एकांत स्थान में रहने का स्वभाव, मनुष्य समूह से प्रेम न होना, अध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थित रहना और तत्त्वज्ञान के अर्थ रूप परमेश्वर को सर्वत्र देखना—यह सब ज्ञान कहा गया है और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस के विपरीत सभी अज्ञान है.)

यदि अंतिम पांच श्लोकों में गिनाई हुई बातें ही ज्ञान हैं एवं इस के अतिरिक्त सब कुछ अज्ञान है तो अन्य उक्तस्थलों की बात को ज्ञान कहना या ज्ञान का उपदेश करने के बहाने अपनी विभूतियां आदि ज्ञान कैसे हैं? या तो ज्ञान को सीमित करने वाली अंतिम उक्ति सही हो सकती है या फिर ऊपर वाली बातें ही ठीक हो सकती हैं. सभी बातों को ठीक मानना परस्पर विरुद्ध है.

8. ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति,
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्. (18-54)
भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः,
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्. (18-55)

(वह सच्चिदानंद ब्रह्म में एकीभाव से स्थित हुआ प्रसन्नचित्त वाला पुरुष न किसी वस्तु के लिए शोक करता है और न इच्छा, वह सब भूतों में समभाव रखता हुआ मेरी परम भक्ति प्राप्त करता है. उस भक्ति के द्वारा मुझे तत्व से जानता है कि मैं किस प्रभाव वाला हूं. मुझे वास्तव में जान कर तत्काल ही मेरे में प्रवेश कर जाता है.)

जो व्यक्ति ब्रह्म में एकीभाव हो गया हो, उसे कृष्ण या ईश्वर की भक्ति की क्या आवश्यकता है? ब्रह्म और ईश्वर या परमात्मा तो एक ही है. जो ब्रह्म में तदाकार हो गया है, वह परमात्मा या कृष्ण की भक्ति कर के उन्हें ठीक से जाने तब महत् अर्थात ईश्वर में प्रवेश करे—इस सब की क्या आवश्यकता है? क्या ईश्वर को तत्त्वतः जाने बिना कोई ब्रह्म में लीन हो सकता है?

गीता के ही अनुसार ब्रह्म और ईश्वर एक ही हैं :

अक्षरं ब्रह्म परमं. (8-1)

(हे अर्जुन! परम अक्षर अर्थात जिस का कभी नाश न हो, ऐसा सच्चिदानंदघन परमात्मा तो ब्रह्म है.)

ऊपर के वर्णन में जो अंतर्विरोध है, वह सहज ही समझा जा सकता है.

9. ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति,
भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया. (18-6)
तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत,
तत्प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्. (18-62)

(हे अर्जुन! ईश्वर सब प्राणियों के हृदय में रहता है. वह माया के द्वारा सब प्राणियों को ऐसे घुमाता है, जैसे गोल चक्कर वाले चरखे पर बैठे लोगों को उस का चलाने वाला. सब प्रकार से उस ईश्वर की शरण में जाओ. उसी की कृपा से परम शांति एवं शाश्वत स्थान मिलेगा.)

सर्वव्यापक ईश्वर की शरण में जाने का उपदेश करने के तुरंत बाद ही कृष्ण अपनी भक्ति का आदेश देते हैं :

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु,
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे. (18-65)
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज,
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः. (18-66)

(हे अर्जुन! मुझ में मन लगा, मेरा भक्त बन, मेरे लिए यज्ञ कर, मुझे ही नमस्कार कर, ऐसा करने से तू मुझे ही प्राप्त होगा. मैं तुझ से सत्य कह रहा हूं. तू मेरा प्रिय है. सब धर्मों को छोड़ कर एकमात्र मेरी शरण में आ. मैं तुझे सभी पापों से छुड़ा दूंगा. शोक मत कर.)

कृष्ण की इन परस्पर विरोधी बातों से अर्जुन तंग आ गया होगा! गीता को योगशास्त्र कहा जाता है. उस में ऐसी भूलें क्षम्य नहीं हो सकतीं. गीता यदि भगवान कृष्ण की रचना है तो ये परस्परविरोधी बातें उन की सर्वज्ञता पर आंच लगाती हैं. यदि इसे महर्षि व्यास की रचना मानें, तब भी ऐसी भूलों के लिए कोई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थान नहीं होना चाहिए, क्योंकि ऋषि को निर्भ्रांत कहा जाता है.

(गीता के श्लोकों का अर्थ गीता प्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित पुस्तक के आधार पर दिया गया है.)

सरिता का रचनात्मक आंदोलन

आप पढ़ेलिखे हैं, सोचविचार कर सकते हैं, कामधंधे में लगे हैं, अपने परिवार की जिम्मेदारी उठाए हैं, पर. .

आप देश के लिए क्या कर रहे हैं?

क्या देश का जिम्मा केवल भ्रष्ट राजनीतिबाजों का है?

आप पूछ सकते हैं—मैं क्या करूं?

आप अपना और अपने बच्चों का वर्तमान और भविष्य भ्रष्ट राजनीतिबाजों के हाथों सौंपने के बजाए इतना तो कर ही सकते हैं :

● जो भी काम आप के जिम्मे हो, उसे पूरा करें. अगर आप अपना काम पूरी लगन से करते हैं तो स्वयं अपनी क्षमता बढ़ा रहे हैं, अपनी उन्नति कर रहे हैं, चाहे उस का पूरा पैसा मिले या नहीं. आज हर क्षेत्र में कर्मनिष्ठ व्यक्ति की बहुत मांग है. अगर वर्तमान संस्था में आप को अपनी मेहनत का पूरा मुआवजा नहीं मिलता तो दूसरी संस्था देगी.

● न अन्याय सहें, न अन्याय करें. आप समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई हैं. समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है कि उस की हर इकाई अन्याय के विरुद्ध हो.

● अपनी गली, महल्ले, नगर के प्रबंध में दिलचस्पी लें. उसे दूसरों के भरोसे न छोड़ दें. कुप्रबंध और कुव्यवस्था के विरुद्ध संबंधित अधिकारियों को पत्र लिखते रहें. हो सकता है, आप के दोचार पत्रों का कोई असर न हो, पर वे आप की पूर्ण अवहेलना नहीं कर सकते. स्थानीय दैनिक पत्रों के संपादकों को भी पत्र लिखें. (वे स्थानीय समस्याओं से संबंधित पत्रों की प्रतीक्षा में रहते हैं) अपने क्षेत्र के निगम सदस्य, विधायक या संसदसदस्य को भी पत्र लिखें और उन से महल्ले के व्यक्तियों के साथ मिलते रहें. कल इन्हें आप के पास ही वोट लेने आना है. इस बात का फायदा उठाएं और जब तक दुर्व्यवस्था ठीक न हो जाए चैन से न बैठें.

● अपना फालतू समय किसी स्थानीय समाजसेवी संस्था में लगाएं—पुस्तकालय, स्कूल, चिकित्सालय सभी जगह निःस्वार्थी व्यक्तियों की आवश्यकता है. असंतुष्ट हो कर बैठे रहने से न आप बदल सकेंगे, न समाज, न देश.

● रोजीरोटी का प्रबंध तो भिखारी, आवारा पशु और गली के कुत्ते भी कर लेते हैं, पर आप पढ़ेलिखे हैं, सोचविचार कर सकते हैं, कामधंधे में लगे हैं, अपने परिवार की जिम्मेदारी उठाए हैं, इसी लिए यह आवश्यक है कि आप अपने आप से पूछें कि—

आप देश के लिए क्या कर रहे हैं?

दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गायत्री मंत्र

सुरेंद्रकुमार शर्मा 'अज्ञात'

क्या सचमुच उस में कोई ऐसी शक्ति है?

गायत्री मंत्र हिंदुओं की नसों में खून के साथ ही हरकत करता है. यह मंत्र ऋग्वेद (3-62-10) और यजुर्वेद (36-3) में उपलब्ध है. इस का शास्त्रीय नाम 'सावित्री' है. अज्ञात अतीत से इसे 'कामधेनु माना जाता रहा है. कोई भी मनोकामना पूरी करनी हो, व्यावसायिक पुरोहित एक विशेष संख्या तक इस की पुनः पुनः आवृत्ति का परामर्श देगा. कभी तो यह संख्या एक हजार तक रह जाती है और कभीकभी 51 लाख तक पहुंच जाती है.

क्या यह मंत्र कोई शक्ति है?

वैसे तो यह मंत्र शुरू से ही हिंदुओं को परम प्रिय रहा है, परंतु पिछली शताब्दी से इस का जोरदार प्रचार है. पहले यह स्वामी दयानंद सरस्वती ने किया, बाद में लाखों की संख्या में विद्यमान उन के अनुयायियों--आर्य समाजियों--ने. आज भी आर्य समाजी संन्यासी गायत्री मंत्र पर सप्ताह भर तक व्याख्यान देते देखे जा सकते हैं, परंतु उन के वक्तव्य का मंत्र के साथ क्या संबंध है, इस का संभवतः स्पष्टतः उन्हें भी ज्ञान न हो. उन के व्याख्यान अपने सारे अध्ययन को गायत्री मंत्र की ओट में बघारने के सिवा और कुछ नहीं होते हैं.

गायत्री मंत्र का माहात्म्य दताते हुए जमीनआसमान के कुलावे मिलाए जाते हैं. बच्चे के जन्म जैसे शुभ कर्म से नवयुवक की मृत्यु जैसे अशुभ कर्म तक में इस मंत्र को झोंक दिया जाता है.

सन 1964 की बात है. मैं उन दिनों 'प्रभाकर' का छात्र था. एक युवा संन्यासी हमारे शहर के मठ में आया. संयोगवश वह भी उन दिनों 'प्रभाकर' की परीक्षा की तैयारी कर रहा था. एक दिन बातों ही बातों में मैं ने 'प्रभाकर' की कठिनाई और परीक्षा में सफल होने के विषय में आशंका प्रकट की. वह बोल उठा, पढ़ने की और डरने की क्या जरूरत है? 12 हजार गायत्री मंत्र का जाप कर के हवन कर दो, विद्या तुम्हारे आगेपीछे घूमेगी. हम तो किसी दिन ऐसा ही करेंगे. 'प्रभाकर' हमारे सामने क्या है?

पता नहीं बाद में उस ने ऐसा किया या नहीं और वह पास हुआ या नहीं, परंतु यदि मैं उस के पीछे लग जाता तो निश्चित है कि मैं तो कम से कम पास न हो पाता.

कुछ भी हो, वह संस्कृत और हिंदी अच्छी तरह जानता था और साधारण आदमी पर एकाध संस्कृत का श्लोक बोल कर प्रभाव डाल देता था. आज सोचता हूं कि उस संन्यासी ने न जाने कितने लोगों को गायत्री मंत्र की अफीम से अकर्मण्य बनाया और अंधविश्वास में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डाल कर जीवन में असफल और मूर्ख बनाया होगा!

हमारे शास्त्रों--पुराणों, गृह्य सूत्रों और श्रौतसूत्रों--में गायत्री मंत्र के विषय में बहुत प्रशंसात्मक वचन लिखे गए हैं. उन्हें यदि यहां उद्धृत करना चाहें तो एक लघु पुस्तिका ही बन जाएगी. अतः हम यहां एक ही पुस्तक से उद्धरण देंगे जो आर्य समाजियों और सनातन धर्मियों की समान रूप से श्रद्धा की पात्र है. वह पुस्तक है--मानव धर्मशास्त्र अर्थात मनुस्मृति.

गायत्री मंत्र इस प्रकार है :

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धी महि. धियो यो नः प्रचोदयात्.

मंत्र जाप : सारे कष्ट साफ

इस के विषय में इस पुस्तक में लिखा है : ब्रह्मा ने ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद से 'भूः, भुवः, स्वः' ये तीन व्याहृतियां निकालीं (76). यदि विप्र इन तीनों व्याहृतियों पूर्वक प्रातःसायं गायत्री का जाप करे तो उसे तीन वेद पढ़ने के समान पुण्य प्राप्त होता है (78). यदि द्विज तीनों व्याहृतियों सहित गायत्री का ग्राम के बाहर, नदी तीर पर अथवा वन में एक हजार बार जाप करे तो वह बड़े से बड़े पाप से उसी प्रकार मुक्त हो जाता है जैसे सर्प केंचुली उतार देता है (79). जो संध्या समय इस का जाप नहीं करता, वह चाहे शेष धार्मिक कृत्य, हवनादि क्यों न करता हो, निंदा का पात्र बनता है (80). गायत्री को ब्रह्मा अथवा वेद का मुख समझना चाहिए (81). जो तीन वर्ष तक सायंप्रातः गायत्री का जाप करता है, वह ब्रह्म को जान लेता है, वायु की तरह कामचारी बन जाता है (संकल्प मात्र से जहां जाना चाहे, जा सकता है) और नृत्यूपरांत ब्रह्म ही बन जाता है अर्थात मर कर परमात्मा बन जाता है (82). गायत्री से बढ़ कर और कोई मंत्र नहीं है (83). (मनुस्मृति, दूसरा अध्याय.)

इस स्तोत्र से स्पष्ट है कि गायत्री ऐसी क्लोरीन गैस है, ऐसा ब्लीचिंग पाउडर है कि इस से बड़े से बड़े पाप को भी खुर्दबुर्द किया जा सकता है. इस के जाप से वेदों को बिना पढ़े ही उन के पढ़ने से प्राप्त होने वाला पुण्य (?) प्राप्त हो जाता है और वायुयान, हेलीकाप्टर, राकेट आदि के बिना ही जहां दिल चाहे, वहां पहुंचा जा सकता है. तभी तो सुनते हैं कि हमारे पूर्वज चंद्रमा पर पहले ही जा चुके हैं. आज के वैज्ञानिक तो 'कलियुगी' और 'मूर्ख' हैं, जो प्रयोगशालाओं में दिनरात एक कर के और करोड़ों रुपए खर्च कर के वैज्ञानिक यंत्र बनाते हैं. चुपचाप गायत्री मंत्र का जाप और हवन शुरू कर दें, सब ठीक हो जाएगा और हमारे पूर्वजों के समान उन्नति कर जाएंगे.

जब किसी का पढ़ने में दिमाग न चलता हो, किसी की संतान चतुर न हो, किसी नए काम में सफलता प्राप्त करनी हो, अगले लोक में 'सीट बुक' करवानी हो, परमेश्वर का सारूप्य प्राप्त करना हो, विद्या और बुद्धि में अग्रसर होना हो--सब के लिए--गायत्री मंत्र के गायन को रामबाण कह दिया जाता है. इसी के द्वारा हवन करने पर बेटा जन्मजात कवि होता है और इसी की अनुकंपा से प्राचीन आर्यों के पद्यसंग्रह--ऋग्वेद--को पढ़ने और समझने का बल मिलता है, इसी के बारबार गनगुनाने से द्विजों का धर्म अक्षुण्ण रहता है, इसी से ब्राह्मण में 'ब्रह्मवर्चस्' और क्षत्रिय में क्षात्र तेज आता है. इस लोक में ही नहीं, परलोक में भी सुख, धन्यधान्य और मनोकामनाओं की पूर्ति होती है.

"सौ बार गायत्री मंत्र का जप करने से दिन के किए पाप नष्ट हो जाते हैं. 10 हजार जप करने से सब पाप स्वाहा! एक लाख जप करने से सोने की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चोरी करने वाला, ब्रह्महत्यारा, गुरु की पत्नी से व्यभिचार करने वाला, शराबी सब शुद्ध हो जाते हैं. किसी को मारना हो तो घी की आहुतियां देता हुआ गायत्री मंत्र जपे. धन की कामना वाला कमलों की आहुतियां देता हुआ गायत्री जपे और सोने की कामना वाला बेल के फलों की आहुतियां देता हुआ. ब्रह्मतेज की कामना वाला दूध की आहुतियां दे और ध्यानपूर्वक घी मिले तिलों को आग में जलाए. गायत्री नरक में गिरे हुओं को बचाने वाला है. मर कर गायत्री जापक स्वर्ग को प्राप्त होता है." (शंखस्मृति, अध्याय 12.)

"यदि एक ही समय व्यक्ति बहुत से पाप कर बैठे तो उसे 10 हजार गायत्री का जाप करना चाहिए. उस के सब पाप नष्ट हो जाएंगे." (पराशर स्मृति 11-56.)

तथाकथित जादू की पुड़िया

गायत्री मंत्र न हुआ, जादू की पुड़िया हुई! प्रत्येक श्रमसाध्य और प्रयत्नपूर्वक सिद्ध होने वाले काम को करने के लिए 24 अक्षरों के तिपाए मंत्र का प्रचार करने वाले धूर्तों ने अपना आचार्यत्व तो बना लिया, जप करने की फीस ले कर अपनी जीविका चलाने का मार्ग तो आविष्कृत कर लिया, परंतु भारत की सहज विश्वासी, धर्मभीरु तथा परमात्मा पर डोरी फेंक कर चलने वाली कोटि-कोटि जनता में आलस्य, अकर्मण्यता और 'शार्ट कट' ढूंढने की दूरगामी प्रभाव डालने वाली, संक्रामक महामारी के कीटाणु संचारित कर दिए, जिस के दुष्परिणामस्वरूप उस में नियतिवाद और भाग्यवाद जैसे सत्यानाशी एवं आत्म-प्रवंचक सिद्धांतों के नासूर फूटे और शताब्दियों तक उसे पराधीनता एवं दासता के युग (जुए) तले आर्थिक और बौद्धिक, शारीरिक और मानसिक, सामाजिक और वैयक्तिक तथा धार्मिक और राजनीतिक शोषण का शिकार होना पड़ा. मानवता के दरबार में घोर अपराध करने वाले इन स्वार्थी शेख-चिल्लियों, आंख के अंधों, पर गांठ के पूरों को परमात्मा ने (यदि वह कोई है) अवश्य उन कुंभीपाक आदि 21 नरकों में (यदि उन का कोई अस्तित्व है) गिराया होगा जिन का हमें गरुड़ पुराण आदि से पता चलता है. भारत के इतिहास को जानने वाली तथा आने वाली पीढ़ियां इन्हें कभी माफ नहीं कर सकतीं.

इस मंत्र में क्या है? इस का अर्थ क्या है? यह सब जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है क्योंकि इस की हवा जो इतनी बांधी जाती है. पुराने विद्वान भाष्यकारों से ले कर आजकल के व्यावसायिक पुरोहितों तक ने इस का अर्थ किया है, क्योंकि हर एक को पहले किए हुए अर्थ असंतोषजनक प्रतीत हुए. हम आधुनिक अर्थकर्त्ताओं को ही यहां उद्धृत करेंगे. उन्होंने पुराने भाष्यकारों की सब गलतियां ठीक कर के बिलकुल सही अर्थ करने का दावा किया है. सब से पहले हम वेदों के उत्कट प्रचारक स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा किया हुआ अर्थ उद्धृत करते हैं. उन्होंने वेदमंत्रों को मोम की नाक समझ कर सर्वत्र अपने अनुसार ठीक अर्थ करने का उपक्रम किया था. उन के द्वारा किया अर्थ : "हे मनुष्यो! जैसे हम लोग कर्मकांड की विद्या, उपासना की विद्या और ज्ञानकांड की विद्या को संग्रहपूर्वक पढ़ के, जो हमारी धारणावती बुद्धियों को प्रेरणा करे, उस कामना के योग्य समस्त ऐश्वर्य के देने वाले परमेश्वर के उस इंद्रियों से न ग्रहण करने योग्य परोक्ष सब दुखों के नाशक तेजस्वरूप का ध्यान करें, वैसे तुम लोग भी इस का ध्यान करो.' (यजुर्वेदभाष्य, पृ. 1120.)

स्वामी दयानंद के अनुसार परमात्मा लोगों को उपदेश देता है कि जैसे मैं दुखों के नाशक परमेश्वर का ध्यान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करता हूं, वैसे तुम भी करो. कैसा परमात्मा है जिसे स्वयमपि किसी दुःख-नाशक का ध्यान करना पड़ता है? इस अर्थ को पढ़ कर पता चलता है कि यह परमात्मा अपना उदाहरण दे कर मनुष्यों को उपदेश देता है कि तुम भी उसी का ध्यान करो, जिस का मैं धरता हूं. पता नहीं इस मंत्र की हजार बार या लाख बार की गई आवृत्ति से कैसे वह कुछ हो जाएगा जो गायत्री माहात्म्य में लिखा है?

अब एक दूसरे चतुर्वेद भाष्यकर विद्वान का अर्थ देखिए: "सत् चित् आनंद स्वरूप जगदुत्पादक ईश्वर के उस श्रेष्ठ तेज का हम सब ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को विशेष प्रेरणा करे अथवा करता है." (श्रीपाद दामोदर सातवलेकर कृत 'वेदामृत', पृ. 438).

बौद्धिक दीवालियापन

इस अर्थ को पढ़ कर भी मंत्र के जाप का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता. उस से होने वाले पुण्यों और भौतिक विजयों की सत्यता का खयाल करना तो नितांत मूर्खता होगी. यदि कोई अंध-श्रद्धालु इस मंत्र का दो लाख बार भी जाप करता रहे, तो हमें तो समझ नहीं आता कि कैसे इस से उस को ब्रह्म (?) का ज्ञान हो जाएगा, उस का बड़े से बड़ा पाप कट जाएगा. उस में हवा सी निर्बाध गति आ जाएगी और बिना पुस्तक पढ़े ही परीक्षा पास कर लेगा. यदि ऐसे ही होता तो भारत में हजारों वर्षों से गायत्री का जाप करने वाले सब बृहस्पति, अरस्तु, सुकरात और लाला हरदयाल ही पैदा होते, न कि घोर अंधविश्वासी और अंगूठा लगाने वाले अनपढ़.

मेरे एक बुजुर्ग दोस्त हैं, बड़े श्रद्धालु किस्म के. एक दिन सायं भ्रमण के समय मिल गए. बातों ही बातों में बोले, "आजकल मैं प्रातः चार बजे उठ कर कम से कम दस मालाएं गायत्री मंत्र की जपता हूं." वह मित्र कुछ ही क्षण पहले जब मैं ने उन से पूछा था कि आजकल कौन सी पुस्तक पढ़ते हैं तो उन्होंने उत्तर दिया था, "लाला हरदयाल, एम. ए. की 'हिंट्स फार सैल्फ कल्चर' " मैं ने गायत्री वाला वाक्य सुन कर कहा, सेठीजी, "हिंट्स फार सैल्फ कल्चर' पढ़ने वाला यदि गायत्री मंत्र का जाप करता है तो मेरे खयाल में उसे वह पुस्तक पढ़नी ही नहीं आती. क्या आप ने इस पुस्तक के पृष्ठ 109 और 111 कभी नहीं पढ़े जो एक ही समय आस्तिक और नास्तिक का अभिनय कर रहे हों?" वह बोले, "मैं इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द का अर्थ जानता हूं."

इस घटना को यहां उद्धृत करने का मेरा अभिप्राय यही दर्शाना है कि कैसे पढ़ेलिखों की अक्ल भी इस गायत्री रूपी गाय (कामधेनु?) ने चर ली है. वे शब्दों के अर्थ तो जानते हैं परंतु पुस्तक को हृदयंगम नहीं कर सकते. जिन लोगों ने यह पुस्तक पढ़ी है, वे जानते हैं कि इसे पढ़ कर आदमी बुद्धिवादी हुए बिना नहीं रह सकता और बुद्धिवाद और आस्तिकता (गायत्री जाप) का ईंटघड़े का वैर है. परंतु वर्षों से गायत्री जपने वाले इतने बौद्धिक दीवालिए हो गए हैं कि बुद्धिवाद और अंधविश्वास में भी अंतर नहीं देख सकते. यह है गायत्री मंत्र का प्रत्यक्ष माहात्म्य.

वेदों के मर्मज्ञ ए. ए. मेक्डानेल ने इस मंत्र का अर्थ करते हुए लिखा है कि "हम सविता देवता के विशिष्ट तेज को प्राप्त करें और वह हमारे विचारों को प्रेरित करें." (हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर, पृष्ठ 75.) इस अर्थ से भी इस मंत्र के जाप का वृथापन प्रकट होता है.

इस मंत्र का महत्त्व प्रतिपादित कर के अनुष्ठान करने की सम्मति देने वालों से जब अभीष्ठ फल प्राप्त न होने पर

इस मंत्र की शक्ति पर 'कलियुगी' प्रभाव की बात की जाती है, जब उन से इस की शक्ति के कुंठित हो जाने और फल प्राप्त न करवाने के विषय पर चर्चा छेड़ी जाती है, वे बड़ी बेहयाई और इतमीनान से फरमाते हैं, "आप ने श्रद्धापूर्वक और पूर्ण विधिविधान से अनुष्ठान नहीं किया, अतः तुम्हें पूर्ण फल कैसे प्राप्त हो जाता?" शायद ऐसे लोगों को ही लक्ष्य कर के बुद्धिवादियों के आचार्य चार्वाक ने कहा था : "एक संदिग्धयोस्तावद् भावि तत्रेष्टजन्मनि, हेतूनाहुः स्वमंत्रादीन सांगानन्यथा विटाः" (नैषध महाकाव्य, 17-63) अर्थात संदेहयुक्त दो कार्यों में से एक अवश्य ही होता है, अर्थात किसी स्त्री को जब बच्चा पैदा होगा, वह या तो लड़का होगा या फिर लड़की. उन में से यदि इष्ट कार्य हो जाए तो धूर्त लोग उसे अपने मंत्र का प्रभाव बताते हैं और यदि इष्ट कार्य न हो तो कहते हैं, "तुम ने अमुक वस्तु का प्रयोग नहीं किया." वह अन्यत्र लिखता है : "इसी लिए तो आचार्य बृहस्पति कह गए हैं कि कर्मकांड--जप, तप, हवन, आदि--सब घनात्मक बुद्धि से रहित लोगों की रोजी का तरीका है." (नैषध महाकाव्य, 17-38)

वास्तविक नाम?

इस मंत्र का नाम, जैसा कि मैक्डानेल ने लिखा है, देवता के लिहाज से 'सावित्री' है और छंद के अनुसार 'गायत्री.' वेदों में गायत्री, उष्णिक् अनुष्टुभ्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुभ्, और जगती--ये सात छंद मुख्यतया प्रयुक्त हुए हैं. इन में से भी गायत्री छंद ऋग्वेद में बहुत प्रयुक्त हुआ है. ऋग्वेद का लगभग एक चौथाई भाग (2450 मंत्र) इसी छंद में रचे गए हैं. परंतु उत्तर वैदिक काल में यह बिलकुल बहिष्कृत सा है. इस का स्थान अनुष्टुभ् छंद ने ले लिया था. संभवत. ऋग्वेद बहुप्रयुक्त होने के कारण लोगों के मुंह में 'गायत्री' चढ़ गया और गायत्री छंद में रचित आलोच्य मंत्र कुछ एक को प्रिय लगा. उन के अनुकरण पर दूसरों ने भी इसे प्रिय कहना शुरू कर दिया. बाद में अकर्मण्यता के युग में, जब कि कल्पित दैवी शक्तियों की प्रसन्नता प्राप्त करना ही सब कुछ बन गया था. इस 'प्रिय' मंत्र की प्रशंसा में वागाडंबर रच दिया गया. उत्तरवर्ती संततियों ने उस के अनुकरण पर श्रद्धावश और गर्दगुबार इस पर चढ़ा दिया ताकि वास्तविकता का कहीं पता न चल जाए.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पता नहीं, शुद्धतावादी हिंदू इस मंत्र को ही गायत्री क्यों कहते हैं जब कि छंद के अनुसार अकेले ऋग्वेद में ही 2450 गायत्री मंत्र हैं. शेष सब को छोड़ कर इसी एक को टांग क्यों पकड़ रखी गई है? क्या शेष 2449 मंत्र निरर्थक और निर्बल हैं? क्या उन के जाप से कोई कल्पित पुण्य नहीं मिलता? क्या वे अपवित्र हैं? क्या उन का सत्त्व क्षीण हो चुका है? जिस मंत्र की दुम पकड़ रखी गई है, वह वास्तव में शुद्ध गायत्री छंद में भी नहीं है. गायत्री छंद का लक्षण है : तीन पादों वाला वह छंद जिस के प्रत्येक पाद में आठआठ अक्षर हों. उदाहरणार्थ ऋग्वेद (8-67-20) का निम्नलिखित मंत्र देखिए :

"मा नो हेतिर्विवस्वत. आदित्या कृत्रिमा शरुः. पुरा नु जरसो वधीत."

इस के हर पाद में आठआठ वर्ण हैं, और कुल 24. छंदःशास्त्र में विधान है कि हलंत और आधे वर्ण गणना में अंतर्भुक्त नहीं किए जाते अतः स्, त्, त् आदि छोड़ दिए जाते हैं.

हमारा आलोच्य मंत्र ऋग्वेद (3-62-10) में इस प्रकार आता है : तत्सवितुर्वरेण्यं (7), भर्गो देवस्य धी महि (8), धियो यो नः प्रचोदयात (8). इस के अंतिम दो पादों में तो आठआठ वर्ण हैं, परंतु प्रथम पाद में एक वर्ण कम है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अतः इसे शुद्ध गायत्री छंद नहीं कह सकते. यह लंगड़ा छंद है. शायद मंत्र के लंगड़ा होने के कारण ही इस का जाप करने वाले हवा में न उड़ सके, उन्हें विद्या में अप्रयास सफलता न मिल सकी. लंगड़ा तो स्वयं ही कठिनाई से चलता है, दूसरों को हवा में कैसे उड़ा दे? उसे तो विद्यालय जाने में स्वयं ही कष्ट उठाना पड़ता है, दूसरों को बिना पुस्तकें पढ़े ही परीक्षा में कैसे उत्तीर्ण होने देगा?

यजुर्वेद (36-3) में यह मंत्र इस प्रकार है: "भूर्भुवः स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यं (11), भर्गो देवस्य धी महि (8), धियो यो नः प्रचोदयात् (8). इस में भी अंतिम दो पाद पहले लिखे ऋग्वेद के मंत्र की तरह ठीक हैं, परंतु पहले पाद में उलटी गंगा बह रही है. उस में एक वर्ण कम था तो इस में तीन वर्ण फालतू हैं. शुद्ध ही नहीं होना! आखिर परमात्मा द्वारा प्रदत्त वेद जो हुए!

वैसे भारतीय परंपरा अधिक अंगों वाले और कम अंगों वाले, दोनों को ही बुरा एवं अनिष्टकर मानती है. मनु आदि स्मृतिकारों ने तो यहां तक लिखा है कि ऐसी लड़की के साथ विवाह नहीं करना चाहिए जिस के अंग अधिक हों अर्थात छः उंगलियां आदि हों. (मनुस्मृति 8/8) (वे अविवाहित रह कर मनु की जान को रोती रहें.) परंतु परमात्मा द्वारा आविष्कृत एवं साक्षात्तया प्रदत्त वेदों में किसी छंद में एक वर्ण कम है तो किसी में एक नहीं, तीन वर्ण फालतू हैं.

अपूर्ण मंत्र

जहां तक हमारी बुद्धि काम करती है. ऋग्वेदीय मंत्र का नाम गायत्री नहीं, 'निचृद् गायत्री' होगा, क्योंकि 23 वर्णों वाले छंद का यही नाम छंद ग्रंथों में है. पर मुसीबत तो दूसरे अर्थात यजुर्वेदीय मंत्र के छंद पर विचारविमर्श करते हुए आती है, छंदःशास्त्र हमें एक या दो वर्ण अधिक होने वाले छंद का नामकरण करने का उपाय तो बताता है, पर तीन वर्ण अधिक वाले का नहीं. वैदिक प्रेस, अजमेर में छपी यजुर्वेद संहिता (सन 1927) के पृ. 151 पर इस मंत्र के छंद के विषय में जो सांकेतिक रूप में लिखा गया है, वही उसी प्रेस से छपे स्वामी दयानंद सरस्वती कृत 'यजुर्वेदभाषाभाष्य' (सन 1929) के पृष्ठ 1120 पर स्पष्ट कर के लिखा गया है. स्वामी दयानंद ने लिखा है 'भूर्भुवः स्वः--इस में 'देवी बृहती' छंद है और तत्सवितु' इत्यादि में 'निचृद् गायत्री' अर्थात लंगड़ा छंद.

इस से जहां हमारी इस का नामकरण करने की मुशकिल हल हुई है, वहां हमें यह भी पता चलता है कि मंत्रकार में, वह चाहे ईश्वर (?) हो या वैदिक काल का कोई कवि, इतना सामर्थ्य नहीं था कि वह तीन पाद का एक शुद्ध छंद रच सके. यदि वेद ईश्वर की रचना है, तब तो यह आक्षेप और भी गंभीर हो जाता है, क्योंकि इतनी बड़ी शक्ति वाले कल्पित परमात्मा का वर्णसंकर (दोगला) छंद बनाना हर एक को अखरता है. ऋग्वेद के मंत्र में भी परमात्मा के छंद-ज्ञान और छंदनिर्माण सामर्थ्य का दीवाला निकल गया है. यदि छंदनिर्माण सामर्थ्य के लिहाज से देखा जाए तो तथाकथित परमात्मा से तो 'पृथ्वीराज रासो' का कवि चंदबरदाई और 'रामचंद्रिका' का लेखक कवि केशवदास बहुत ही ज्यादा समर्थ सिद्ध होते हैं.

इस प्रकार हम देखते हैं कि (1) गायत्री आदि किसी मंत्र का जाप हमें अभीष्ट किनारे पर नहीं लगा सकता. (2) गायत्री छंद दो अनभीष्ट रूपों में मिलता है--एक लंगड़ा, दूसरा अधिकांगी या दोगला और (3) इसी एक को गायत्री कहना, जो कि वास्तव में शुद्ध गायत्री है ही नहीं और ऋग्वेद के शेष 2449 गायत्री छंद में रचित मंत्रों को छोड़ देना मूर्खतापूर्ण अन्याय है. ●

आलोचनाओं व आपत्तियों का उत्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरिता के दिसंबर 1973 के प्रथमांक में प्रकाशित मेरे लेख 'गायत्री मंत्र' पर विभिन्न शिविरों से तरहतरह की प्रतिक्रियाएं हुईं, लेकिन खेद है कि किसी तथ्य तक पहुंचने के लिए जिस स्वस्थ प्रतिक्रिया की अपेक्षा की जाती है, उस का सर्वत्र अभाव रहा. कुछ एक सांप्रदायिक पत्रिकाओं ने बहुत उलझनदार ढंग से टिप्पणियां की हैं जिन से उन के प्रतिपाद्य विषय अस्पष्ट ही रह गए हैं. कुछ लोगों ने सरिता के द्वारा या सीधे ही मुझे पत्र लिखे हैं. इन में टेलिप्रिंटरों के युग में सरकंडे की कलम से लिखे गए कुछ एक पत्र भी हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि उन के लेखक पूर्णतः शुद्धतावादी हिंदू हैं.

कुछ एक सम्मानित भिखारी उर्फ परान्नभोजी धर्म के एकाधिकारी अपने गुरुडम और रोजीरोटी का खतरा समझ दुर्वासा का वेश धारण कर के भी आए. इधर धर्म के कुछ स्थानीय स्वयंभू ठेकेदारों ने पूरी तरह व्यक्तिगत द्वेष से प्रेरित हो कर 'धर्मरक्षा' के लिए मेरे विरुद्ध जो नीच से नीच शब्द प्रयुक्त कर और ओछे से ओछा हथकंडा अपना कर अपने वास्तविक भैरव एवं बीभत्स रूप का परिचय दिया, वह एक अपनी किस्म का ही अप्रिय अनुभव है.

इन विभिन्न प्रतिक्रियाओं में प्रायः वे लेख के प्रमुख अंशों की उपेक्षा कर गए हैं. लेख में तीन बातें प्रधान थीं––(1) गायत्री मंत्र की पुनःपुनः आवृत्ति से वे फल प्राप्त नहीं हो सकते जो कि मनुस्मृति, शंखस्मृति और पराशरस्मृति आदि धर्मग्रंथों में लिखे गए हैं, (2) गायत्री मंत्र शुद्ध गायत्री छंद में नहीं है—एक जगह लंगड़ा छंद है तो दूसरी जगह दोगला और (3) केवल इसी विकृत छंद को ही, 2449 अन्य शुद्ध गायत्री छंदों की विद्यमानता में क्यों पकड़ रखा गया?

हमारे कुछ एक अप्रौढ़ आलोचक इन बातों की ओर ध्यान न दे कर इस बात पर दृष्टि केंद्रित करते गए हैं कि लेख में स्वामी दयानंद सरस्वती और आर्यसमाजी संन्यासियों पर व्यंग्य किए गए हैं. प्रतीत होता है कि ये अप्रौढ़ आलोचक गायत्री मंत्र का जाप नहीं करते अन्यथा सविता देवता इन को कम से कम इतनी तो बुद्धि देता ही कि वे इस छोटे से लेख को पढ़ कर यह समझ सकते कि लेख में प्रमुखांश क्या हैं.

हम ने लेख में स्वामी दयानंद के विषय में इतना ही लिखा है कि "पिछली शताब्दी में उन्होंने गायत्री मंत्र का बहुत ज्यादा प्रचार किया." आर्यसमाजी संन्यासियों के बारे में सिर्फ यह लिखा गया कि "वे सप्ताहसप्ताह तक गायत्री मंत्र पर भाषण देते हैं और इधरउधर की सब कथा-कहानियां सुनाते रहते हैं जिन का कि गायत्री मंत्र से प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता."

हमारे अप्रौढ़ आलोचक इन तथ्यों में भी आक्षेप योग्य स्थल ढूंढ़ने का प्रयत्न करते रहे हैं. इन्हें चाहिए कि ये स्मृतियों में लिखे विधानानुसार गायत्री का जाप करें ताकि ईश्वर (?) इन्हें जरा सी बुद्धि दे, जिस से ये यह जानने के योग्य तो हो जाएं कि लेख के प्रमुखांश क्या हैं और ऐतिहासिक तथ्य क्या है.

अब हम लेख के प्रमुखांशों को लेते हैं. मनुस्मृति, शंखस्मृति, और पराशरस्मृति आदि धर्मग्रंथों में गायत्री मंत्र के जाप के फल बताते हुए अतिशयोक्ति का आश्रय लिया गया है. इस में नरहत्या, सुवर्ण चोरी और गुरुपत्नीगमन जैसे जघन्य अपराधों से मुक्ति के लिए कुछ हजार बार गायत्री मंत्र की आवृत्ति का विधान किया गया है. इस तरह के विधान अपराधों की भयंकरता और गंभीरता को कम करते हुए व्यक्ति को अप्रत्यक्ष रूप से सुझाते हैं कि 'नरहत्या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर लो, दस हजार बार गायत्री जप लेना, तुम दोषमुक्त हो जाओगे। इस तरह के विधानों को भी बुद्धिमान मान्य नहीं ठहरा सकता. अभी तक ऐसे किसी फार्मूले का आविष्कार नहीं हुआ है जिस से यह सिद्ध किया जा सके कि नरहत्या करने का अपराध दस हजार बार गायत्री मंत्र जपने से समाप्त हो सकता है.

दूसरे, इन धर्मग्रंथों में गायत्री जाप के फल बताते हुए यह भी लिखा है कि इस का जाप करने से बुद्धि, धनधान्य और कामाचार (संकल्प मात्र से जहां जाना चाहें, जा सकना) आदि की प्राप्ति होती है. कोई गायत्री का अनन्य भक्त चाहे तो इस से भी ज्यादा फलप्राप्ति की हसीन कल्पना कर के अपना दिल बहला सकता है.

जिन के मन और मस्तिष्क स्वस्थ हैं, वे जानते हैं कि केवल 'सविता देवता हमारी बुद्धियों को प्रेरणा दें' (धियो यो नः प्रचोदयात्) जपने से बुद्धि की प्राप्ति नहीं हो सकती. केवल 'रोटीरोटी' रटने से ही भूख नहीं मिट सकती. अगर 'रोटी-रोटी' रटने से ही भूख मिटती होती तो भारत की खाद्य समस्या कब की हल हो गई होती, न हमें अमरीका के आगे हाथ फैलाने होते और न ही रूस के आगे घुटने टेकने पड़ते!

कुछ लोगों ने आरोप लगाया है, 'आप का लेखन हमारी भावनाओं को पीड़ित करता है.' हमारा उन लोगों से नम्र निवेदन है कि उन की भावनाओं को ठेस पहुंचाना हमारा कदापि अभीष्ट नहीं रहा. हम ने केवल धर्मग्रंथों के वाक्यों को बुद्धि की कसौटी पर परखने की कोशिश की है ताकि सही और गलत का अंतर स्पष्ट किया जा सके. जो सत्य हो, जो बुद्धि-संगत हो, उस का आदर होना चाहिए और जो असत्य हो, बुद्धि विरुद्ध हो, अज्ञान की उपज हो, उसे निर्दयतापूर्वक छोड़ देना चाहिए, क्योंकि 'सत्यमेव जायते' (सदा सत्य की विजय होती है) एक सार्वभौमिक सिद्धांत है. सत्य तक पहुंचने के प्रयास में कहीं कुछ छोड़ना पड़ता है, कहीं कुछ रौंदना पड़ता है. इस स्वाभाविक और अनिवार्य प्रक्रिया को 'व्यक्तिगत भावना पर आघात' नहीं समझना चाहिए अपितु ऊंचे उठ कर सत्य के अन्वेषण में दत्तचित्त होना चाहिए.

लेख का दूसरा प्रमुखांश है, छंदगत अशुद्धता. हम ने छंदःशास्त्रीय दृष्टिकोण के अनुसार लिखा था कि ऋग्वेद में यह छंद लंगड़ा है अर्थात इस में 24 के स्थान पर 23 वर्ण हैं, अतः यह 'निचृद् गायत्री' छंद है, शुद्ध गायत्री छंद नहीं. यजुर्वेद में यह छंद दोगला है अर्थात दो भिन्न छंदों के मेल के कारण यह वर्णसंकर छंद है. इस पर हमारे एक स्वयंभू आचार्य लिखते हैं कि 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' में जो ण् आधा है, उसे पूरा मान लेना चाहिए, इस तरह 24 वर्ण हो जाएंगे.

हम पूछते हैं कि वह कौन सा छंदः-शास्त्रीय ग्रंथ है जो मध्य के आधे वर्ण को पूरा मानने का परामर्श देता है. छंदों का जरा सा ज्ञान रखने वाला प्रवेशिका का विद्यार्थी भी यह जानता है कि यदि आवश्यकता पड़े तो अंतिम हलंत को पूर्ण माना जा सकता है, न कि मध्य के वर्ण को. उन्होंने यह नहीं बताया कि 'त्' और 'र्' को भी 'त' और 'र' क्यों न मान लिया जाए.

एक दूसरे आचार्य ने लिखा है, "तत्सवितुर्वरेण्यम्' में ण्य में इ और अ का योग है, अतः यहां दो वर्ण हैं, एक नहीं. इस तरह 23 के स्थान पर 24 वर्ण हैं और छंद शुद्ध है." लगता है, आचार्यजी संधियों का खूब अभ्यास करते हैं और इसी झोंक में यह भी विस्मृत कर जाते हैं कि स्थल यण् संधि का है भी या नहीं. लगता है, वह बहुत वृद्ध हैं और वार्धक्य दोष से गायत्री जपने पर भी बुद्धि ठीक नहीं रही है. कितना अच्छा होता यदि वह अपने किसी संतुलित बुद्धि वाले छात्र से ही इस विषय पर कुछ सलाहमशवरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर लेते? यदि उस ने 'सिद्धांत कौमुदी' पढ़ी होती तो वह एकदम अपने मूर्ख गुरुजी को बता देता कि यहां यण् संधि नहीं है, प्रत्युत 'तद्धित प्रकरण' है. जैसे 'मान' शब्द से तद्धित प्रत्यय लग कर मान्य (मान करने योग्य) बनता है, वैसे ही 'वरेण' शब्द से तद्धित में 'वरेण्य' (वरने योग्य) बनता है. इस में न 'इ' है और न ही 'अ'.

वैदिक परंपरा इस छंद को किस रूप में लेती है, इस का ज्ञान प्राप्त कर लेना भी आवश्यक है. जिन लोगों ने विधिवत वेद पढ़े हैं, वे जानते हैं कि मूल वेदों में मंत्रों के ऊपर, जिस छंद में जो मंत्र रचा गया है, उस छंद का नाम अंकित होता है. वेदों का प्रकाशन बहुत सावधानीपूर्वक और अनेक पांडुलिपियों के प्रकाश में किया जाता है.

वैदिक प्रेस, अजमेर से मूल रूप में वेद छापे गए थे. प्रत्येक संहिता के ऊपर मोटे अक्षरों में लिखा गया था कि अनेक विद्वानों से अनेक पांडुलिपियों के मिलान के बाद बहुत सावधानीपूर्वक प्रूफ पढ़ कर इन्हें प्रकाशित किया है. यहां से छपे ऋग्वेद (संवत 1983 वि.) के पृष्ठ 197 पर स्पष्ट रूप से 'तत्सवितु' इत्यादि मंत्र का छंद 'निचद् गायत्री' लिखा हुआ है. वेद जब अपने बारे में खुद बोलते हैं कि अमुक छंद निचृद् है--लंगड़ा है, तब स्वयंभू आचार्यों का उसे, शब्दों से मनमाना हेरफेर कर के पूर्ण सिद्ध करना वैसे ही हास्यास्पद है जैसे कोई व्यक्ति स्वयं कह रहा हो कि 'मैं जीवित हूं,' लेकिन एक दूसरा, उस का 'हितैषी' कह रहा हो कि 'नहीं, तुम जीवित नहीं हो, तुम मृत हो.' पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि इन में प्रामाणिक कौन है.

लेख के दूसरे प्रमुखांश के उत्तरार्द्ध में हम ने यजुर्वेदीय मंत्र के दोगलापन का जिक्र किया था. प्रत्येक आलोचक बिना छुए ही छोड़ गया है. इस विषय में हम ने स्वामी दयानंद सरस्वती को अपने लेख में उद्धृत किया था. यहां हम वैदिक प्रेस, अजमेर से छपे मूल यजुर्वेद (सं. 1984 वि.) के पृष्ठ 151 को उद्धृत करना चाहते हैं. वहां लिखा है, "भूर्भुवः स्वः (देवी बृहती छंद), तत्सवितुः (निचृद् गायत्री छंद)" अर्थात यजुर्वेदीय छंद में देवी बृहती छंद और निचृद् गायत्री छंद का मिश्रण है. इस तरह स्पष्ट रूप से यह छंद वर्णसंकर अर्थात दोगला है.

अंत में हम ने लिखा था कि "2449 अन्य गायत्री छंद भी ऋग्वेद में हैं. उन का जाप न कर के इसी अधूरे छंद को क्यों जपा जाता है? क्या वे छंद निर्बल और सत्त्वहीन है?" इस के बारे में एक महानुभाव फरमाते हैं? "क्योंकि इस में बुद्धि मांगी गई है, यह श्रेष्ठ मंत्र है, गुरुमंत्र है." लगता है इन्होंने वेदों का स्वाध्याय नहीं किया, अन्यथा ऐसे उत्तरदायित्वहीन ढंग से ऐसा न फरमाते, क्योंकि वेदों में सैकड़ों मंत्र ऐसे हैं जिन में केवल बुद्धि के लिए प्रार्थना की गई है. वास्तव में यह मंत्र किन्हीं ठोस गुणों के आधार पर प्रसिद्ध नहीं हुआ बल्कि संयोगवश और आकस्मिक रूप में ही इस की प्रसिद्धि हो गई. किसी कुलवृद्ध को यह अच्छा लगा. उस के अनुकरण पर सारा कबीला इसे गुनगुनाने लगा. फिर इस कबीले के दासों और अन्य प्राणियों ने इसे अपना लिया और कालक्रम से यह उत्तरोत्तर विस्तृत भूखंड में फैल गया. आगे चल कर अंधे युगों में पुरोहित वर्ग ने इसे कल्पवृक्ष और कामधेनु के सदृश सामर्थ्यवान और गुणमय घोषित कर दिया ताकि इस के ब्याज से स्वार्थसिद्धि में सहयोग प्राप्त हो. इस तरह स्पष्ट है कि गायत्री मंत्र से (1) न तो किसी कथित फल की प्राप्ति हो सकती है, (2) न ही यह छंद शुद्ध है, और (3) न ही इस के प्रसिद्ध होने के पीछे कोई विशेष आधार है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरिता मुक्ता के रिप्रिंट्स सैट

सेट नं. 1 : प्राचीन हिंदू संस्कृति, शंबूक वध, अतीत का मोह, पुरोहितवाद, गौपूजा, हमारी धार्मिक सहिष्णुता, कृष्णनीति : हमारा नैतिक पतन, ज्ञान की कसौटी पर परलोकवाद, राम का अंतर्द्वंद्व, राम का अंतर्द्वंद्व : आलोचनाओं व आपत्तियों का उत्तर, भारत में संस्कृति का ब्राह्मण नियंत्रित विस्तार, हिंदू धर्म, संस्कृत, भारतीय नारी की धार्मिक यात्रा, कर्ण, भारतीय नारी की सामाजिक यात्रा, तुलसी और वेद, रामचरितमानस में ब्राह्मणशाही, युगोंयुगों से शोषित भारतीय नारी, भ्रष्टाचार, रामचरितमानस में नारी, सत्यनारायण व्रत कथा, क्या नास्तिक मूर्ख हैं? गांधीजी का बलिदान, यज्ञोपवीत, जंत्र तंत्र मंत्र, कर्मयोग, गरुड़ पुराण, ईश्वर, आत्मा और पाप, कितना महंगा धर्म, सरिता और हिंदू समाज.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 2 : कितना महंगा धर्म : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, कितना महंगा धर्म (निर्णय), राम कथा व सीता चरित्र. सरिता और हिंदू समाज, तुलसी साहित्य : अनुवादों की सफल नुमाइश के सिवा क्या है? तुलसी साहित्य : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, हिंदूओं के मंदिर कैसे हों? रावण, रामचरितमानस के अविश्वसनीय प्रसंग, रामचरितमानस के कुछ असंगत स्थल, श्रीकृष्ण, गीता : कर्मवाद की व्याख्या या कृष्ण का आत्म प्रचार, क्या कौमार्यरक्षा दकियानूसी है? कृष्ण और राधा, श्रीमद्भागवत, भागवत और भूगोल, समाजवाद बनाम स्वतंत्रता, कामायनी, हिंदू विवाह पद्धति, पुत्रेष्टि यज्ञ, तुलसीदास और हिंदू समाज, हिंदी साहित्य का गलत इतिहास, धनुषयज्ञ, कृष्ण और गोपियां, हमारे देव मंदिर, क्या समाजवाद अनिवार्य है? विवाह पूर्व यौन संबंध, श्रीकृष्ण : अपने जीवन की संध्या में, सताई गई नारी, कृष्ण और कुब्जा.

मूल्य 5 रुपए

सेट नं. 3 : सिपाही क्यों लड़ता है, प्रेम पत्र न लिखिए, डायरी न लिखिए, इसलाम और स्त्री, योगी अरविंद, गीता में अंतर्विरोध, गायत्री मंत्र, गायत्री मंत्र : आलोचना व आपत्तियों के उत्तर, ट्रेड यूनियन, संसद सदस्य श्री चादर वाला केस : मुकदमे की काररवाई, सेशन जज का निर्णय, उच्च न्यायालय का निर्णय, सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय, घाटे वाले बालाजी, आखिरत की अटकलें, हिंदी साहित्य की बपौती, भीष्म, मुसलिम विवाह, भगवान श्री रजनीचर, महाभारत की ऐतिहासिकता, महाभारत की ऐतिहासिकता : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर, रेंट कंट्रोल एक्ट एक विफल कानून, आप की लड़की प्रेम करती है, यूनियन, सौंदर्य प्रतियोगिता, वैज्ञानिक ज्ञान बनाम अध्यात्म ज्ञान, पूंजीपति, नियोग, सरिता और हिंदू समाज.

मूल्य 5 रुपए

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ट्रेड यूनियन

परमात्मा स्वरूप

भारतीय उद्योगों का अभिशाप

आपातकालीन स्थिति की घोषणा के बाद जब कम्यूनिस्टों ने थोड़ा हाथ-पांव हिलाने की कोशिश की, तभी सरकार नियंत्रित 'समाचार' ने इस पार्टी से संबंधित एक उच्च ट्रेड यूनियन के बारे में एक समाचार प्रसारित किया, जिस में बताया गया था कि उस मजदूर नेता ने अपनी बेटी के ब्याह में साठ हजार रुपए नकद तथा लाखों रुपए अन्यान्य तरीकों से खर्च किए और इन की प्राप्ति के स्रोत के बारे में न तो सरकार को कोई जानकारी दी, न ही कोई विवरण भरा.

इस समाचार का कम्यूनिस्टों ने आज तक खंडन नहीं किया. हां, लुकेछिपे वे इसे अपने को बदनाम करने की एक सरकारी चाल अवश्य बताते रहे.

सरकारी चाल के बारे में तो कुछ भी कह देना संभव है, क्योंकि तत्कालीन सरकार तो केवल चाल और प्रपंच के बल पर ही चलती थी. पर यदि कोई मजदूर नेता मजदूरों के चंदे के बल पर इस तरह उदारता से खर्च करे तो यह अपने आप में कम हैरतअंगेज बात नहीं है. आखिर इतना पैसा उस के पास इकट्ठा कैसे होता है, कहां से आता है? यह देखने और सोचने का विषय है.

जो भीतर पकता है

मेरा लगभग दसबारह वर्षों से बंबई की गिरणी कामगार यूनियन तथा दिल्ली की कपड़ा मजदूर एकता यूनियन से प्रत्यक्ष और अंतरंग संबंध होने के कारण 'जो भीतर पकता है' उसे देखने और जानने का अवसर मिला है. इसी प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर मैं कुछ ठोस और ज्वलंत घटनाओं एवं स्थितियों की ओर संकेत करना चाहूंगा.

घटना फरवरी 1970 की है. दिल्ली क्लाथ मिल तथा बिरला मिल के तमाम मजदूरों तथा उन की यूनियनों ने, जिन में भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी द्वारा समर्थित कपड़ा मजदूर एकता यूनियन, भा. क. पा. (मार्क्सवादी) का लाल झंडा, जनसंघ का मजदूर संघ एवं कांग्रेस की इंटक शामिल थीं, मिल कर मैनेजमेंट के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया. एक साथ इतनी सारी यूनियनों के एक होने पर जहां मिल के प्रबंधक घबरा उठे, वहां मजदूरों का साहस बुलंदी पर था. दिनरात पुरानी दिल्ली में इनकलाब जिंदाबाद के नारे लगने लगे.

मिल मालिकों से साठगांठ

इसी बीच एक चौंकाने वाली घटना यह घटी कि एक यूनियन के कार्यकर्ताओं ने (जिन्हें पुलिस रिपोर्ट में मार्क्सवादी कम्यूनिस्ट लिखाया गया) भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी (सी. पी. आई.) के एक उच्च नेता तथा आल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस की दिल्ली शाखा के अध्यक्ष पर उन के कार्यालयों में जा कर यह हल्ला मचाते हुए हमला किया कि रात को यह महाशय मज-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूरों से गद्दारी करने की कीमत मिल मालिकों से वसूल कर के अपनी यूनियन के कार्यकर्ताओं को काम पर लौटने की सलाह दे रहे थे.

ट्रेड यूनियन इतिहास में यह कोई विशेष घटना नहीं है, बल्कि पगपग पर इन नेताओं ने कपट, प्रपंच एवं छल से भरी ऐसी करतूतें की हैं कि उन सब का वर्णन सौसौ पोथों में भी नहीं किया जा सकता. आए दिन कोई न कोई मजदूर नेता बदनाम होता है, तब दूसरा नेता आ धमकता है. एक यूनियन बदनाम होती है तब दूसरी यूनियन जन्म ले लेती है. बोतलें बदली जाती हैं, पर शराब जैसी की तैसी उंडेल दी जाती है. यह स्थिति अपने देश में तब भी थी जब पहलेपहल ट्रेड यूनियन बनी थी और आज भी है. दल बदलते हैं, राजनीति बदलती है और सरकारें भी बदलती हैं, पर ट्रेड यूनियन एक ऐसी खुदाई गाय है जिस पर उंगली उठाना सरकार और अखबार दोनों कुफ्र मानते हैं.

ट्रेड यूनियन विदेशी सिद्धांत

वास्तव में ट्रेड यूनियन एक विदेशी सिद्धांत है और इस का प्रादुर्भाव पश्चिम में, मुख्यतः अमरीका में तब हुआ, जब वहां रंगभेद और अर्द्धदास प्रथा का बोलबाला था. एक रंग विशेष के लोग दूसरे रंग विशेष के लोगों को आदमी तक मानने को तैयार नहीं थे. उन से दिनरात कलपुर्जे की तरह काम लेते थे, जिस के विरुद्ध मजदूरों का पहला विरोध प्रदर्शन शिकागो की सड़कों पर किया गया था. आज भी विश्व के तमाम मजदूर संघ उसी प्रदर्शन की स्मृति में एक मई को ट्रेड यूनियन संघर्ष के जन्मदिन के रूप में मनाते हैं.

अमरीका से यह आंदोलन विकासरत यूरोप के देशों में फैला और अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में जब भारतीयों का शिक्षा आदि के लिए इन देशों में आनाजाना हुआ, यह आंदोलन सोशलिज्म तथा कम्यूनिज्म के सिद्धांतों के साथ भारत में भी आ गया.

वस्तुतः ट्रेड यूनियन और सोशलिज्म एवं कम्यूनिज्म हमारे देश की जमीन पर आ कर एक तरह से एकदूसरे के पूरक हो गए. यही वजह है कि पिछली लगभग आधी सदी से इतने प्रचार के बावजूद आज भारतीय जनजीवन से सोशलिज्म एवं कम्यूनिज्म उतना ही दूर है जितना धरती से आसमान.

इन विदेशी सिद्धांतों को अपने साथ जहाज में लाद कर लाने वाले न तो खुद मजदूर थे, न मजदूरों के किसी तबके से संबंध रखने वाले. यदि इतिहास के पन्नों को पलट कर देखा जाए, तो इन्हें इस देश में लाने वाले प्रायः सब के सब राजाओं, बड़ेबड़े जमींदारों, पंडितों एवं पुरोहितों आदि की संतान थे. राजा ब्रजेशसिंह तथा श्रीपाद अमृत डांगे जैसे कम्यूनिस्ट इस के कुछ उदाहरण हैं.

असफल मजदूर एकता

संपन्न वर्ग अपने स्वभाव के अनुसार सदा हवाई किले बनाता है. कुछ इसी तरह का मंसूबा ले कर ये लोग भी भारत की जमीन पर उतरे थे और उस वक्त भारत की औद्योगिक स्थिति को देखे बिना ही इन्होंने ट्रेड यूनियन का पौधा जिस रूप में उखाड़ कर लाए थे, उसी रूप में रोपना शुरू कर दिया. अब सुलहसफाई व समझौता के बजाए वर्गभेद, सर्वहारा, उन्मूलन, विनाश जैसे शब्दों के साथसाथ इन के भीतर छिपे अर्थ ने भी भारतीय उद्योगों को मथमथ कर चलनी करना शुरू कर दिया. इस मंथन में मजदूर बेकार होता रहा. उद्योग धंधे आए दिन हड़तालघेराव से चौपट होते रहे और इन दोनों के मंथन (मजदूरों और उद्योगों के मालिकों) से जबजब कुछ मक्खन निकलने को हुआ, ट्रेड यूनियन नेताओं की लंबी जबान उसे चट करती रही.

इस का प्रतिकूल प्रभाव सोशलिज्म और कम्यूनिज्म पर भी पड़ा. इन पार्टियों के नेता भारतीय जनमानस से दूर शहर के कुछ मजबूर तबकों तक ही सीमित रह गए और हड़ताल, बोनस, भत्ते की मांग करते

खुद अपने लिए एयर कंडीशनर, रेफ्रीजेरेटर जैसे साधनों को जुटा कर अपनेअपने घर में समाजवाद भरने लगे.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ट्रेड यूनियन इतिहास की इतनी बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है कि इतने सालों से मजदूर एकता का जाप होने के बावजूद स्थिति यह है कि बोनस की मांग के लिए तो रामदीन और अब्दुल साथ-साथ नारे लगाते हैं, पर जरा सी मजहब की हवा लगते ही वे पल भर में हिंदू मुसलमान बन कर एकदूसरे का गला काटने को छुरी निकाल लेते हैं.

पर सोशलिज्म और कम्यूनिज्म के पैरोकार इस स्थिति से जानबूझ कर आंखें मूंद कर रोजरोज नई मांगें पेश कर रहे हैं और मिलमालिकों तथा मजदूरों के बीच नईनई दीवार खड़ी करते हुए इतना आगे बढ़े जा रहे हैं कि इन्हें घूम कर देखने और आत्मपरीक्षण की फुरसत ही नहीं है और यह विभेद एवं द्वेष भस्मासुर की भांति खुद उन्हीं की पार्टियों को इस तरह नोच रहा है कि एक सोशलिज्म दल में से चार समाजवादी दल एवं एक कम्यूनिस्ट दल में से फूट कर अब पचीसों कम्यूनिस्ट दल बन गए हैं. नारा तो ये अब भी 'लाल किले पर झंडा' लहराने का लगाते हैं, पर उन की गुमटी जैसी ट्रेड यूनियन की दुकान की दीवारें इस तरह डगमगा रही हैं कि अपनी इस दुकान को बचाने में ही ये पसीनेपसीने हो उठे हैं. दिल्ली तो इन से पचास साल पहले जितनी दूर थी उस से आज पचास हजार कोस और दूर है.

ट्रेड यूनियन की दीमक

प्रथम महायुद्ध काल में जब देश में उद्योगधंधों की शुरुआत हो ही रही थी, तभी इस पौधे में ट्रेड यूनियन की दीमक चिपका दी गई. तब से आज तक बढ़ती हुई वैज्ञानिक प्रगति, मांग, साधनों आदि के फलस्वरूप जितनी तेजी से उद्योगों में प्रगति हुई, उस से भी अधिक तेजी से ट्रेड यूनियनों के पांव पसरते रहे और इन का शिकंजा आज देश के आर्थिक आधार को इस तरह जकड़े हुए है कि चाहे कहीं सूखा पड़ा हो या बाढ़ आई हो अथवा भुखमरी से लोग मर रहे हों, पर हड़ताल की वंशी बजते ही ट्रेन के चक्के जाम हो जाएंगे.

लोग मरते हैं तो मरें, देश की आर्थिक रीढ़ टूटे या बिखरे, इस से ट्रेड यूनियन नेताओं को कोई सरोकार नहीं. उन्हें तो अपना हम्मीर हठ पूरा करना है.

हस्पताल में रोगी भले ही दर्द से चिल्ला रहा हो, वह भले ही जिंदगी और मौत के बीच झूल रहा हो, पर यदि डाक्टरों की यूनियन हड़ताल का नारा दे देती है तो दवादारू बंद. मरने वालों को छोड़ो राम भरोसे.

देश जाए चूल्हे में

देश में कपड़ा उद्योग का जो कचूमर इस 'वाद' ने निकाला है उस का परिणाम यह है कि गांव के लोग मोटे कपड़े के लिए तरस रहे हैं, पर मिलें खामोश खड़ी हैं. इतना ही नहीं, ट्रेड यूनियन के पांव डाक यार्ड, डाकतार, सुरक्षा प्रतिष्ठान, हवाई सेवा से बढ़तेबढ़ते पुलिस सेवा तक में फैलते जा रहे हैं. यदि स्थिति यही रही तो वह दिन दूर नहीं, जब थाने में चोरी की सूचना पहुंचने पर हवलदार अकड़ कर कहेगा, "पहले मेरी मांगें पूरी करो, तब चोर का पता लगाने जाऊंगा."

इन शब्दों से शायद आप चौंक पड़े हों, पर ध्यान से देखें तो स्पष्ट दिखाई देगा कि तमाम उद्योग इसी तरह चौपट हो रहे हैं, राष्ट्रीय आय का ह्रास हो रहा है. जनजीवन त्रस्त है, पर इन सब से बेखबर ट्रेड यूनियन नेता अपनी मांगों की रट लगाए हुए हैं. इन के लिए देश जाए चूल्हे में.

आज उत्तरोत्तर हो रही वैज्ञानिक प्रगति से नित नई तकनीकें सामने आ रही हैं. उन के समक्ष पुरानी मशीनों की क्षमता ठीक वैसी ही है जैसे रेल के सामने बैलगाड़ी. संसार के और देश इस तकनीक से लाभ उठाते हुए नित नए स्वचालित यंत्रों को अपना रहे हैं, पर हमारे यहां जैसे

ही किसी उद्योग में स्वचालित यंत्रों की बात चलती है वैसे ही ट्रेड यूनियन नेता हायतोबा मचाने लगते हैं. उन का यह तर्क कि स्वचालित यंत्रों से पुरानी मशीनों के कारीगर बेकार हो जाएंगे, ठीक वैसा ही है जैसे इक्का हांकने वाला गुहार लगाए कि बस चलने से मेरी रोजी को खतरा है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यूनियन का रवैया

इस स्थिति को मानवीय पहलू से देखने और पुराने कारीगरों को बेकारी के प्रति सचेत दृष्टि डालने पर भी ट्रेड यूनियन का एक अजीबोगरीब रवैया यह है कि वह कम क्षमता वाली पुरानी मशीनों पर काम करने वाले कारीगरों को नई तकनीक, नए यंत्रों को सीखने की सलाह देने के बजाए नईनई मांगें पेश करती जाती है. उद्योगपति का नतीजा यह होता है कि उद्योग ही बंद कर देने पर उसे विवश होना पड़ता है. आज कपड़ा उद्योग की बंद मिलों की रामकहानी यही है.

द्वंद्वात्मक भौतिकवाद का यह कथन कि मालिकों और मजदूरों में टकराव अवश्यंभावी है, आज तर्क की कसौटी पर बिलकुल बेमानी है. यदि ऐसा होता तो जिस देश में तथाकथित सर्वहारा वर्ग का ही राज्य है वहां यह टकराव क्यों नहीं है? और इस पर यह दलील कि वहां मजदूरों का ही राज्य है, इसलिए वहां मजदूर मजदूर के समान हित के प्रति सचेत है, कहां तक सही है इस की झलक हमें अब तक उन देशों की लौह दीवारों को फांद कर मिलने वाली खबरों से मिल जाती है. उजबेकिस्तान के किसानों पर टैंक दौड़ाए जाते हैं. पोलैंड के मजदूरों और विद्यार्थियों की भीड़ को रौंदने बख्तरबंद गाड़ियां दौड़ पड़ती हैं. यदि मजदूर के प्रति मजदूर के सचेत भाव का यही उदाहरण है तब तो ऐसे मजदूर राज्य को दूर से ही सलामी करनी होगी.

सभी उद्योगपति शोषक हैं, वे मजदूरों की गाढ़ी कमाई से धन बटोरबटोर कर अपनी तोंदें बढ़ा रहे हैं, तिजोरियां भरते जा रहे हैं और मजदूरों की हर मांग पर उन्हें ठेंगा दिखाते हैं. इस आरोप की असलियत को जानने के लिए हमें अपने देश में उद्योगों की स्थिति एवं उन के आर्थिक आधार को समझने में आसानी मिल सकती है.

उद्योगों का आर्थिक आधार

अपने देश में उद्योगों का विस्तार तथा उन के आर्थिक आधार की बहुत कुछ रूपरेखा इस प्रकार है :

'क' एक सूती मिल खोलता है, जिस में वह कताई और बुनाई की कुछ मशीनें लगा कर काम शुरू करता है. काम शुरू होते ही उसे और मशीनों की आवश्यकता महसूस होने लगती है. तब वह और कर्ज ले कर और मशीनें लगाता है. इन नई मशीनों के साथ ही मजदूर यूनियनों का शिकंजा भी कसने लगता है. उधर सरकारी एवं गैरसरकारी कर्ज का तकाजा और ब्याज खड़ा होने लगता है. साथ ही सरकारी टैक्स की तलवार उद्योगों की गरदन नापने दौड़ पड़ती है और फिर बिक्री का भी कोई भरोसा नहीं होता. कभी बाजार मंदा होता है, तो कभी बढ़ता है. उद्योगपति हर तरफ की समस्याओं से बुरी तरह घिर जाता है.

यही स्थिति प्रिंटिंग प्रेस, रबड़ उद्योग आदि अन्य उद्योगों की है और सरकार स्वयं इन उद्योगों की इस असहाय हालत से आंखें मूंद कर ट्रेड यूनियन नेताओं की हां में हां मिलाते हुए नित नए फरमान जारी कर देती है, जिस से उद्योगों का रहासहा ढांचा भी अस्तव्यस्त हो उठता है.

यह मान कर ट्रेड यूनियन का औचित्य ठहराना कि इस के अभाव में उद्योगपति सारा लाभांश खुद हड़प कर के एक निरंकुश थैलीशाह बन जाएगा, आज की परिस्थितियों में बिलकुल बेमानी हो गया है.

जैसे ही बोनस, वेतनों में बढ़ोतरी की अदायगी का मौसम आता है, बाजार में चीजों के भाव आसमान को छूने लगते हैं.

अकूत मात्रा में मुद्रा खर्चने से मुद्रास्फीति होने लगती है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महंगाई भत्ता, बोनस आदि लाभों से वंचित देश की 95 प्रतिशत जनता अकारण ही महंगाई की बाढ़ से तबाह होने लगती है. यह कौन सा न्याय है कि जहां देश में आज भी लोग दो वक्त की रोटी और तन ढकने के लिए वस्त्र के लिए तरस रहे हैं, वहीं कुछ लोग एक साथ इतना पैसा खर्च करने को पा जाएं कि उन के प्रभाव से सारा सामाजिक ढांचा चरमरा उठे. यदि यह मान लिया जाए कि यह लाभ वे अपनी कमाई के बल पर उठा रहे हैं, तब उद्योगपति भी तो कमाई करता है. उस के अपनी कमाई उड़ाने पर चिल्लपों क्यों होती है?

भड़कीले वर्ग का जन्म

लाभांश आदि के पैसे अधिकतर खर्चीले फैंसी कपड़े खरीदने और मौजमस्ती में ही व्यय होते हैं. इस से समाज में एक और भड़कीला वर्ग पैदा हो गया, जो समाज के नैतिक मूल्यों को मटियामेट करने को अपनी मौज मानता है.

पता नहीं किसी पूर्वाग्रह के कारण अथवा किसी वाद विशेष से प्रतिबद्ध हमारे अर्थशास्त्री इस वितरित होने वाले लाभांश का दूसरा पक्ष क्यों नहीं देखते.

यदि इस वितरित होने वाले लाभांश को एक संचित पूंजी मान कर इस से और नए उद्योगों को स्थापित करने की दिशा में कदम बढ़ाया जाए तो इस से मुद्रास्फीति का भय भी दूर हो सकता है और बेरोजगारी की समस्या को हल करने के भी कुछ मार्ग निकल सकते हैं.

पर अर्थशास्त्री शायद मजदूर द्रोही और प्रतिक्रियावादी की संज्ञा पाने के भय से इस विषय में कुछ नहीं सोचता और ट्रेड यूनियन नेताओं के तो सोचने का यह विषय है ही नहीं.

ट्रेड यूनियन के इतिहास का एकएक पन्ना उलटने पर भी कहीं परस्पर प्रेम, श्रम के प्रति निष्ठा, सहिष्णुता, उदार भावना एवं कर्त्तव्य पालन के प्रति समर्पित भावना का कोई भी अध्याय नहीं मिलेगा. और तो और ट्रेड यूनियन के सिद्धांत में राष्ट्रीयता एवं देशप्रेम भी गौण वस्तु है. यहां का ट्रेड यूनियन नेता भारत के गरीब मजदूरों का मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से ज्ञान पाने के लिए कभी बर्लिन, कभी वियना, कभी जेनीवा, कभी मास्को की महंगी हवाई यात्राएं करता है.

तर माल

ट्रेड यूनियन नेता 'पंछी करे न चाकरी अजगर करे न काम' के सिद्धांत पर चल बिना नून हलदी की दौड़धूप के तर माल चरता है, महंगी हवाई यात्राएं करता है, महंगे होटलों में अपनी आरामगाह बनाता है, अपने बच्चों को महंगे पब्लिक स्कूल में पढ़ा कर उन्हें साहब बनाता है और ये सारे खर्चे वह 'अपने मजदूर भाइयों' की जेब से वसूल करता है. सरकार पर उस का रोब है, उद्योगपति पर उस की धौंस है और अपने इस रोब और धौंस के बल पर वह प्रायः उद्योगपतियों से रातोंरात लाखों का वारान्यारा कर लेता है.

इस के अतिरिक्त महंगाई, बोनस की अदायगी पर एक निश्चित रकम ट्रेड यूनियनें बख्शीश में लेती हैं तथा नेताजी के यहां ब्याहशादी के अवसर पर हर मजदूर दसपांच की भेंट अपना धर्म समझ कर चढ़ाता है. अपना रोबदाब कायम रखने के लिए ट्रेड यूनियन नेता अपना ही आदमी उद्योगों के महत्त्वपूर्ण पदों पर बिठा देने की कोशिश में रहता है और एकाध अपवाद को छोड़ कर वह सफल भी होता है. नेता का यह प्रतिनिधि न तो उद्योगों के विकास एवं संचालन में रुचि रखता है और न ही मजदूरों के हित की कोई बात इस के मन में होती है. यह तो मात्र अपने नेता के प्रति प्रतिबद्ध रहता है और उसी के प्रति निष्ठावान. यह हर काम इसी लिए करता है कि नेता का रोब उत्तरोत्तर बढ़ता रहे. फलतः उद्योग उद्योग न रह कर एक राजनीतिक दावपेच

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का अखाड़ा बन जाता है, जहां नित नई तिकड़मबाजियां होती हैं, फिकरे कसे जाते हैं. झूठे मुकदमे तैयार होते हैं और मजदूर काम के प्रति उदासीन हो कर अपने वर्चस्व के लिए नित नए बखेड़े गढ़ता है और खुद उस में फंसता जाता है.

पंडागीरी

ट्रेड यूनियन के कार्यकलाप को देखने के लिए कोई पुस्तक पढ़ने की जरूरत नहीं. आप इन की पंडागीरी देखना चाहें तो दिल्ली, बंबई की औद्योगिक बस्तियों की ओर निकल कर यह तमाशा अपनी आंखों से देख सकते हैं.

जब कोई ऐसा मजदूर ट्रेड यूनियन में शरण लेता है, जो अब तक यूनियनबाजी से दूर रहा हो तो उसे एक मुश्त छः से दस महीने का चंदा जमा करना पड़ता है और यूनियन वाले झटपट उसे अपने रजिस्टर में पुराना मेंबर दर्ज कर लेते हैं. इस के बाद उस से मुकदमे का खर्च वसूला जाता है. मुकदमे के लिए वह अपने मन का वकील रखने को भी स्वतंत्र नहीं होता, उसे वही वकील रखना होगा, जिसे ट्रेड यूनियन नेता बताएगा और इस तरह उस के घर का बरतनभांडा बिकवा कर ट्रेड यूनियन उसे पूर्णरूपेण 'सर्वहारा' बना कर छोड़ती है. हालत यहां तक आ पहुंचती है कि हक के लिए लड़ने को ताल ठोकने वाला इतना असहाय हो जाता है कि मुकदमा लड़ना तो दूर वह नेताजी से यह पूछने की भी स्थिति गंवा देता है कि "इस खाई में तुम ने हमें क्यों ढकेला?"

ट्रेड यूनियन नेता की चमकदमक और रोबदाब देख कर बहुत से महत्त्वाकांक्षी युवक इन की राजनीति में अपने को स्वतः जोत देते हैं. नेतागीरी का स्वप्नमहल देखतेदेखते इन की उमर का बहुमूल्य समय महंगाई, बोनस की लड़ाई लड़तेलड़ते बीतता रहता है और उमर की एक खास देहरी को छूतेछूते यह पाते हैं कि इतने वर्षों से लड़ने वाली इस लड़ाई में उन्हें कुछ भी न मिला. वे दूसरे के लिए बोनस, भविष्य निधि के लिए तो लड़ते रहे, पर उन के अपने भविष्य का कुछ भी न बना और यह चिंता उन्हें कुंठा एवं निराशा से भर कर रौंदने लगती है.

देशद्रोह जैसा पाप

इन में से ही कुछ तो आत्महत्या कर लेते हैं, कुछ पागलपन के शिकार हो उठते हैं, कुछ एक यूनियन से दूसरी यूनियन का दरवाजा खड़खड़ाते इस उम्मीद में घूमते हैं कि शायद 'यहां कहीं' उन का जुगाड़ लग जाए और इन में जो लोग यूनियन के सेक्रेटरी की कुरसी पा लेने में सफल हो जाते हैं, वे दिनरात इस तिकड़म में रहते हैं कि जिंदगी को निश्चित हो कर जीने के लिए कैसे जल्दी से जल्दी धन जुटाया जाए. ऐसा नेता पैसे के लिए मजदूर हित, उद्योग से बढ़ कर मौका पाने पर देशद्रोह जैसा पाप करने से भी नहीं चूकता.

ट्रेड यूनियन और उस की यह राक्षसी छाया अब बढ़ कर गले तक पहुंच चुकी है. यदि इस का विकल्प न ढूंढ़ा गया तो जिस तरह वर्णव्यवस्था भारत के सिर पर हजारों साल की गुलामी लादने में सहायक बनी थी, उसी तरह यह वर्गभेद उभारने वाली ट्रेड यूनियनबाजी राष्ट्र की उत्पादन एवं उद्योगों की क्षमता को रसातल के गर्त में ढकेल देगी. ●●

69 : 4079 मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रासदी मुसलिम समाज की

हसन जमाल

धर्म को लेकर जो आपसी ख़ूनखराबे पर आमादा हो तो फिर ऐसे धर्म की चिंता ही क्यों?

मुसलमान चाहे किसी भी फिरके या वर्ग का हो, वह यह बात बड़े गर्व के साथ कहता है कि वह इसलाम धर्म को मानता है. उस के लिए इसलाम ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है, क्योंकि उस के विचार में इसलाम में जो खूबियां हैं, वे अन्य धर्मों में कम ही पाई जाती हैं. ब्याज, शराब, व्यभिचार व चोरी जैसी सामाजिक बुराइयों के दमन के लिए इसलाम में बड़े सख़्त दंड का विधान है. इस के अलावा इसलाम ही एक ऐसा धर्म है, जिस ने लोकतंत्र को बढ़ावा दिया. पुश्त दर पुश्त बादशाहत की इस धर्म में कोई जगह नहीं है.

मुसलमान अपने अतीत को खूब याद करते हैं और उठतेबैठते उस की मिसालें देते हैं. जब इसलाम फैल रहा था तो इसलामी हकूमत का क्षेत्र भी विकसित हो रहा था. उस दौर में मुसलमानों ने आधी दुनिया को अपने घोड़ों की टापों से रौंद डाला था. उन्होंने सलतनतें फतह कीं और वहां इसलाम धर्म को फैलाया. तब ईसाई, यहूदी और अन्य कौमें यह सोच कर घबराने लगीं कि कहीं उन के धर्म बिलकुल ही नष्ट न हो जाएं. लेकिन ऐसा नहीं हुआ. आपसी रंजिशों, खूनखराबों, वैमनस्य व सत्तालोलुपता ने मुसलमानों के बढ़ते कदम रोक दिए और इसलाम को दुनिया के चप्पेचप्पे में फैलाने का उन का सपना अधूरा रह गया.

इतिहास साक्षी है कि मुसलमान कभी शांति से नहीं बैठे और हमेशा आपस में खूनखराबा करते रहे. इसलाम धर्म की मूल शिक्षा यह रही कि मुसलमान गृहस्थ जीवन अपनाते हुए अधिकाधिक खुदा को याद करें. उस का गुणगान करें. आखरत (परलोक) को सुधारने के लिए संसार में सादा जीवन गुजारें और दुनिया की रंगीनियों व बुराइयों में लिप्त न हों. आपस में मुहब्बत से रहें. पड़ोसियों से अच्छा व्यवहार करें. दीनदुखियों की सेवा करें. अनाथों व स्त्रियों का खयाल रखें. सामाजिक बुराइयों से बचें. ये शिक्षाएं उन पांच फर्जों के अलावा हैं जो इसलाम के आधारस्तंभ हैं: (1) अल्लाह व उस के रसूल (मुहम्मद साहब) पर ईमान लाना, (2) हर रोज पांच समय की नमाज अदा करना, (3) रमजान के महीने में 30 दिन के रोजे रखना, (4) अपने माल में से ढाई फीसदी दान देना और (5) हज (मक्का की तीर्थयात्रा) करना.

अपने जीवनकाल में हजरत मुहम्मद ने दो बातें मुसलमानों को घोटघोट कर पिलाई थीं, उन पर प्रारंभिक दौर में भी मुसलमान पाबंद नहीं रहे. इस से बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है? हजरत मुहम्मद के बाद हजरत अबूबकर सिद्दीक इसलामी सत्ता के पहले खलीफा हुए. दूसरे खलीफा उमर फारूक थे. तब तक

इसलाम काफी फैल चुका था.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उमर फारूक की खिलाफत का दौर इसलाम की उन्नति का दौर था, क्योंकि प्रशासन में वह बड़े सख्त थे. बादशाह होते हुए भी उन्होंने फकीरों की सी जिंदगी गुजारी. उन की जीवनपद्धति ने इसलाम में उच्च कोटि के आदर्श स्थापित किए. उन्हीं उमर फारूक पर कातिलाना हमला किया गया जिस से वह बच न सके. कुछ दिनों पश्चात उन की मृत्यु हो गई. फिर तो यह सिलसिला ही बन गया.

तीसरे खलीफा हजरत उसमान गनी को उन के घर में कैद कर के शहीद कर दिया गया. चौथे खलीफा हजरत अली पर एक दिलजले प्रेमी ने मसजिद में नमाज पढ़ते हुए आक्रमण कर अपने प्रतिशोध की आग बुझाई. हजरत अली के ही पुत्र हसन को जहर दिया गया. तो दूसरे पुत्र हुसैन को करबला के मैदान में एक व्यभिचारी व दुष्ट खलीफा यजीद ने शहीद करवा दिया.

ज्यादा नजदीक आएं तो अलाउद्दीन खिलजी की मिसाल लें. उस ने अपने चाचा जलालुद्दीन खिलजी को सत्ता हड़पने के उद्देश्य से मार डाला. औरंगजेब को कुछ इतिहासकार हिंदुओं का कट्टर शत्रु और बुरा आदमी सिद्ध करते हैं तो कुछ इतिहासकार सूफी संत का दरजा देते हैं. उन का कथन है कि औरंगजेब इसलाम पर सख्ती से चला. खुदा की उस ने खूब इबादत की. टोपियां सीसी कर और अपने हाथों से कुरान की नकल कर के उस ने रोजी कमाई. बड़ा परहेजगार था वह. लेकिन अगर उसे सूफी संत ही बनना था तो उस ने अपने बुजुर्ग बाप को नजरबंद क्यों किया? एक-एक कर के अपने भाइयों को मौत के घाट क्यों उतार दिया? इस सब के पीछे सत्ता-लोलुपता नहीं थी तो क्या था?

कहने के लिए तर्क यह था कि दारा शिकोह शत्रुओं के हाथों की कठपुतली बन चुका था. अगर दारा शिकोह बादशाह बन जाता तो मुगलिया सलतनत खतरे में पड़ जाती. लेकिन अपने दूसरे भाइयों को बादशाहत का लालच दे कर अपने साथ मिला लेना और फिर उन के साथ धोखा कर के मरवा डालना एक परहेजगार, सूफी संत का काम नहीं हो सकता, सत्ता के लालची का भले ही हो.

इसलामी तालीम पर अमल नहीं

हाल ही में अफगानिस्तान में दाउद खां की हत्या, पाकिस्तान में भुट्टो को रास्ते से साफ करना, बंगलादेश में मुजीब के परिवार का खात्मा, ईरान में शाह मुहम्मद रजा पहलवी को खदेड़ कर आयतुल्लाह खुमैनी नामी मुल्ला द्वारा सत्ता को हथिया लेना और फिर एकएक शत्रु को गोलियों से भून देना यही जाहिर करता है कि इसलामी तालीम कहनेसुनने तक ही सीमित है. उस पर अमल करना मुसलमानों, खास कर मुसलिम शासकों का ध्येय नहीं है.

एक अनुमान के अनुसार इस समय पूरे विश्व में मुसलमान 60 करोड़ के आसपास हैं. भारत में लगभग 12 करोड़. सारे मुसलमानों को एक डोर में बांधने की कड़ी खुदा और उन के रसूल हजरत मुहम्मद हैं. वस्तुतः मुसलमान एक सूत्र में बंधे हुए नहीं हैं. अगर ऐसा होता तो मुसलमानों का किबला अव्वल (यरुशलम स्थित मसजिद अक्सा) मुट्ठी भर यहूदियों के कब्जे में न चला जाता और सारे अरब देश मुंह ताकते न रह जाते. अगर सारे मुसलमान एक होते तो भारत में शियासुन्नी के झगड़े न होते. पाकिस्तान में सुन्नी व अहमदिया फिरके में विवाद न होता. काबाशरीफ (मक्का) में पेश इमाम के पद को ले कर खूनखराबा न होता. अफगानिस्तान में विदेशी शासक आ कर न बैठते. ईरान में सत्ता परिवर्तन के पश्चात भी मारकाट का ऐसा आदिम खेल न खेला जाता.

अगर यह मान भी लिया जाए कि धर्म ही मुसलमानों को एक किए हुए है तो यह भी मानना होगा कि धर्म के नाम पर ही मुसलमान आपस में खूनखराबा करते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं, तथा दूसरी कौमों को भी नहीं बख्शते.

मुसलमान छोटेछोटे बेशुमार टुकड़ों में बंटे हुए हैं और अपने मूल उद्देश्यों को ताक में रख कर एकदूसरे की टांग खींचने में लगे रहते हैं. बिना दाढ़ी वाला इमाम पेश इमाम बन सकता है या नहीं? मुहम्मद साहब इल्मे गैब (गुप्त ज्ञान) रखते थे या नहीं? मुहम्मद साहब के मातापिता को मोक्ष प्राप्त होगा या नहीं? इस किस्म की बहसों में मुसलमान उलझे हुए हैं.

प्रारंभिक दौर का कठमुल्लापन

अगर मुसलिम शासकों को छोड़ कर मुसलिम अवाम पर नजर डालें तो पाएंगे कि उन की मानसिकता में कोई विशेष अंतर नहीं आया है. मुसलमान ऐसे दोराहे पर खड़े हैं, जहां एक ओर खुदा व रसूल की रजा और जन्नत के अनुपम सुख व ऐश्वर्य हैं तो दूसरी ओर दुनिया के भौतिक सुख बांहें पसारे खड़े हैं. लेकिन मुसलमान न तो इसलामी कायदेकानूनों पर चलने के लिए खुद को पूरी तरह आमादा कर पाते हैं, न निरंतर बदलती मान्यताओं के साथ उन की पटरी बैठती है. नई खोज, नई मान्यता, नए आचारविचार को वे इसलिए ठुकरा देते हैं कि इसलाम उस की इजाजत नहीं देता और खुदा व उस के रसूल के आदेश मानने में वे इसलिए असमर्थ हैं कि आधुनिक परिवेश में प्रारंभिक दौर का कठमुल्लापन संभव नहीं.

कितने मुसलमान हैं जो पांच समय की नमाज प्रतिदिन पाबंदी के साथ पढ़ पाते हैं, महीने भर रोजे रखते हैं या शरीयत के मुताबिक पूरी तरह चलते हैं? अगर सर्वेक्षण किया जाए तो इसलाम के अरकान को पूरा करने वालों की संख्या पांचदस प्रतिशत से अधिक नहीं निकलेगी. उन में भी कब्र में पैर लटकाए हुए बूढ़े ही मिलेंगे.

इस के बावजूद मुसलमान इसलाम के नाम पर मरनेमारने के लिए तैयार रहते हैं तो यह सरासर हिमाकत है. इस के सिवा कुछ नहीं.

जराजरा सी बात पर इसलाम खतरे में पड़ जाता है. हकीकत में इसलाम कभी खतरे में नहीं पड़ता, उस के मानने वाले ही पड़ते हैं. हजरत मुहम्मद व उन के तत्कालीन अनुयायियों पर मक्का के गैर-मुसलिमों ने जोजो अत्याचार किए, उन को सुन कर ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं. उन का धैर्य देख कर भी मुसलमान प्रेरणा नहीं लेते तो ऐसी धर्मांधता किस काम की? आज मुसलमान विश्व के कोनेकोने में फैले हुए हैं और अपने धर्म का पालन करने के लिए स्वतंत्र हैं. फिर भी जब वे कहते हैं कि उन पर जुल्म ढाया जा रहा है तो साफसाफ उन की नीयत, उन की शिक्षा में दोष नजर आता है.

भारत की ही मिसाल लें. भारतीय संविधान धर्म के मामले में स्वतंत्रता देता है. भारत के 12 करोड़ मुसलमानों पर संवैधानिक एवं कानूनी कोई पाबंदी या अड़चन नहीं है. इस के बावजूद यहां मुसलमान हर समय अपने को असुरक्षित, प्रताड़ित व पीड़ित महसूस करते हैं और सदैव यह रोना रोते हैं कि उन के साथ स्वतंत्र भारत में न्याय नहीं होता. उन्हें दूसरे दर्जे का शहरी समझा जाता है. कहीं-कहीं उन की शिकायतें वाजिब हो सकती हैं, लेकिन इस संदर्भ में सारे गैरमुसलिमों को शक की नजर से देखना व उन्हें दोषी करार देना किसी तरह भी उचित नहीं ठहराया जा सकता.

शरारती तत्व कहां नहीं होते? सांप्रदायिक वैमनस्य के अनेक कारण हैं जिन को दूर करने का मुसलमान कभी प्रयास नहीं करते. धर्म के नाम पर देश का बंटवारा हुआ तब भी अनेक कारणों से बहुत से मुसलमान भारत में ही बस रहे. एक कारण तो यह है. दूसरा यह कि सैकड़ों बरसों तक मुसलिम शासकों ने बाहर से आ कर इस देश पर हकूमत की. यह अलग बात है कि वे यहीं के हो कर रहे परंतु घृणा का यह बहुत बड़ा कारण है. पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घृणा को रागद्वेष से नहीं छिपाया जा सकता. होना तो यह चाहिए कि मुसलमान इसलामी शिक्षा के अनुरूप अनुकरणीय आचरण प्रस्तुत कर के उस घृणा को खत्म करने का प्रयास करें, पर उलटे वे खुद को मजलूम व पिछड़ा हुआ जतला कर शिकायतें दागते रहते हैं. अलगाव वाली यह नीति स्वयं मुसलमानों के लिए घातक सिद्ध हो रही है और इस से दोनों पक्षों के बीच खाई बढ़ती जा रही है.

सांप्रदायिक दंगे और बलवे इस देश की ज्वलंत समस्या हैं. आजादी के 33 साल पश्चात भी इस से छुटकारा नहीं पाया जा सका है, बल्कि दिनोंदिन यह समस्या बढ़ती ही जा रही है. ये दंगे कभी पूर्व नियोजित होते हैं तो कभी छोटा सा व्यक्तिगत विवाद बलवे का रूप धारण कर लेता है. दंगों की स्थिति को अकसर टाला जा सकता है लेकिन मुसलमान सदैव उग्र रूप दिखाते हुए धार्मिक असहिष्णुता का परिचय देते हैं. बाद में अपनी मजलूमी का रोना रोते हैं. पिछले वर्ष ईद के दिन मुरादाबाद में जो दंगा हुआ और प्रतिक्रियास्वरूप दिल्ली, अलीगढ़, बरेली व संभल में बलवे व अशांति की स्थिति बनी उस से बचा जा सकता था. लेकिन धर्म की आड़ में अपने ही भाइयों के खून से होली खेलना और लोगों की तरह मुसलमानों की भी आदत बन चुकी है.

श्री जुल्फिकारुल्लाह फरमाते हैं कि मुसलमान सांप्रदायिक नहीं हैं. लेकिन क्या वह बताएंगे कि मक्का के काबे पर कतिपय कारणों से आक्रमण हुआ तो भारत के मुसलमानों को क्या जरूरत पेश आई कि हैदराबाद व कलकत्ता में सरकारी व नागरिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाया जाए? क्यों वे निरपराध शहरियों की जानमाल के दुश्मन बन गए? क्या मजहब मुसलमानों को यही पाठ पढ़ाता है? बजाए इस के कि सद्भावना व सौहार्द का वातावरण बनाया जाए. मुसलमान स्वयं अपने घर को आग लगाने के लिए तत्पर रहते हैं. मुसलमान भी वे जो इसलाम की कसौटी पर खरे नहीं उतरते. यह विडंबना ही है.

जोधपुर शहर में पिछले 10 बरसों से मुहर्रम के ताजिए नहीं निकाले जा रहे हैं. पारंपरिक मार्ग में एक पीपल के वृक्ष को ले कर झगड़ा है. ऐसा ही झगड़ा यदि उत्तर प्रदेश या बिहार में कहीं होता तो अब तक कई लाशें बिछ चुकी होतीं. लेकिन जोधपुर के मुसलमानों ने समझ से काम लिया और ताजियों का जलूस निकालना ही छोड़ दिया. जिन ताजियों के कारण भारत में विभिन्न स्थानों पर तनावपूर्ण स्थिति बनी रहती है, मुहर्रम को उस रूप में अरब देशों में मनाया ही नहीं जाता.

मुसलमानों के प्रति आम शिकायत यह है कि वे भारत के प्रति वफादार नहीं हैं. इस कलंक को धोने का मुसलमानों ने कभी सच्चे दिल से प्रयास किया है? उदाहरण के लिए कर्नल उसमान व अब्दुल हमीद के नाम लिए जाते हैं. लेकिन क्या इतना ही काफी है? वास्तविकता यह है कि अधिकांश मुसलमानों को अपने वतन के प्रति पूर्ण निष्ठा नहीं है. वे अपने को अलग व कटा हुआ महसूस करते हैं और इस के लिए जिम्मेदार हैं मुसलमानों के नेता.

कोई भी मुसलिम नेता यह कहता हुआ नहीं पाया जाता कि मुसलमानों को राष्ट्रीय धारा में रचबस कर सच्चा भारतीय नागरिक कहलाने का गौरव प्राप्त करना चाहिए बल्कि वे सांप्रदायिक जहर उगलते हैं और मुसलमानों में असंतोष व असुरक्षा की भावना को पनपाते हैं, जिस की परिणति सांप्रदायिक दंगों में होती है और मुसलमानों का पिछड़ापन बढ़ता है. इस मामले में उर्दू के कतिपय साप्ताहिक अखबार भी पीछे नहीं हैं.

मुसलमानों के पिछड़ेपन के उन्मूलन के लिए एक नए स्वयंभू नेता उभरे हैं पहले यह केवल मुसलमानों के पिछड़ेपन की बात करते थे, पर अब

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजनीति के कारण सभी पिछड़े लोगों के मसीहा कहलाना पसंद करने लगे हैं. निज स्वार्थ व राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यह भारत के मुसलमानों के इमाम व नेता बन बैठे हैं. कभी जनता पार्टी में घुस जाते हैं तो कभी इंदिरा गांधी के समर्थक बन जाते हैं. जब कुछ हाथ नहीं लगता तो 'हाय मुसलमान...हाय मुसलमान' चिल्लाने लगते हैं.

इन का कहना है कि नौकरियों में मुसलमानों को समुचित व पर्याप्त स्थान नहीं मिलता. इन के पास कई बेकार डाक्टर व इंजीनियर आते हैं जो बेरोजगारी का रोना रोते हैं. बेरोजगारी तो एक राष्ट्रीय समस्या है. इस को मुसलमानों के प्रति अन्याय कहना कहां की अक्लमंदी है? इन दिनों आरक्षण की मांग पर भी बड़ा जोर है. लेकिन केवल आरक्षण में ही मुसलमानों का हित है, यह मानना ही गलत है. आरक्षण से कभी किसी की समस्या हल नहीं हो सकती. आरक्षण चाहे हरिजनों के लिए हो या मुसलमानों के लिए, असंतोष का जनक है और वैमनस्य बढ़ाने का जरिया. आरक्षण वे चाहते हैं जिन में खुद में दमखम नहीं है. जो कौम खुद अपना भला नहीं कर सकती वह हजार आरक्षण के बावजूद पिछड़ी रहेगी.

जुल्फिकारुल्लाह कहते हैं, मुसलमानों को दो या तीन प्रतिशत नौकरियां मिलती हैं. लेकिन इस की पृष्ठभूमि में उन्होंने वस्तुस्थिति समझने की कोशिश ही नहीं की. मुसलमान स्वयं ठंडे दिल से सोचें कि कितने मुसलमान उच्च व तकनीकी शिक्षा हासिल कर पाते हैं. यहां तो बच्चे के समझदार होते ही उसे दीनी मदरसे में दाखिल कर दिया जाता है (एक बड़ी संख्या इस से भी महरूम है) जहां उसे घोटघोट कर यह पिलाया जाता है कि यह संसार मायाजाल है, जो कुछ है आखरत (परलोक) है. बच्चा जब बड़ा होता है तो रोजीरोटी के पचड़े व सामाजिक बंधनों में ऐसा बंधता है कि न दीन याद रहता है, न आखरत की परवाह रह जाती है.

कुरान और हदीसों में बारबार इस बात की ताकीद की गई है कि जहां से भी हो इल्म हासिल किए जाएं, भले ही इल्म के लिए दूर या नजदीक की यात्रा क्यों न करनी पड़े. शिक्षा का महत्त्व इस लिहाज से और बढ़ जाता है कि स्वयं मुहम्मद साहब ने हर मुसलमान मर्द व औरत के लिए इल्म हासिल करना अनिवार्य करार दिया था.

भारतीय मुसलमानों की बदनसीबी का यह हाल है कि वह सही ढंग से अपने धर्म से परिचित नहीं हो पाता. यह सर्वविदित है कि कुरान अरबी भाषा में है. नमाज भी अरबी भाषा में अदा की जाती है. कुछ विद्वानों की बात जुदा है, मगर आम मुसलमान को यह पता ही नहीं होता कि जो वह पढ़ रहा है, उस का अर्थ क्या है. धार्मिक शिक्षा का ही यह दोष है कि आम मुसलमान विद्वानों, मुल्ला-मौलवियों और नामनिहाद कौम के रहनुमाओं के चंगुल में फंसा रहता है. उचित शिक्षा के अभाव में धर्मभीरुता, धर्मांधता बढ़ती है. मुसलमानों के सब से बड़े दुश्मन ये ही लोग हैं जो उन को गुमराह करते हैं और अपनी दुकानदारी चलाते हैं. हकूमत को कोसना इन का पेशा है. मुसलमानों को जमाने के साथ तरक्की के रास्ते पर चलने से ये ही तत्व रोकते हैं.

इसलाम में व्यापार

देश के 100 शीर्षस्थ व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में एक का भी मालिक मुसलमान नहीं है. एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 80 प्रतिशत मुसलमान गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करते हैं. पेट्रोल के खजाने निकलने से पहले अरब देश भी आर्थिक रूप से पिछड़े हुए थे. यह पिछड़ापन क्यों? इसलाम में व्यापार को सब से अच्छा रोजगार बताया गया है. स्वयं हजरत मुहम्मद व्यापार करते थे और माल ले कर दूरदराज के इलाकों में जाते थे.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुसलमान इस सर्वोत्तम रोजगार से वंचित हैं. अधिकांश मुसलमान मजदूरी पेशा या कारीगर होते हैं. कुछ नौकरियों से अपनी जीविका कमाते हैं. बहुत कम लोग हैं जो व्यापार की ओर ध्यान देते हैं. बोहरा संप्रदाय में ही व्यापार का बाहुल्य है और सब से अधिक संपन्न भी वे ही हैं.

वास्तव में इस के पीछे भी पुरातनपंथी, रूढ़िवादी मुल्लामौलवियों की शिक्षा काम करती है. आम लोगों के मन में यह धारणा बैठा दी गई है कि धन सब मुसीबतों की जड़ है, इसलिए इस से बचो. खुदा को गरीबी प्यारी है. लेकिन ऐसा कहते समय वे इस तथ्य को नजरअंदाज कर देते हैं कि धन में बड़ी शक्ति होती है. धन बुरी चीज कदापि नहीं है. उस के इस्तेमाल में ही दोष हो सकता है. तीसरे खलीफा हजरते उसमान गनी बेहद मालदार थे. इसलाम के दो अरकान जकात और हज उन्हीं मुसलमानों के लिए हैं जो साहिबे हैसियत हैं, जिन के पास दौलत है. इसलिए धन कमाना इसलाम में मना नहीं है. अनैतिक ढंग से धन एक जगह एकत्र करने पर जरूर पाबंदी है.

मुसलमान इस बात पर भी बड़ा फख्र करते हैं कि मुसलमान, विशेष रूप से अरब लोग, सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान, विज्ञान और हिकमत में यूरोपीय कौमों से बहुत आगे बढ़े हुए थे. जाबिर बिन इय्यान, अबू उसमान, बू अली सीना जैसे वैज्ञानिक व हकीम मुसलमानों ने दिए हैं. विश्व को 'सिफर' (शून्य) से मुसलमानों ने ही अवगत कराया. लेकिन यह विडंबना ही है कि मुसलमान आज भी सिफर को ही पकड़े हुए बैठा है और दुनिया आगे बढ़ गई. अरब, जहां दौलत की रेलपेल हो गई है, ऐशोइशरत में डूबे हुए हैं और एशियाई मुसलमान धर्मांधता में पिछड़ेपन को नियति मान बैठा है.

चंद संपन्न मुसलमानों को छोड़ दीजिए तो आम मुसलमान लोगों के महल्ले अपनी विकृत सभ्यता व संस्कृति की दुहाई देते हुए मिलेंगे. पिछड़ेपन के साथसाथ गंदगी, उजड्डपन, गंवारपन इन के उल्लेखनीय संकेत बन गए हैं. पाकिस्तान वासी नोबेल पुरस्कार विजेता अब्दुल जब्बार के अतिरिक्त पिछली कुछ सदियों में ऐसा कोई उल्लेखनीय नाम प्रकाश में नहीं आया.

मुसलमानों को इस की चिंता भी नहीं है. चिंता है तो केवल इतनी कि इसलाम को मिटाने का षड्यंत्र सारे विश्व में फैला हुआ है. वह हर तरह से दयनीय व असुरक्षित हो चुका है. अब इसलाम पर सख्ती से चलने से ही मुसलमानों का हित है. इसी लिए पाकिस्तान में निजामे मुस्तफा का हौवा खड़ा कर के कोड़े फटकारे जा रहे हैं. आयतुल्लाह खुमैनी प्रगति के पथ पर बढ़ते हुए ईरान को मध्यकालीन देश बनाने की हास्यास्पद कोशिश कर रहे हैं

दहशत से इसलाम का न कभी भला हुआ है, न होगा. भारत में जमायते इसलामी, इत्तहादे वाहमी व मुसलिम लीग जैसी सांप्रदायिक संस्थाएं मुसलमानों को हक दिलवाने के नाम पर उन को पंगु बना रही हैं. वे मुसलमानों को पृथकतावादी बना कर राष्ट्रीय धारा से मोड़ने की कुचेष्टा करती हैं. अलगावपूर्ण नीति मुसलमानों के लिए सदैव घातक सिद्ध हुई है, इसे कोई स्वीकार नहीं करता.

समय सदैव परिवर्तनकारी होता है. समय का साथ देना ही वास्तव में बुद्धिमानी है. बिजली के युग में आज अगर कोई कहे कि मैं अपने घर में दीपक जला कर बैठूंगा क्योंकि मेरे पूर्वज ऐसा ही करते थे तो लोग उसे मूर्ख कहेंगे. जमाना बदलता है तो जमाने की कदरें भी बदल जाती हैं. जरूरत है कि हम लकीर के फकीर न बने रहें. जमाने के साथ कदम से कदम मिला कर चलें. इस के लिए सवाल सिर्फ हौसले का है. रूढ़िवादी केंचुली उतार कर विवेक जगाने का है. अपनी हांडी पकाने वाले कठमुल्लाओं के चंगुल से निकलने का है. ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भगवान की दुकानें

ज्योतिर्मय

भोलीभाली जनता की कमाई पर पंडेपुजारियों की ऐश

पिछले दिनों हरिद्वार में एक मंदिर का शिलान्यास समारोह हुआ. समारोह एक ट्रस्ट द्वारा बनवाए जा रहे 'भारत माता मंदिर' के लिए किया गया था. उसी अवसर पर बताया गया कि निर्माण की जा रही इमारत में करीब 35 लाख रुपए खर्च किए जाएंगे.

हैदराबाद में वेंकटेश्वर भगवान का एक मंदिर बन रहा है. इस मंदिर में 1,000 टन संगमरमर लगाया जाएगा तथा करीब 85 लाख रुपए खर्च होंगे.

सन 1917 में द्वारकापीठ के शंकराचार्य ने नासिक में एक मंदिर का प्राणप्रतिष्ठा समारोह कराया था. इस मंदिर के निर्माण में करीब 85 लाख रुपए लगे.

दिग्विजय द्वार

गुजरात के सोमनाथ मंदिर के बारे में खबर है कि वहां का प्रवेशद्वार भगवान की गौरव गरिमा के अनुकूल नहीं लग रहा था. इसलिए पांच लाख रुपए की लागत से दिग्विजय द्वार बनवाया गया, ताकि भक्तगण दूर से ही भगवान का ऐश्वर्य देख कर चमत्कृत हो सकें.

इस तरह की ढेरों सूचनाएं हैं, विस्तारभय से जिन का यहां उल्लेख नहीं किया जा रहा है. उन सब सूचनाओं का सारांश यह है कि देश में नए मंदिरों का निर्माण द्रुतगति से हो रहा है और पुराने मंदिरों की शानशौकत जोरशोर से बढ़ाई जा रही है. पूरे देश में इस समय करीब 15 लाख मंदिर हैं. किसी गांव में कोई मकान पक्का हो या न हो, भगवान के लिए एक बहुत बढ़िया इमारत जरूर मिल जाती है, जिसे मंदिर कहते हैं.

1971 की जनगणना के अनुसार अपने देश में गांवों की कुल संख्या 5,75,721 है. इन में से करीब ढाई लाख गांव ऐसे हैं जिन की आबादी एक हजार के आसपास है. इन्हें बड़े गांव भी कहा जा सकता है. औसतन प्रत्येक गांव में तीन मंदिर हैं. शेष सवा तीन लाख गांवों में, जहां की आबादी 500 से 700 तक है, अनुमानतः औसतन दो मंदिर हैं. कसबों और शहरों में तो और अधिक मंदिर होते हैं. पचीस हजार की आबादी वाले वृंदावन में ही करीब 1,000 मंदिर हैं. वृंदावन चूंकि तीर्थ स्थान है, इसलिए वहां की संख्या को मानदंड नहीं बनाया जा सकता. फिर भी इतने बड़े कसबों में 25-30 मंदिर आसानी से गिने जा सकते हैं.

शहरों में तो यह संख्या और भी ज्यादा है. फिर भी 3,000 कसबों व शहरों में 30 मंदिरों का औसत माना जाए तो करीब एक लाख मंदिर हुए. बड़े गांवों में 7.50 लाख और छोटे गांवों में 6.50 लाख तथा कसबों व शहरों में एक लाख. इस प्रकार मोटे तौर पर 15 लाख मंदिर अपने देश में हैं.

वास्तविक संख्या इस से अधिक ही होनी चाहिए, क्योंकि अभी तक न तो मंदिरों की गणना की गई है और न ही इस ओर ध्यान दिया गया है. इन आंकड़ों का आधार एक सीमित क्षेत्र का सर्वेक्षण ही है, जिस में धार्मिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण तीर्थों को सम्मिलित नहीं किया गया था, जो संख्या में कम नहीं हैं. उन स्थानों को भी इस सर्वेक्षण में सम्मिलित नहीं किया गया, जहां छोटेमोटे स्थानीय देवीदेवताओं की मूर्ति बिठा कर कमरेनुमा छोटे मंदिर बना दिए गए हैं. इस प्रकार मंदिरों की संख्या 15 लाख से अधिक ही है, कम किसी तरह भी नहीं.

नए मंदिरों का निर्माण

इस के अलावा नए मंदिरों का निर्माण भी द्रुतगति से हो रहा है. आए दिन कहीं न कहीं छोटेबड़े नए मंदिरों का निर्माण होता ही रहता है. शहरों और कसबों में जिस गति से रिहायशी इमारतों की संख्या बढ़ती जा रही है, उसी गति से नए मंदिर भी बनते जा रहे हैं, यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं है.

रहने के लिए मकान बनाते समय तो फिर भी अपनी हैसियत का ध्यान रखा जाता है लेकिन मंदिर बनवाने के लिए पहले ही तय कर लिया जाता है कि कितना खर्च करना है. फिर उसी हिसाब से चंदा इकट्ठा किया जाता है और फंड बनाए जाते हैं.

मंदिर बनाने और चलाने वाले इस जरिए से जीविका ही नहीं कमाते, दोनों हाथों से धन बटोरते हैं. कुल मिला कर यह कि मंदिरों के रूप में भगवान की दुकानें धड़ल्ले से चल निकलती हैं और चल रही हैं.

एक सर्वेक्षण के अनुसार देश भर में फैले 15 लाख मंदिरों के पास इस समय 100 अरब रुपए से भी अधिक की संपत्ति संगृहीत है. इमारतों, सोनेचांदी के आभूषणों, जमीन, मकान और दुकानों के रूप में इतनी संपत्ति होना अस्वाभाविक नहीं है. इस प्रकार भगवान को यदि इस देश का सब से बड़ा पूंजीपति, सर्वाधिक धनसंपन्न और सब से बड़ा अमीर कहा जाए तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए.

फायदेमंद कारोबार

मजे की बात तो यह है कि जिस के नाम की दुकानें देश में यत्रतत्र सर्वत्र फैली हुई हैं, वह अमूर्त है और उस का अस्तित्व भी संदिग्ध है. लेकिन उस का सारा कारोबार भक्त, पुजारी, पंडे, पुरोहित और प्रबंधक मिल कर चलाते हैं. वे इस कारोबार में होने वाले लाभ से मौज उड़ाते हैं तथा भोलीभाली जनता की भावनाओं का मजाक उड़ाते हैं.

प्रश्न यह है कि इन मंदिरों में अटकी पड़ी अकूत संपदा और इन से होने वाली बेतहाशा आमदनी का उपयोग क्या होता है? इस का एक ही उत्तर है कि एकपक्षीय लाभ के इस व्यवसाय का पूरा आनंद मंदिरों के अधिकारी और पंडेपुजारी ही उठाते हैं. दूसरे व्यवसायधंधों में तो व्यवसायी और खरीदार दोनों का लाभ होता है, लेकिन इस व्यवसाय में केवल मंदिर के दुकानदार ही फायदा उठाते हैं.

पुण्य के खरीदारों को अपनी अंटी ढीली करने के बदले मिलता है सिर्फ आशीर्वाद, झूठा संतोष और कभीकभी धूर्तों के हाथों छले जाने का पुरस्कार. अन्यथा मंदिरों में फंसी हुई अरबों रुपए की संपत्ति का जनहित में कोई उपयोग नहीं होता. जो भी हो, भगवान की ये दुकानें सब से ज्यादा लाभ देने वाला व्यवसाय कही जा सकती हैं. व्यवसाय भी ऐसा जिस में पूंजी के रूप में कुछ भी नहीं लगाना पड़ता और न ही उत्पादन के लिए कोई श्रम करना पड़ता है. सारे साधन श्रद्धालुजन जुटाते हैं और भगवान के पह-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लुओं को अच्छे से अच्छी सुविधाएं देते हैं. लोगों द्वारा दिए जाने वाले दान तथा चढ़ाए जाने वाली चढ़ौती के रूप में इन लोगों को बेशुमार आमदनी होती है.

तमिलनाडु में पिछले दिनों किए गए एक अध्ययन के दौरान यह तथ्य सामने आया कि इस प्रदेश के 52,000 मंदिरों में 59 मंदिर ऐसे हैं जिन की आय 2 लाख रुपए प्रति वर्ष से अधिक है.

ऐसे मंदिर भी हैं, जिन की वार्षिक आय करोड़ों में है. तिरुपति के भगवान बालाजी के मंदिर में प्रति वर्ष लगभग 12.50 करोड़ रुपया आता है. दूरदूर से आने वाले दर्शनार्थियों में से कई वहां अपना और बच्चों का मुंडन संस्कार कराते हैं. मुंडन के बाद इकट्ठे हुए बालों से ही साल भर में करीब 30 लाख रुपए की आमदनी होती है.

करोड़ों की आमदनी

पुरी के जगन्नाथ मंदिर में प्रति वर्ष करीब आठ करोड़ रुपए की आमदनी होती है. मदुरै के मीनाक्षी मंदिर में लगभग 1.25 करोड़ रुपए हर साल आते हैं. रामेश्वर, बदरीनाथ, वाराणसी और द्वारका के मंदिर भी आमदनी में इन मंदिरों से पीछे नहीं हैं.

करोड़ों रुपए की आय वाले मंदिर संख्या में अधिक नहीं हैं, पर लाखों रुपए की आय वाले मंदिरों की संख्या का 10 प्रतिशत बताई जाती है. अर्थात 15 हजार मंदिर ऐसे हैं जो एक लाख या उस से अधिक आय अर्जित करते हैं.

आय के स्रोत दर्शनार्थियों द्वारा चढ़ाए जाने वाले दान तक ही सीमित नहीं समझने चाहिए. अधिकांश मंदिरों के पास, उन के निर्माण के समय निर्माण कराने वालों द्वारा सौंपी गई अचल संपत्ति है. खेती लायक जमीन, किराए पर देने के लिए मकान और दुकान तथा कुछ परिवारों द्वारा नियमित रूप से दिया जाने वाला चंदा भी आय के स्रोत हैं.

इन [illegible] में लगी पूंजी और संभावित आय का यह थोड़ा सा विवरण है. निस्संदेह सभी मंदिरों को एक ही श्रेणी में नहीं रखा जा सकता. मोटे तौर पर इन्हें दो वर्गों में बांटा जा सकता है. एक वर्ग है छोटे मंदिरों का, जिन की देखभाल एक ही परिवार या पुजारी करता है. इन्हें निजी स्वामित्व में चलने वाले मंदिर कह सकते हैं. दूसरे वर्ग के मंदिर बड़े होते हैं, जिन की देखरेख किसी समिति या ट्रस्ट द्वारा की जाती है. मंदिर व्यवसाय का अध्ययन करने के लिए इन दोनों वर्गों का विवेचन करना उचित रहेगा.

सरकारी खजानों से वेतन

निजी स्वामित्व वाले मंदिरों का लगभग एक सा इतिहास है. इन्हें किसी राजा, सामंत या जागीरदार द्वारा बनवाया गया अथवा अब संपन्न घरानों के लोग इन का निर्माण कराते हैं. इन में कर्मचारियों या पुजारियों के भरणपोषण की व्यवस्था करते हुए उन की नियुक्ति कर दी गई.

रियासतों द्वारा बनवाए गए मंदिरों में पुजारियों को कई स्थानों पर अभी भी सरकारी खजानों से वेतन अथवा पूजा-अर्चना का खर्च मिलता है. राजामहाराजाओं द्वारा ऐसे मंदिरों का निर्माण प्रायः किसी खुशी के मौके पर कराया जाता था.

उदाहरण के लिए ग्वालियर रियासत के महाराज जिवाजीराव सिंधिया ने अपने उत्तराधिकारी का जन्म होने की खुशी में राज्य की सभी तहसीलों में महादेव मंदिर बनवाए और उन का नाम जयेश्वर मंदिर रखा.

इस श्रेणी के लगभग सभी मंदिरों को निर्माणकर्ताओं द्वारा थोड़ीबहुत जमीन-जायदाद भी दे दी गई थी. पूजा और चढ़ावे के अलावा उस जमीनजायदाद से होने वाली आय से नियुक्त पुजारियों का निर्वाह चलता रहा. वंशपरंपरा के अनुसार नए उत्तराधिकारी बनने वाले नए पुजारी भी

अपने पैतृक कार्य में लगे रहे.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस व्यवस्था के कारण आए दिन कई स्थानों पर विवाद भी उठते रहते हैं और अदालतों में मुकदमेबाजी चलती रहती है. कारण यह कि निर्माण के तुरंत बाद तो इन मंदिरों में निश्चित ही एक पुजारी की नियुक्ति की गई होगी पर उन की संतानें बढ़ती गईं और वे सभी मंदिर की संपत्ति व पूजा में हिस्सेदार बनीं.

धर्म का पेशा

कुछ समझदार लोग लड़ाईझगड़े और झंझट से बच कर दूसरा रास्ता अपना लेते हैं. वह रास्ता पूजापंडिताई छोड़ कर कोई दूसरा धंधा अपनाने का नहीं होता. हालांकि कुछ प्रगतिशील विचारों के युवक इस सड़ेगले व्यवसाय को छोड़ कर जीविका के दूसरे साधन भी अपनाते देखे गए हैं.

अधिकांश मामलों में लड़ाईझगड़े से बचने के लिए नए मंदिर ढूंढ़ते या बनवाते देखे गए हैं. इस प्रकार एक ही वंशपरंपरा के विभिन्न परिवार आठदस मंदिरों में पूजा करते हुए तो किसी भी शहर में देखे जा सकते हैं. न मिली पूजा तो पुरोहिताई ही अपना ली, पर एक बार धर्म की रोटी खा लेने के बाद संतानें भी उस पेशे को मुशकिल से ही छोड़ पाती हैं.

एक ही परिवार की देखरेख में चलने वाले कारोबारी मंदिरों में प्रायः कम झगड़े होते हैं. यदि होते भी हैं तो आपसी झगड़े कम और दूसरों से ज्यादा. जैसे किराएदार ने समय पर किराया नहीं दिया तो पुजारी उस से झगड़ पड़ते हैं, मंदिर के किसी उत्सव या निर्माण में चंदा नहीं मिला तो किराएदारों पर खीझ निकाल लेते हैं. दर्शनार्थी ने कम भेंट चढ़ाई तो महंतजी नाराज हो जाते हैं. कुछ नहीं तो ऐसे व्यक्ति की उपेक्षा और मुंह पर ही भर्त्सना कर दी जाती है.

यह बात अलग है कि थोड़ेबहुत पुजारी शालीन बने रहते हैं. लेकिन जो पुजारी पूरी तरह मंदिर पर ही आश्रित हैं, उन्हें अपेक्षा से कम मिलने पर खीझ तो होती ही है.

झगड़ेफसाद

छोटे या निजी स्वामित्व वाले मंदिरों में छोटीछोटी बातों को ले कर झगड़ेफसाद होते हैं तो बड़े मंदिरों में मोटे हितों को ले कर कलह व द्वंद्व मचा रहता है. बड़े मंदिरों से आशय समितियों या ट्रस्टों के अधीन चलने वाले देवस्थानों से है. समिति या ट्रस्ट का गठन समान उद्देश्यों को ले कर किया जाता है और आए दिन कथा, सत्संग, कीर्तन, प्रवचन, रात्रि जागरण, पर्व, उत्सव और त्योहार समारोह के आयोजन किए जाते हैं.

इन आयोजनों का उद्देश्य मंदिर को सार्वजनिक आकर्षण का केंद्र बनाए रखना ही होता है ताकि लोगों की भीड़भाड़ बनी रहे. उस से सस्ती ख्याति और आर्थिक लाभ भी मिलता रहता है. ख्याति इसलिए कि जनसाधारण की निगाह में ऐसे संस्थान धार्मिक गतिविधियां चलाते रहने के श्रेयभागी होते हैं. संस्थान की प्रशंसा के साथ उस के प्रबंधकों की नामवरी और चर्चा भी होती ही है.

लाभ का एक पहलू यह है कि इस बहाने लोगों का आनाजाना बना रहता है तो दानदक्षिणा भी मिल जाती है. ऐसे खास अवसरों पर मंदिर के गेट पर दोचार लोग अलग से बैठा दिए जाते हैं जो मंदिर की किसी नई आवश्यकता के लिए चंदा लेते और रसीद फाड़ते रहते हैं. इस के अलावा ये लोग मंदिर के बाहर भी गलीमहल्लों और बाजारों में जा कर घरों व दुकानों से किसी न किसी बहाने चंदा इकट्ठा करते रहते हैं.

लोग तो समझते हैं कि उन्हें रसीद मिल गई इसलिए उन का पैसा धर्मकार्य में ही लगेगा. पर वास्तव में वह पैसा कहां जाता है, इस का किसी को पता नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहता और कितना पैसा इकट्ठा हुआ इस की जानकारी भी किसी को नहीं मिलती.

निर्माण के बहाने चंदा

कभीकभी मंदिर में किसी नए निर्माण के बहाने भी चंदा इकट्ठा किया जाता है. प्रवचन हाल, सत्संग भवन, खाली जगह पर कमरे बनवाने, अतिथियों के निवास की व्यवस्था या मंदिर की मरम्मत जैसे अनेक बहाने ढूंढ़ लिए जाते हैं और उन के लिए पर्याप्त रकम इकट्ठी की जाती रहती है, जैसे किसी राहत कार्य के लिए चंदा उगाया जा रहा हो. इस रकम से थोड़ाबहुत निर्माण भले ही करा लिया जाता है अन्यथा सारी राशि प्रबंधकों और ट्रस्टियों की जेबों में चली जाती है.

प्रायः ऐसे निर्माण कार्यों को आरंभ करने के बाद उन्हें अधूरा छोड़ दिया जाता है ताकि धनाभाव का कारण बता कर लोगों से चंदा लेने का काम चलता रहे.

उदाहरण के लिए मथुरा में कृष्णजन्म स्थान पर भागवत भवन का निर्माणकार्य वर्षों से चल रहा है. लेकिन वह अभी तक पूरा नहीं हुआ है. इस का कारण यही बताया जाता है कि कोष में पर्याप्त राशि नहीं है और लोग इस कमी को पूरा करने के लिए मुक्तहस्त से दान देते रहते हैं.

सन 1962 में गठित रामास्वामी अय्यर आयोग ने धार्मिक ट्रस्टों व मंदिरों की व्यापक छानबीन करने के बाद जो रिपोर्ट तैयार की थी, उस में इस तरह के अनेक मामलों का उल्लेख किया गया है.

स्मरणीय है कि धार्मिक ट्रस्ट वैधानिक मर्यादाओं के अंतर्गत गठित किए जाते हैं. उन के नियम और प्रतिबंध रहते हैं. साथ ही ट्रस्टों को कुछ सुविधाएं भी दी जाती हैं. अय्यर आयोग ने बताया था कि ट्रस्टी छूट की सुविधाओं का तो भरपूर लाभ उठाते हैं पर नियमों व मर्यादाओं की अकसर उपेक्षा करते हैं. जैसे, ट्रस्टों को अपने आयव्यय का पूरा हिसाब रखना पड़ता है. उस हिसाब की सरकारी अधिकारियों द्वारा जांच की जाती है. लेकिन ट्रस्टी वास्तविक आय छिपा लेते हैं और उस का एक बड़ा भाग अपनी जेब में डाल लेते हैं.

प्रबंध समिति के सदस्य और ट्रस्टी सार्वजनिक संपत्ति का किस प्रकार दुरुपयोग करते हैं, उस के भी कई प्रकरण अय्यर आयोग के सामने आए थे.

सार्वजनिक संपत्ति का दुरुपयोग

आयोग की रिपोर्ट में कुछ तो बेहद विस्फोटक तथ्य उद्घाटित किए गए. उन में से एक तंजौर के बृहदेश्वर मंदिर से संबंधित था. इस मंदिर के पास धान की खेती की 60,000 एकड़ उपजाऊ जमीन है. जब जांच अधिकारी मंदिर में जांच करने के लिए पहुंचे तो तमिलनाडु का धान कटोरा कही जाने वाली इस जमीन में से 40,000 एकड़ जमीन का कोई हिसाब ही नहीं था.

इसी प्रकार पुरी के जगन्नाथ मंदिर की 10 एकड़ जमीन केवल 2,000 रुपए में बेच दी गई. बंबई के बाबुलनाथ मंदिर में 40 वर्षों से कई स्वर्णाभूषणों को बैलेंस-शीट से एकदम साफ ही कर दिया गया. नाथद्वारा के बड़े पुरोहित ने मंदिर के फंड से 9 लाख रुपए निकाल लिए. द्वारका के एक वरिष्ठ पुजारी ने तो मंदिर से 12,000 रुपए निकाल कर सट्टेबाजी में ही लगा दिए.

अय्यर आयोग वर्षों तक जांचपड़ताल के बाद इस तरह के प्रकरण सामने लाया था. इस बात को 14-15 वर्ष हो चुके हैं. तब से ले कर अब तक इन प्रवृत्तियों में सुधार हुआ होगा, ऐसा नहीं लगता. प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर तो ये गड़बड़ियां बढ़ी ही लगती हैं.

देश में तब की अपेक्षा अपराधों की संख्या इन दिनों बढ़ी ही है, नैतिक स्तर में भी गिरावट आई है और भ्रष्टाचार,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रिश्वतखोरी, अवसरवादिता की कृतियां भी कम होने के स्थान पर और अधिक फैली हैं. तो मंदिरों में ही कौन सा सुधार हो सकता है?

गंभीर अनियमितताएं

अय्यर आयोग की जांच का क्षेत्र भी सीमित ही था. आयोग ने प्रत्येक ट्रस्ट या मंदिर की जांचपड़ताल तो की नहीं. इस के बाद भी सैकड़ों नए मंदिर बने हैं तथा नए ट्रस्टों का गठन हुआ है. इन ट्रस्टों द्वारा कोई रचनात्मक क्रियाकलाप भी नहीं चलाए जाते तो आखिर उन्हें बनाने का आकर्षण क्या हो सकता है? यह विचारणीय है और इसी निष्कर्ष पर पहुंचना पड़ता है कि बड़े मंदिरों में बड़ी व गंभीर अव्यवस्था, अनियमितता तथा भ्रष्टताएं हैं.

प्रबंध समितियों अथवा ट्रस्टों की देखरेख में चलने वाले मंदिरों के पास बेशुमार दौलत रहती है. इन के पीछे कोई उद्देश्य तो होता नहीं, इसलिए संचित संपदा का उपयोग मौज उड़ाने और विलासी जीवन बिताने में ही किया जाता है. संबंधित व्यक्तियों में यह होड़ जमी रहती है कि कौन इस संपदा का अधिकतम उपभोग करता है.

इस तरह की कमाई के लिए खून-पसीना एक तो करना नहीं पड़ता, इसलिए अनैतिक दुष्प्रवृत्तियों, शराबखोरी, व्यभिचार, ठगी, बेईमानी और आपराधिक कृत्यों की ओर ही बुद्धि दौड़ती है. यह सब कुछ अपनी आंखों के सामने होते देख कर भी मंदिर में बैठे भगवान चुप रहने में ही भला समझते होंगे.

बहरहाल भगवान के नाम पर चलने वाली ये दुकानें किसी भी दृष्टि से समाज के लिए उपयोगी नहीं हैं. न वहां लोगों को शिक्षा मिलती है और न ही कोई दिशा प्रेरणा. केवल थोड़े से लोगों द्वारा चलाए जा रहे इस तंत्र से उन्हीं लोगों को थोड़ा-बहुत लाभ मिल जाता है, जो उन के कृपापात्र बन पाते हैं.

भगवान चुप क्यों?

माना कि सभी पुजारी, प्रबंधक या ट्रस्टी इतने गिरे हुए नहीं होते. लेकिन अरबों की संपत्ति पर कुंडली मार कर बैठे भगवान और उन की दुकानों की उपयोगिता क्या है? समाज हित में उन का क्या उपयोग होता है? कुछ नहीं.

इसलिए उचित यही है कि मंदिरों को पेशेवर लोगों से मुक्त कराया जाए और उन की संपत्ति, साधनों व इमारतों का उपयोग इनसान को सुखी, शिक्षित व संपन्न बनाने में किया जाए.

साथ ही नए मंदिरों का निर्माण तो तुरंत ही बंद कर देना चाहिए. जब पुराने मंदिरों की ही कोई उपयोगिता नहीं है तो नए मंदिरों के निर्माण द्वारा पेशेवर धर्मजीवियों की संख्या बढ़ाने का क्या औचित्य हो सकता है. ●●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वेदों में नारी

सोमा सबलोक

मानवता विरोधी प्रचार करने वाले ग्रंथों में नारी का घिनौना रूप अकल्पनीय.

स्वतंत्र भारत के संविधान में स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार दिए गए हैं. उन के साथ धर्म, जाति, रंग और लिंग के आधार पर भेदभाव न करने का कानून है. पर व्यावहारिक दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि समान अधिकार दिए जाने के बावजूद स्त्रियों के साथ समानता का बरताव नहीं हो रहा.

प्राचीन काल की भांति आज भी उन का जीवन पूर्णतया सुरक्षित नहीं है. नित्य ही हम उन के साथ बलात्कार की, दहेज कम लाने के कारण उन्हें जीवित जला देने की और कभीकभी घर से निकाल देने की अप्रिय घटनाएं सुनते, पढ़ते और देखते हैं. नारी की इस दुर्गति का इतिहास बहुत पुराना है.

वेदों में नारी का तिरस्कार

विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ वेद हैं. इन से नारी के अपमान और तिरस्कार के जिन अमानवीय तौरतरीकों का पता चलता है, वे बहुत आपत्तिजनक और निंदनीय हैं. इन्हीं के अनुकरण पर बाद के धर्मग्रंथों के रचयिताओं ने अपनी तरफ से मिर्चमसाला लगा कर नारी की और ज्यादा छीछालेदर की, जिस के फलस्वरूप आज भी उस की दुर्गति हो रही है.

नारी की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार सती प्रथा, दासी प्रथा, नियोग प्रथा आदि का वेदों में वर्णन मिलता है. इन के माध्यम से कामी और क्रूर धूर्तों ने नारी की जी भर कर बेइज्जती की है और अपनी वासना की आग को बुझाया है.

वेदों से पता चलता है कि लड़की पिता की अनिच्छित संतान हुआ करती थी. सभी यही कहा करते थे कि फलां के पुत्र पैदा कर, फलां के पुत्र हो, फलां पुत्रवती हो आदि. ऐसा कोई भी नहीं कहता था कि फलां के लड़की पैदा हो. पुत्र पैदा होने पर खुशियां मनाई जाती थीं और लड़की पैदा होने पर शोक मनाया जाता था.

लड़की अनिच्छित संतान

यह शर्मनाक रिवाज आज तक अपने उसी रूप में मौजूद है. लड़की के पैदा होने पर हिंदुओं के मुख से 'हाय' की आवाज निकलती है और लड़का पैदा होने पर 'आहा' की.

लड़का पैदा हो, ऐसी इच्छा ऋग्वेद (10/84/45) में देखी जा सकती है, जहां नवविवाहिता दुल्हन को 10 पुत्रों का आशीर्वाद दिया गया है.

वेदों में पुत्रप्राप्ति के लिए संस्कार विशेष का प्रचलन था, जिसे 'पुंसवन संस्कार' कहा जाता था. इस में कहा गया है कि :

प्रजापतिरनुमतिः सिनीवाल्य चीक्लृपत.

स्त्रैषूयमन्यत्र दधत्पुमांसमु दधदिह.
(अथर्व., 8/1/3)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अर्थात हे प्रजापति, अनुमति और सिनीवाली, तुम्हीं ने इस गर्भ को बनाया है. स्त्री का जन्म कहीं और हो पर इस गर्भ से पुत्र उत्पन्न हो.

इसी प्रकार अथर्ववेद (2/3/23) में पुत्र जन्म के लिए अभिचार किया गया है.

गर्भ संरक्षण के लिए एक संदर्भ में कहा गया है :

पिंग रक्ष जायमानं मा पुमांसं स्त्रियं क्रन.
(अथर्व., 8/6/25)

अर्थात हे पति, उत्पन्न होने वाले पुत्र की रक्षा करो. उसे स्त्री न बनाओ.

यजुर्वेद के व्याख्यान शतपथ ब्राह्मण (5/3/2/2) में पुत्रहीन स्त्री को बुराभला कहते हुए उसे अभागिन कहा गया है.

ऋग्वेद में नारी निंदा करते हुए लिखा है :

इंद्रश्चिदा तदब्रवीत स्त्रिया अशास्यं मनः,
उतो अहं क्रतुं रघुम्.
(ऋग्वेद, 8/33/17)

अर्थात स्वयं इंद्र ने कहा है, स्त्री के मन को शिक्षित नहीं किया जा सकता. उस की बुद्धि तुच्छ होती है.

इसी पुस्तक में एक दूसरी जगह लिखा है :

न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति,
सालावृकाणां हृदयान्येता.
(ऋ., 10/95/15)

स्त्रियों के साथ मैत्री नहीं

अर्थात स्त्रियों के साथ मैत्री नहीं हो सकती. इन के दिल लक्कड़बग्घों के दिलों से क्रूर होते हैं.

यजुर्वेद (तैत्तिरीय संहिता) का कहना है कि स्त्रियां बिना शक्ति की हैं, उन्हें संपत्ति में भाग नहीं मिलता. व दुष्ट से भी दुर्बल ढंग से बोलती हैं. मंत्र इस प्रकार है :

तस्मात्स्त्रियो निरिन्द्रिया अदायादीरपि
पापात्पुंस उपस्तितरं वदंति.
(यजु., 6/5/8/2)

यजुर्वेद के व्याख्यान शतपथ ब्राह्मण के अनुसार स्त्री, शूद्र, कुत्ते और कौए में असत्य, पाप एवं अंधकार विराजमान रहता है. (14/1/1/31)

ऋग्वेद के व्याख्यान ऐतरेय ब्राह्मण में हरिश्चंद्रनारद संवाद में नारद कहता है : कृपणं ह दुहिता (ऐ. ब्रा., 7/3/1) अर्थात पुत्री कष्टप्रदा और दुख देने वाली होती है.

नारी की बेइज्जती

स्त्रियों की निंदा करने के लिए और उन्हें नीचा दिखाने के लिए पशुओं को उन के साथ संभोग करते या उन द्वारा पशुओं को यह कहते कि 'मेरे साथ संभोग करो' दिखाया गया है. इस से ज्यादा नारी की बेइज्जती और क्या हो सकती है कि कोई पशु उस से संभोग कर रहा है? यजुर्वेद में ऐसे वर्णन स्थानस्थान पर देखने को मिलते हैं जहां यजमान की मुख्य पत्नी को घोड़े के साथ संभोग करते दिखाया गया है.

उदाहरण के लिए यजुर्वेद के निम्नलिखित मंत्र देखे जा सकते हैं :

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे, प्रियाणां त्वा प्रियपतिं हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे वसो मम आहमजानिगर्भधमा त्वमजासि गर्भधम. (यजु., 23/19)

महीधरभाष्य : सर्वाः पत्न्यः प्राणशोधनात्प्राक् अश्वं त्रिस्त्रिः परियं परियन्ति. हे अश्व, वयं त्वां हवामहे आह्वयामः, कीदृशं त्वाम्? गणपतिं गणानां मध्ये गणपतिरूपेण पालकम्, प्रियाणां वल्लभानां मध्ये प्रियपतिं प्रियस्य पालकम्. निधीनां सुखविधीनां मध्ये सुखनिधेः पालकं त्वां हवामहे. हे वसुरूप अश्व, मम पतिस्त्वं भूया इतिशेष. . .प्रक्षालितेषु शोधितेषु पशूनां प्राणेषु पत्नीभिरध्वर्युणा यजमानेन प्रागशोधने कृते महिषी अश्वसमीपे शेते. अश्वदेवत्यम. हे अश्व, गर्भधं गर्भं दधाति गर्भधं गर्भधारकं रेतः अहम आ अजानि आकृष्य क्षिपामि. लोट. तं च गर्भध रेतः आ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अजासि आकृष्य क्षिपसि.

अर्थात यजमान की सब पत्नियां अश्व की तीन [illegible] करती हैं व अश्व की स्तुति करती हुई कहती हैं--"हे घोड़े, तुम गणरूप से पालक हो, प्रियों के पालक हो और सुख की निधि हो. हे घोड़े, तुम मेरे पति बन जाओ." पत्नियों और अध्वर्यु (पुरोहित) द्वारा पशु की शुद्धि कर देने के बाद मुख्य पत्नी घोड़े के समीप सोती है और प्रार्थना करती है--"हे घोड़े, मैं गर्भ स्थापित करने वाला वीर्य खींच कर फेंकती हूं और तू उस गर्भ स्थापित करने वाले वीर्य को खींच कर फेंकता है."

ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवायां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु. (23/20)

महीधरभाष्य : तौ त्वमहं च उभौ चतुरः पदः पादनांवा संप्रसारयाव तव द्वौ यम द्वौ एवं संवेशन प्रकार...अधीवासेनाश्व-महिष्यौ छादयति अध उपरिष्टाच्चाच्छा-दनक्षमं वासोऽधीवासः. . .महिषी स्वय-मेवाश्वशिश्नमाकृष्य स्वयोनौ स्थापयति. अश्वदेवत्यम्. वाजी अश्वो रेतो दधातु मयि वीर्यं स्थापयतु कीदृशोऽश्वः वृषा सेक्ता रेतोधाः रेतो दधातीति रेतोधाः वीर्यस्य धारयिता.

अर्थात हे घोड़े और हे मुख्य पत्नी, तुम दोनों दोदो टांगों को फैलाओ. फिर अध्वर्यु कहता है कि यज्ञभूमि को ढक दो, शमियाना वगैरा लगा दो. तब यजमान की मुख्य पत्नी घोड़े के लिंग को खींच कर अपनी योनि में स्थापित करती है और कहती है कि यह वीर्य सींचने वाला घोड़ा मुझ में वीर्य स्था-पित करे.

इस के बाद यजमान घोड़े से प्रार्थना करते हुए कहता है :

उत्सक्थ्यः अवगुदं धेहि समञ्जिं चारया वृषन्. यः स्त्रीणां जीवभोजनः. (23/21)

महीधरभाष्य : हे वृषन सेक्तः अश्व, महिष्या गुदमव गुदोपरि रेतो धेहि वीर्यं धारय, कीदृश्याः उत्सक्थ्याः उत्ऊर्ध्वे सक्थिनी ऊरू यस्याः सा उत्सक्थी तस्याः कथं तदाह, अञ्जिं लिंगं संचारय. अनक्ति व्यनक्ति पुंस्त्वमित्यञ्जिर्लिंगम् लिंग योनौ प्रवेशय. [illegible] स्त्रीणां जीवभोजनः जीव-यति जीवः भोजयति भोजनः जीवश्चासौ भोजनश्च जीवभोजनः यस्मिन् लिंगे योनौ प्रविष्टे स्त्रियो जीवंति भोगांश्च लभंते तं प्रवेशय.

अर्थात हे घोड़े, मेरी पत्नी की गुदा के ऊपर के भाग पर तुम वीर्य फेंको. तुम अपने लिंग को फैलाओ और योनि में प्रविष्ठ करो, क्योंकि यह लिंग योनि में जा कर स्त्रियों को जीवित और आनंदित करता है.

बहुपत्नी प्रथा

वैदिक काल में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी. इस के मुताबिक एक व्यक्ति की कई-कई पत्नियां हुआ करती थीं और उन का सारा समय प्रायः इसी बात में व्यतीत हो जाता था कि वे कैसे अपनी सौतों को नष्ट कर के पति की मुख्य कृपापात्र बन सकें. ऋग्वेद (10/45) और अथर्ववेद (3/18) में इस प्रकार के जिक्र स्पष्ट मिलते हैं.

उस समय के आर्य लोग यहां के मूल निवासियों या अपने ही दूसरे कबीलों पर हमले कर के उन की स्त्रियों को लूट व छीन लिया करते थे. इस तरह जो ज्यादा लड़ाकू व बदमाश होता उस के पास उतनी ही ज्यादा पत्नियां होतीं. इस तरह बहु-पत्नी प्रथा ने स्त्री के स्तर को गिराने में बहुत मदद की.

ऋग्वेद (10/159) में लिखा है कि इंद्र की कई रानियां थीं, जिन्हें उस की मुख्य पत्नी ने हरा दिया था या मार दिया था. ऋग्वेद के व्याख्यान ऐतरेय ब्राह्मण (33/1) में आता है कि हरिश्चंद्र की एक सौ पत्नियां थीं. यजुर्वेद (23/24/26/28) में अश्वमेध के प्रसंग में राजा की कई पत्नियों द्वारा यज्ञ में भाग लेने का जिक्र मिलता है. इसी वेद के व्याख्यान-स्वरूप शतपथ ब्राह्मण (13/4/1/9) में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिखा है कि अश्वमेध में चार पत्नियां सेवा करती हैं. इसी वेद के एक दूसरे ब्राह्मण (तैत्तिरीय ब्राह्मण, 3/8/4) में लिखा है कि पत्नियां सचमुच संपत्ति के समान हैं.

जिस प्रकार एक आदमी की बहुत सी पत्नियां (विवाहित व दासियां) होती थीं उसी प्रकार बहुत से आदमियों की संयुक्त पत्नी भी हुआ करती थी. अथर्ववेद के नीचे लिखे मंत्रों द्वारा इस बात की पुष्टि होती है.

आ रोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पतिभ्यो वहतुं कृणुत्व. (अथर्व., 14/1/61)

अर्थात हे वधू, तू दहेज पर आरोहरण कर और इसे अपने पतियों के लिए शुभकारी बना.

आत्मन्वत्युर्वरा नारीयमागन्तस्यां नरो वपत बीजमस्याम. (अथर्व., 14/2/14)

अर्थात हे पुरुषो, उस उर्वरा नारी में बीजारोपण करो.

मृत पति के साथ जीवित जलाना

वेदों में नारी की दुर्दशा सती प्रथा के द्वारा भी बहुत हुई. पति की मृत्यु हो जाने पर जीवित पत्नी को पति के साथ जला दिया जाता था, ताकि वह जन्मजन्मांतर तक पति की दासी बनी रहे और दासता के बंधन से कभी मुक्त न हो सके.

ऐसा अथर्ववेद से पता चलता है. निम्न मंत्र देखिए :

इयं नारी पतिलोकं वृणाना नि पद्यत उप त्वा मर्त्य प्रेतम्. धर्मपुराणमनुपालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि.

(अथर्व., 18/3/1)

अर्थात हे मृत पुरुष, प्राचीन धर्म का पालन करती हुई और पतिलोक की कामना करती हुई यह स्त्री तेरे पास आती है. तुम इसे परलोक में इसी प्रकार संतान वाली बनाना और इसे धन देना.

ये दोनों ही प्रथाएं नारी की व्यक्तित्व-हीनता और उस के चल संपत्ति होने की सूचक हैं. दोनों में फर्क सिर्फ यह था कि जहां पहली प्रथा के मुताबिक एक व्यक्ति की बहुत सी चल संपत्तियां होती थीं वहीं दूसरी प्रथा के मुताबिक स्त्री साझी चल संपत्ति हुआ करती थी.

अमानवीय व्यवहार

वेदों में विधवा के साथ बहुत अमानवीय व्यवहार किया गया है. ऐसा वर्णन मिलता है कि अभी मृत पति की लाश वहीं पड़ी होती थी कि उस की पत्नी को किसी दूसरे पुरुष या उस के देवर को सौंप दिया जाता था. (स्वामी दयानंद का मत है कि उस का तभी नियोग करवा दिया जाता था). उस के मनोभावों, उस के दुख से किसी का कोई वास्ता नहीं होता था.

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतमुपशेष एहि. हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूथ. (ऋ., 10/18/8)

अर्थात हे नारि, उठो और पुनः सांसारिक जीवन को अपनाओ. तुम व्यर्थ ही अब इस निष्प्राण व्यक्ति के पास लेटी हुई हो. आओ, अब तुम अपने इस नए पति का पत्नीत्व स्वीकार करो जो तुम्हारा हाथ पकड़े हुए है और जो तुम से स्नेह करता है.

इस से पता चलता है कि स्त्री को चल संपत्ति समझा जाता था. जब जिस के जी में आया उसका तथाकथित स्वामी बन गया और रोटी के दो टुकड़ों पर उस का शरीर नोचने लगा.

यदि किसी स्त्री का दोबारा विवाह नहीं होता था तो उस के सिर के बाल काट दिए जाते थे. ऐसा अथर्ववेद (14/2/60) से पता चलता है. इस तरह से बाल काट कर भी उस की बेइज्जती ही की जाती थी. पति के मरने का स्त्री के सिर के बालों से क्या संबंध हो सकता है? साफ जाहिर है कि पति के मर जाने पर स्त्री बेजबान पशु समझी जाती थी और उस के साथ पशुओं जैसा ही व्यवहार किया जाता था.

हिंदू विधवा की स्थिति अत्यंत शोच-

नीय थी. वह अमंगलसूचक थी और विवाहादि उत्सवों में किसी भी प्रकार से भाग नहीं ले सकती थी. उसे संन्यासी का सा जीवन व्यतीत करना पड़ता था. उसे कम भोजन और कम वस्त्र धारण करने पड़ते थे. संक्षेप में, विधवा नारी की बहुत दुर्दशा होती थी.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वेदों में दासी प्रथा का भी जिक्र मिलता है. ऋग्वेद में दासों और दासियों को दान और उपहार के तौर पर दिए जाने के उल्लेख मिलते हैं.

दूसरे कबीलों और खास कर वहां के मूल निवासियों के मनुष्यों को लड़ाई में मार कर उन की स्त्रियों को बंदी बना लिया जाता था और वे उन की दासियां होती थीं. तब वे इन दासियों को एकदूसरे को उपहार के रूप में भेंट करते थे.

राजा लोग अपने परिजनों और पुरोहितों को दासियों से भरे रथों के रथ दान देते थे. (ऋ., 6/27/8, 8/68/17) राजा त्रसदस्यु ने सौभरि कण्व को 50 दासियां प्रदान कीं. (ऋ., 8/19/38, 5/47/6)

इसी प्रकार राजा स्वनय भावयव्य के यहां अपने विवाह के अवसर पर ऋषि कक्षिवान ने रथों में भरी दासियां दहेज में पाईं. (ऋ., 1/126/3, 7/18/22) इन दासियों की संज्ञा 'वधू' थी जिन से बिना किसी विवाह संस्कार के पति कर्म किया जा सकता था.

जनरन वेश्यावृत्ति

ये दासियां उस व्यक्ति की हुआ करती थीं जिस ने शत्रुओं की स्त्रियों के रूप में उन्हें छीना हो या जिसे दहेज में ये मिली हों. इन दासियों के साथ उस व्यक्ति के ही लैंगिक संबंध होते थे जिस की ये होती थीं. लेकिन कुछ दासियां ऐसी भी रखी जाती थीं, जो कबीले की या गांव की साझी संपत्ति समझी जाती थीं. उन से हर व्यक्ति लैंगिग संबंध कायम कर सकता था.

ये गांव या कबीले की संपत्ति दासियां वैदिक काल की वेश्याएं बनीं. 'द वर्ल्ड आफ कोर्टिजंस' के लेखक मोतीचंद्र का मत है कि भाईविहीन लड़कियों को भी बहुत बार वेश्या बना दिया जाता था. (पृ. 10) ये वेश्याएं आज तक भारत में चली आ रही हैं. इन्हें वेदों में भिन्नभिन्न नामों से पुकारा गया है जैसे अतित्वरी (यजु. 30/15), अतिकद्वरी (यजु., 30/15), अपष्कद्वरी (तैत्तिरीय ब्राह्मण, 3/4/11/1).

वेदों से नियोग नामक एक प्रथा का पता चलता है जिसे परवर्ती काल के कई स्मृतिकारों ने पशु धर्म कहा है. नियोग का अर्थ है किसी नियुक्त पुरुष के साथ संभोग द्वारा पुत्रोत्पत्ति के लिए पत्नी या विधवा की नियुक्ति. ऋग्वेद में इस प्रथा का संकेत मिलता है.

बाद में महाभारत के कई पात्रों द्वारा इस प्रथा को व्यवहार में लाने का बहुत स्थानों पर उल्लेख मिलता है. महाभारत के आदिपर्व (अध्याय 95 एवं 103) में आता है कि सत्यवती ने अपने पुत्र व्यास को भीष्म के छोटे भाई विचित्रवीर्य की रानियों में पुत्र उत्पन्न करने के लिए नियुक्त किया था और उस के परिणामस्वरूप धृतराष्ट्र एवं पांडु उत्पन्न हुए थे. स्वयं पांडु ने अपनी रानी कुंती को किसी तपोयुक्त ब्राह्मण से पुत्र उत्पन्न कराने को कहा था. (आदि पर्व अध्याय 120 से 123).

आदि पर्व (अध्याय 64 एवं 104) में आया है कि परशुराम ने जब क्षत्रियों का नाश करना आरंभ किया तो सहस्त्रों क्षत्राणियां ब्राह्मणों के पास पुत्रोत्पत्ति के लिए पहुंचने लगीं. महाभारत में अन्यत्र भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं. धर्मशास्त्रों में नियोग के विषय में विस्तार से कई जगह चर्चा की गई है.

वेद में नियोग

ऋग्वेद में नियोग का संकेत निम्न-

लिखित मंत्र में दिया गया है :

कुह स्विद्दोशा कुह वस्तोरश्विना कुहाभि-पित्वं करतः कुहोषतुः. को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ. (ऋ., 10/40/2)

अर्थात हे अश्वनौ, यज्ञ करने वाला अपने घर में वैसे ही पुकार रहा है जैसे विधवा अपने देवर को बुलाती है. वेद के एक पुराने व्याख्यान निरुक्त (3/15) में देवर का अर्थ 'द्वितीय वर' किया गया है. नवीं शताब्दी में हुए मनुस्मृति के एक पुराने टीकाकार मेधातिथि ने ऋग्वेद के उपर्युक्त मंत्र में स्पष्ट रूप में नियोग का अस्तित्व माना है. (भारतरत्न महामहोपाध्याय डाक्टर पी. वी. काणे कृत 'धर्मशास्त्र का इतिहास,' प्रथम भाग, पृ. 341 पर उद्धृत).

मनुस्मृति (9/66) की टीका में इस मंत्र की व्याख्या नियोग के अर्थ में की गई है. पिछली शताब्दी में हुए स्वामी दयानंद सरस्वती ने, जिन्होंने वेद के प्राचीन भाष्य-कारों के अर्थों में विद्यमान दोषों से मुक्त भाष्य रचने का दावा किया है, वेदों में नियोग का न सिर्फ अस्तित्व माना है बल्कि स्मृतियों के आधार पर वेदमंत्रों के भाष्यों में नियोग की विस्तृत चर्चा भी की है.

उन का कथन यह है कि एक स्त्री व पुरुष को ग्यारह पुरुषों व स्त्रियों से संभोग का विधान है. यदि एक से संतान उत्पन्न न हो तो दूसरे से संभोग करे. दूसरे से न हो तो तीसरे से. ऐसे ग्यारहवें तक जाए. (देखें, ऋ. 10-85-45 पर दयानंद भाष्य).

पं. कालूराम शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'लीडरी पर प्लेग' में नियोग की चर्चा पर लिखा है कि स्वामी दयानंद कृत भाष्य का तात्पर्य यह है कि नियोग कर रहे स्त्रीपुरुष को हर बार ग्यारह अन्य लोगों से नियोग कर सकने की अनुमति मिल जाती थी और हर बार नियोग कर के स्त्रीपुरुष ग्यारह अन्य पुरुषों व स्त्रियों से नियोग करने के अधिकारी अपनेआप बन जाते थे. (लीडरी पर प्लेग, पृ. 314).

नियोग : परस्त्रीगमन का रास्ता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नियोग में संतान के लिए स्त्री को पुरुष से संभोग करने को प्रेरित व मजबूर किया जाता था. नियोग प्रायः तथाकथित देवताओं, ऋषियों, मुनियों और ब्राह्मणों द्वारा भी कराया जाता था. (देखें, महाभारत आदिपर्व, अध्याय 64, 95, 103, 104). ये लोग 'बीजदान' के नाम से निस्संतान स्त्रियों के साथ संभोग करते थे. यह एक ऐसी गंदगी भरी तथाकथित धर्माज्ञा थी जिस से स्त्रियों का सतीत्व सुरक्षित न रह सका और धर्म के तथाकथित ठेकेदारों के लिए परस्त्रीगमन का रास्ता खुल गया और वे उस की दुर्गति करने लगे.

नियोग प्रथा से यह निष्कर्ष निकलता है कि स्त्री सिर्फ बच्चे पैदा करने वाली मशीन हुआ करती थी जिस ने जब चाहा, उस से बच्चा पैदा कर लिया.

'द पोजीशन आफ वोमन इन हिंदू सिविलिजेशन' में भारतीय संविधान के रचयिता डाक्टर भीमराव अंबेदकर ने लिखा है :

"यद्यपि स्त्री का विवाह एक व्यक्ति से होता था, तथापि वह पूरे परिवार की संपत्ति मानी जाती थी, किंतु उसे पति की संपत्ति का हिस्सा नहीं मिलता था अर्थात संपत्ति का उत्तराधिकारी पुत्र ही हो सकता था."

"वैदिक युग की किसी भी स्त्री को पवित्र नहीं माना जा सकता. नियोग रूपी बलात्कार और व्यभिचार की भट्ठी में वैदिक पुरुष भाईबहन और पितापुत्री के संबंध को पवित्र न रख सके. सुरा और सोम के नशे में वे न बहन को पहचानते थे और न पुत्री को तथा न ही उन के संबंधों की स्मृति रखते थे. उन के इस प्रकार के व्यभिचार से पता चलता है कि स्त्रियों की तत्कालीन समाज में कितनी शोचनीय दशा थी. (देखें, गजाधरप्रसाद बौद्ध कृत 'आर्य नीति का भंडाफोड़', पृष्ठ

14, पंचम संस्करण, 1974).

वेदों में पिता द्वारा पुत्री को और भाई द्वारा बहन को गर्भवती बनाने के उदाहरण मिलते हैं. ऋग्वेद में पिता द्वारा पुत्री से संभोग करने का यह उदाहरण मिलता है :

पिता यत्स्यां दुहितरमधिष्कन्दमयोरतः संजग्मानो निषिंचत्, स्वाध्योऽजनयन्ब्रह्म देवा वास्तोष्पतिं व्रतपां निरतक्षन.

(ऋ., 10/61/7)

अर्थात जब पिता ने अपनी पुत्री के साथ संभोग किया, पृथ्वी के साथ मिल कर उस समय वीर्य सींचा और सुकृति देवों ने इस से व्रतरक्षक (रुद्र) देवता का निर्माण किया.

इसी प्रकार :

यस्त्वा स्वप्ने निपद्यते भ्राता पितेव च बजस्तान्त्सहतामितः क्लीबरूपांस्तिरीटिनः.

(अथर्व., 8/6/7)

अर्थात तेरे सो जाने पर यदि तेरा भाई और पिता कभी तेरे साथ संभोग करते हैं तो हम दोनों को नपुंसक बना कर मार डालेंगे.

यस्त्वा भ्राता पतिर्भूत्वा जारो भूत्वा निपद्यत, प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि. (अथर्व., 20/96/15)

अर्थात जो तेरा भाई होते हुए भी जार की तरह तुझ पर टूट पड़ता है, जो तेरी संतान को मारना चाहता है, हम उसे [illegible] करते हैं.

भाई की कामुकता से दुखी

इन मंत्रों से पता चलता है कि एक दुखी पुत्री व बहन अपने बाप व भाई की कामुकता से दुखी है और इस की शिकायत वह किसी सज्जन से कर रही है जो उसे इस अत्याचार से छुड़वाने का आश्वासन देता है.

जब भाई व पिता का अपनी बहनों व पुत्रियों से यह बरताव हैं तो किसी तीसरे पुरुष का एक पराई स्त्री से कैसा बरताव होगा, इस का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है.

जब तक ऐसी गंदी शिक्षाओं का बोलबाला रहेगा, तब तक नारी की दशा सुधरना असंभव है.

उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट है कि वेदों में स्त्रियों को बहुत घटिया दृष्टि से देखा गया है.

इस तरह की मानवता विरोधी शिक्षाओं का प्रचार करने वाले ग्रंथों का भंडाफोड़ किया जाना चाहिए ताकि इन की मान्यता समाप्त हो, तभी नारी मुक्ति संभव है और तभी भारतीय संविधान का समानता का स्वप्न सार्थक हो सकता है. ●

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बच्चे तीन से कम पैदा कीजिए, पेड़ पांच से अधिक लगाइए.

भारत की सब से बड़ी समस्या है गरीबी और जनसंख्या का बेलगाम बढ़ते जाना. सभी धर्म ग्रंथों में लिखा होने पर भी कि अमुक राजा या व्यक्ति अमुक पुरुष के वीर्य से, अमुक स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ, जनता को यही भुलावा दिया जाता रहा कि संतान भगवान की देन है.

जब तक आधुनिक विज्ञान और पश्चिमी चिकित्सा पद्धति भारत में नहीं आई थी, गरीबी, भुखमरी, अकाल और अनेक महामारियों के कारण जनसंख्या सीमित रहती थी. मृत्यु दर लगातार घटती जा रही है. जहां पहले 100 बच्चों में से मुश्किल से 5-10 बच पाते थे, आज 60-70 से अधिक जीवित रहते हैं.

इस सब के कारण जनसंख्या में भारी वृद्धि हो रही है और इस व्याधि को भगवान और भाग्य के भरोसे छोड़ना सामूहिक आत्महत्या के समान है. 'भगवान जिसे दो हाथ देता है, उसे खाना भी देगा,' यह सिद्धांत बिलकुल ही गलत और भ्रामक है.

यदि आप अपनी, अपने परिवार की और देश की गरीबी रोकना चाहते हैं तो बच्चे कम पैदा कीजिए. भगवान का इस में कोई दखल नहीं है. यदि गर्भ निरोधक सही प्रकार से प्रयोग में लाए जाएं तो भगवान भी किसी स्त्री के संतान उत्पन्न नहीं कर सकते.

आज के मशीनी युग में. सैकड़ों व्यक्तियों का काम एक मशीन हजार गुना गति से पूरा कर देती है. आज वही व्यक्ति शक्तिशाली व धनी हो सकता है, जिस को ऊंचे दर्जे की शिक्षा और प्रशिक्षण मिला हो. इन सब के लिए धन चाहिए. जितने अधिक बच्चे होंगे, उतना ही धन प्रति बच्चा कम होता जाएगा. नतीजा यह होगा कि जिन के बच्चे कम होंगे, वे उन्हें अच्छा, महंगा प्रशिक्षण दे सकेंगे.

देश में अधिक से अधिक पेड़ लगाने की भी आवश्यकता है. क्योंकि बाढ़ें अधिक आ रही हैं, नदियों और बांधों में मिट्टी भरती जा रही है, सूखा पड़ता जा रहा है, रेगिस्तान फैलता जा रहा है. लकड़ी कम और मंहगी होती जा रही है.

इसलिए आप अपने बच्चों का मोह अधिक वृक्ष उगा कर पूरा कीजिए. यह निश्चय कीजिए कि अपने जीवन में आप कम से कम पांच वृक्ष अवश्य लगा कर बड़े करेंगे. बच्चे बड़े हो कर विश्वासघात कर सकते हैं, आप को कष्ट पहुंचा सकते हैं, परंतु वृक्ष सदा आप के प्रति वफादार रहेंगे, वे आप को बराबर हर वर्ष अपनी शक्ति के अनुसार फलफूल देंगे, छाया देंगे, मौसम की बदलती आंखों से आप के घर की रक्षा करेंगे.

हो सकता है आप किराए के मकान या फ्लैट में रहते हों. यदि आप निचली मंजिल में रहते हैं तो वहां भी पेड़ लगा सकते हैं—और इस पर लागत अधिक नहीं आती. यदि आप केवल ऊपरी मंजिलों में रहते हैं तो वहां गमलों में पौधे लगाइए, सब्जी बोइए, बेलें चढ़ाइए. अपनी जमीन न हो तो किसी सार्वजनिक स्थान में—स्कूल, अस्पताल, बगीचा, सड़क, धर्मशाला आदि में, प्रबंधकों से अनुमति ले कर वृक्ष लगाइए. ज्योंज्यों वे बढ़ते जाएंगे, आप को एक अपूर्व संतोष, शांति और परिपूर्ति का उत्तरोत्तर अनुभव हो जाएगा.

आज ही निश्चय कीजिए :

बच्चे दो या तीन, पेड़ पांच से पचीस.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्ग कहां है

डा. रामसरूप 'रसिकेश'

'स्वर्ग' एक कोरी कल्पना है या इस की नींव किसी आधारभूत सत्य पर टिकी है?

स्वर्ग भूमि पर है या आकाश में? हमारे धर्मग्रंथों व प्रचलित मान्यताओं के अनुसार मनुष्य मर कर ही स्वर्ग भोग सकता है, जीते जी नहीं. यही बात श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताई थी.

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्ग
जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्.
(गीता 2/37)

अर्थात 'यदि तू युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग प्राप्त करेगा और यदि जीत गया तो पृथ्वी के सुख (न कि स्वर्ग) भोगेगा.'

इस के अतिरिक्त प्रचलित कहावत भी हमारे ही मत की समर्थक है—अपने मरे बिना किसी ने स्वर्ग नहीं देखा.

स्वर्ग की प्राप्ति देहांत के पश्चात

पर चाहे कोई सौ वर्ष जी ले या उस से भी अधिक, वह एक न एक दिन तो चल ही बसेगा और अपनी भाषा का यह 'चल बसना' मुहावरा भी तो यही बताता है कि यहां से चलेगा तो समाप्त नहीं हो जाएगा' बल्कि जैसे यहां बसता है, वैसे ही कहीं और जा बसेगा. इस के अतिरिक्त किसी की मृत्यु पर प्रयुक्त होने वाले शब्द 'स्वर्गवास' और 'दिवंगत' होना भी तो यही संकेत करते हैं कि स्वर्ग कहीं ऊपर द्यौ लोक में है, जिस की प्राप्ति देहांत के उपरांत ही होती है.

पर इन भाषा संबंधी प्रयोगों के विषय में लोग कह सकते हैं कि ये बहुत बाद में प्रचलित हुए. इसलिए हम यहां यही देखेंगे कि वेद इस विषय में क्या कहते हैं.

यह कल्पना आप को अच्छी तो नहीं लगेगी, किंतु करें क्या? विषय को स्पष्ट करने के लिए करनी ही पड़ती है कि कोई मनुष्य कालकवलित हो गया और उस के संबंधी उसे श्मशान में ले गए. प्राचीन काल के तुल्य आजकल भी पुरोहित (आचार्यजी) साथ जाते हैं, वेदादि ग्रंथों के कुछ मंत्र पढ़ते हैं तथा घी सामग्री आदि की आहुतियां दिलाते हैं.

तत्पश्चात मृतक की आत्मा की सद्-गति तथा संतप्त परिवार की शांति के लिए प्रार्थना की जाती है और लोग घरों को लौट जाते हैं. न कोई व्यक्ति पुरोहितजी से मंत्रों का अर्थ पूछता है और न वे स्वयं ही बताते हैं. परिणाम यह होता है कि इस विषय में हम अंधेरे में ही रहते हैं. सो आज हम उन और वैसे ही अन्य वेदमंत्रों के आधार पर यह बताएंगे कि उस समय मृतक, संबंधी, पृथ्वी, अग्नि, यम, पितर, स्वर्गादि के संबंध में क्या विचार व्यक्त किए जाते हैं.

स्वर्गीय के प्रति

विद्वानों का अनुमान है कि वैदिक युग के पूर्व से ही मृतक के साथ जो वस्तुएं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जला देने की रीति चली आ रही थी, उन में से धनुष भी एक था. वैदिक युग में धनुष को मृतक के हाथ से ले लिया जाता था और तब स्वपरिवार की रक्षा व शत्रुओं पर विजय की कामना इस वेदमंत्र से की जाती थी :

धनुर्हस्तादाददानो मृतस्यास्मे
क्षत्राय वर्चसे बलाय ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा
विश्वा स्पृधो अभिमातीर्जयेम ॥
(ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 18, मंत्र 9)

अर्थात "मृतक के हाथ से धनुष लेता हुआ मैं (मृतक का पुत्र) अपने संबंधियों की रक्षा, तेज व बल की कामना करता हूं. हे मृतक, आप यहीं रहिए. हम वीर संतान से युक्त हो कर अभिमानी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें.

श्मशान में शव को भूमि पर लिटाते समय यह मंत्र पढ़ा जाता है :

उपसर्प मातरं भूमिमेतामुरु-
व्यचसं पृथिवीं सुशेवाम् ।
ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत
एषा त्वा पातु निर्ऋतेरुप स्थात् ।
(ऋग्वेद 10/18/10)

भूमि को माता मानने की सुभावना

अर्थात "हे मृतक, तू इस भूमि माता के समीप जा, जो विशाल, सपाट तथा सुखदायिनी है. तू ने जीवन में खूब दक्षिणाएं दी हैं, अतः यह भूमि कष्टक्लेशों से तेरी रक्षा करे."

प्रसंगवश यह संकेत भी उचित ही होगा कि भूमि को माता मानने की सुभावना हमें इस और ऐसे ही अन्य वेदमंत्रों से प्राप्त हुई है.

यों तो मृतक का सारा शरीर जल कर मिट्टी ही बन जाता है, तथापि एक वेदमंत्र में यह कामना भी की गई है कि उस के विभिन्न अंगों व जीव की क्या गति हो--

सूर्य चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा
द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा ।
अपो व गच्छ यदि तत्र ते
हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः ॥
(ऋग्वेद 10/16/3)

अर्थात "हे मृतक, तेरा नेत्र सूर्य में चला जाए और आत्मा वायु में. तू अपने पुण्य के कारण द्युलोक और भूमि पर जा. यदि तेरा हित जल में जाने में हो तो वहां चला जा अथवा शरीर धारण कर के वृक्ष आदि में निवास कर."

तात्पर्य यह कि मनुष्य की आत्मा कर्मानुसार विभिन्न लोकों में विविध शरीर धारण कर लेती है. अनेक वेदमंत्रों से मृतक को उन पूर्वजों के पास पहुंचने की प्रेरणा की गई है, जो अपने दानपुण्य व वीरता से पुण्यात्माओं के लोक में पहुंच चुके हैं. उदाहरणार्थ :

ये युध्यन्ते प्रधनेषु
शूरासो ये तनूत्यजः ।
ये वा सहस्रदक्षिणा
स्तांश्चिद देवापि गच्छतात् ॥
(ऋग्वेद 10/154/3)

अर्थात "हे मृतक, जो वीर संग्रामों में लड़ते हैं, जो वहीं वीरगति प्राप्त करते हैं अथवा जो अनगिनत दक्षिणाएं देते हैं, तू उन्हीं के पास चला जा."

शायद कहने की आवश्यकता नहीं कि भगवद्गीता का उपर्युक्त 'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गम्' वाला विचार भी वेद के ऐसे ही मंत्रों से लिया गया है.

मृतक के संबंधी

वर्तमान के समान स्वर्गीय व्यक्ति की पत्नी भी श्मशान तक जाती थी और अन्य स्त्रीपुरुष भी. शोकविह्वल विधवा वैधव्य जीवन को मृत्यु से भी अधिक दुखदायक मान कर पति के साथ चिता पर ही लेट जाती थी. उस समय उस के संबंधी निम्नलिखित मंत्र द्वारा उसे ढाढ़स देते व चिता से उठा लेते थे :

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गतासुमेतमुप शेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं
पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ ।।
(ऋग्वेद 10/18/8)

अर्थात "हे नारी, उठ, जीवित लोगों में आ कर मिल. तू निष्प्राण व्यक्ति के साथ पड़ी हुई है. आ, जिस पति ने तेरा हाथ पकड़ा था उस के साथ तू गृहस्थधर्म का पालन कर चुकी है."

इस मंत्र से अनुमान होता है कि पूर्व प्रचलित सती प्रथा का वैदिक युग में परित्याग किया जा रहा था. श्मशान को जाते समय तो स्त्रियां बाल खोल कर रोतीधोती हुई ही मृतक के साथ जाती थीं. किंतु लौटते समय उन का वह वेश अमांगलिक माना जाता था. सधवा स्त्रियों से आशा की जाती थी कि वे स्नानादि के पश्चात सिर में तेल, नेत्रों में अंजन आदि लगा कर ही अपने घरों में लौटें, जैसा कि इस मंत्र से प्रतीत होता है :

इमा नारीरविधवाः
सुपत्नीरांजनेन सर्पिषा संविशन्तु ।
अनश्रवोऽमग्रेमीवाः सुरत्ना
आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे ।।
(ऋग्वेद 10/18/7)

"अर्थात "ये सधवा सुपत्नियां अंजन, घी आदि लगा कर घरों में प्रवेश करें. ये शोकरहित, रोगरहित और सुंदर रत्नों से युक्त स्त्रियां घरों में प्रविष्ट हों."

जो गया उस के लिए रोनाधोना निरर्थक

जो गया, सो गया, वह तो कभी लौटने का नहीं. उस के लिए रोनाधोना सर्वथा निरर्थक है. शेष लोगों को धन, संतान आदि के लिए उद्योग करते तथा नाचतेगाते हुए जीवन व्यतीत करना चाहिए. इन सुविधाओं की प्रेरणा निम्नलिखित वेदमंत्रों से मिलती है--

(क) मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत
द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन
शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः ।।
(ऋ. 10/18/2)

अर्थात "हे मृतक के संबंधियो, मौत के चिह्न को मिटाते हुए और खूब लंबी आयु धारण करते हुए आओ. संतान तथा धन से संपन्न होते हुए, शुद्ध, पवित्र तथा यज्ञ के योग्य बनो."

(ख) इमे जीवा विमृतैराववृत्रन्,
अभूद भद्रा देवहूतिर्नो अद्य ।
प्रांचो अगाम नृतये हसाय
द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।।
(ऋ. 10/18/3)

अर्थात "ये जीवित लोग मृतकों से अलग हो गए हैं. आज हमारी देवों के प्रति पुकार (पितृमेध यज्ञ) सफल हुई है. हम खूब लंबी आयु प्राप्त करते हुए नाचने व हंसने के लिए अग्रसर हों."

अग्नि देव से प्रार्थना

अंत्येष्टि संस्कार में जहां चक्षु, श्रोत्र, प्राण, त्वचा आदि अंगों, पृथ्वी, अंतरिक्ष, द्यौ आदि लोकों तथा सूर्य, चंद्र, वरुण आदि देवों के लिए आहुतियां दी जाती हैं, वहां अग्नि देवता से विषेष रूप से प्रार्थना की जाती है, क्योंकि नरमेध संस्कार में मुख्य कार्य अग्नि देवता का ही है. उदाहरणार्थ दो मंत्र प्रस्तुत हैं—

(क) मैनमग्ने विदहो माभिशोचो मास्य
त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।
यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेमेनं
प्रहिणुतात् पितृभ्यः ।।
(ऋ. 10/16/1)

अर्थात "हे अग्नि देवता, इसे बिलकुल ही न जला देना. इसे कष्ट नहीं देना. इस की खाल को, शरीर को छिन्नभिन्न न करना. हे सर्वज्ञ अग्निदेव, जब तुम इस के शरीर को पका चुको तब इसे पितरों के पास भेज देना."

(ख) अव सृज पुनरग्ने पितृभ्यो
यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः ।
आयुर्वसान उपवेतु शेषः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जला देने की रीति चली आ रही थी, उन में से धनुष भी एक था. वैदिक युग में धनुष को मृतक के हाथ से ले लिया जाता था और तब स्वपरिवार की रक्षा व शत्रुओं पर विजय की कामना इस वेदमंत्र से की जाती थी :

धनुर्हस्तदाददानो मृतस्यास्मे
क्षत्राय वर्चसे बलाय ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा
विश्वा स्पृधो अभिमातीर्जयेम ।।
(ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 18, मंत्र 9)

अर्थात "मृतक के हाथ से धनुष लेता हुआ मैं (मृतक का पुत्र) अपने संबंधियों की रक्षा, तेज व बल की कामना करता हूं. हे मृतक, आप यहीं रहिए. हम वीर संतान से युक्त हो कर अभिमानी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें.

श्मशान में शव को भूमि पर लिटाते समय यह मंत्र पढ़ा जाता है :

उपसर्प मातरं भूमिमेतामुरु-
व्यचसं पृथिवीं सुशेवाम् ।
ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत
एषा त्वा पातु निर्ऋतेरुप स्थात् ।
(ऋग्वेद 10/18/10)

भूमि को माता मानने की सुभावना

अर्थात "हे मृतक, तू इस भूमि माता के समीप जा, जो विशाल, सपाट तथा सुखदायिनी है. तू ने जीवन में खूब दक्षिणाएं दी हैं, अतः यह भूमि कष्टक्लेशों से तेरी रक्षा करे."

प्रसंगवश यह संकेत भी उचित ही होगा कि भूमि को माता मानने की सुभावना हमें इस और ऐसे ही अन्य वेदमंत्रों से प्राप्त हुई है.

यों तो मृतक का सारा शरीर जल कर मिट्टी ही बन जाता है, तथापि एक वेदमंत्र में यह कामना भी की गई है कि उस के विभिन्न अंगों व जीव की क्या गति हो--

सूर्य चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा
द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा ।
अपो व गच्छ यदि तत्र ते
हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः ।।
(ऋग्वेद 10/16/3)

अर्थात "हे मृतक, तेरा नेत्र सूर्य में चला जाए और आत्मा वायु में. तू अपने पुण्य के कारण द्युलोक और भूमि पर जा. यदि तेरा हित जल में जाने में हो तो वहां चला जा अथवा शरीर धारण कर के वृक्ष आदि में निवास कर."

तात्पर्य यह कि मनुष्य की आत्मा कर्मानुसार विभिन्न लोकों में विविध शरीर धारण कर लेती है. अनेक वेदमंत्रों से मृतक को उन पूर्वजों के पास पहुंचने की प्रेरणा की गई है, जो अपने दानपुण्य व वीरता से पुण्यात्माओं के लोक में पहुंच चुके हैं. उदाहरणार्थ :

ये युध्यन्ते प्रधनेषु
शूरासो ये तनूत्यजः ।
ये वा सहस्रदक्षिणा
स्तांश्चि देवापि गच्छतात् ।।
(ऋग्वेद 10/154/3)

अर्थात "हे मृतक, जो वीर संग्रामों में लड़ते हैं, जो वहीं वीरगति प्राप्त करते हैं अथवा जो अनगिनत दक्षिणाएं देते हैं, तू उन्हीं के पास चला जा."

शायद कहने की आवश्यकता नहीं कि भगवद्गीता का उपर्युक्त 'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गम्' वाला विचार भी वेद के ऐसे ही मंत्रों से लिया गया है.

मृतक के संबंधी

वर्तमान के समान स्वर्गीय व्यक्ति की पत्नी भी श्मशान तक जाती थी और अन्य स्त्रीपुरुष भी. शोकविह्वल विधवा वैधव्य जीवन को मृत्यु से भी अधिक दुखदायक मान कर पति के साथ चिता पर ही लेट जाती थी. उस समय उस के संबंधी निम्नलिखित मंत्र द्वारा उसे ढाढ़स देते व चिता से उठा लेते थे :

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गतासुमेतमुप शेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं
पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ ॥
(ऋग्वेद 10/18/8)

अर्थात "हे नारी, उठ, जीवित लोगों में आ कर मिल. तू निष्प्राण व्यक्ति के साथ पड़ी हुई है. आ, जिस पति ने तेरा हाथ पकड़ा था उस के साथ तू गृहस्थधर्म का पालन कर चुकी है."

इस मंत्र से अनुमान होता है कि पूर्व प्रचलित सती प्रथा का वैदिक युग में परित्याग किया जा रहा था. श्मशान को जाते समय तो स्त्रियां बाल खोल कर रोतीधोती हुई ही मृतक के साथ जाती थीं. किंतु लौटते समय उन का वह वेश अमांगलिक माना जाता था. सधवा स्त्रियों से आशा की जाती थी कि वे स्नानादि के पश्चात सिर में तेल, नेत्रों में अंजन आदि लगा कर ही अपने घरों में लौटें, जैसा कि इस मंत्र से प्रतीत होता है :

इमा नारीरविधवाः
सुपत्नीरांजनेन सर्पिषा संविशन्तु ।
अनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना
आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे ॥
(ऋग्वेद 10/18/7)

"अर्थात "ये सधवा सुपत्नियां अंजन, घी आदि लगा कर घरों में प्रवेश करें. ये शोकरहित, रोगरहित और सुंदर रत्नों से युक्त स्त्रियां घरों में प्रविष्ट हों."

जो गया उस के लिए रोनाधोना निरर्थक

जो गया, सो गया, वह तो कभी लौटने का नहीं. उस के लिए रोनाधोना सर्वथा निरर्थक है. शेष लोगों को धन, संतान आदि के लिए उद्योग करते तथा नाचतेगाते हुए जीवन व्यतीत करना चाहिए. इन सुविधाओं की प्रेरणा निम्नलिखित वेदमंत्रों से मिलती है—

(क) मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत
द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन
शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः ॥
(ऋ. 10/18/2)

अर्थात "हे मृतक के संबंधियो, मौत के चिह्न को मिटाते हुए और खूब लंबी आयु धारण करते हुए आओ. संतान तथा धन से संपन्न होते हुए, शुद्ध, पवित्र तथा यज्ञ के योग्य बनो."

(ख) इमे जीवा विमृतैरावव्रृत्रन्,
अभूद भद्रा देवहूतिर्नो अद्य ।
प्रांचो अगाम नृतये हसाय
द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥
(ऋ. 10/18/3)

अर्थात "ये जीवित लोग मृतकों से अलग हो गए हैं. आज हमारी देवों के प्रति पुकार (पितृमेध यज्ञ) सफल हुई है. हम खूब लंबी आयु प्राप्त करते हुए नाचने व हंसने के लिए अग्रसर हों."

अग्नि देव से प्रार्थना

अंत्येष्टि संस्कार में जहां चक्षु, श्रोत्र, प्राण, त्वचा आदि अंगों, पृथ्वी, अंतरिक्ष, द्यौ आदि लोकों तथा सूर्य, चंद्र, वरुण आदि देवों के लिए आहुतियां दी जाती हैं, वहां अग्नि देवता से विशेष रूप से प्रार्थना की जाती है, क्योंकि नरमेध संस्कार में मुख्य कार्य अग्नि देवता का ही है. उदाहरणार्थ दो मंत्र प्रस्तुत हैं—

(क) मैनमग्ने विदहो माभिशोचो मास्य
त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।
यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेमेनं
प्रहिणुतात् पितृभ्यः ॥
(ऋ. 10/16/1)

अर्थात "हे अग्नि देवता, इसे बिलकुल ही न जला देना. इसे कष्ट नहीं देना. इस की खाल को, शरीर को छिन्नभिन्न न करना. हे सर्वज्ञ अग्निदेव, जब तुम इस के शरीर को पका चुको तब इसे पितरों के पास भेज देना."

(ख) अव सृज पुनरग्ने पितृभ्यो
यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः ।
आयुर्वसान उपवेतु शेषः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संगच्छतां तन्वा जातवेदः ॥
(ऋग्वेद 10/16/5)

अर्थात "हे अग्निदेव, जिस का तुम में होम किया गया है, जो यज्ञीय द्रव्यों का सेवन करता है, उसे तुम पुनः पितरों के पास भेज दो. इस का शेष भाग जीवन पा कर उठ जाए. हे ज्ञानी अग्नि देव, वह पुनः शरीर प्राप्त करे."

पृथ्वी से प्रार्थना

मृत शरीर को दग्ध करने से संबंधित वेदमंत्रों की तो कोई कमी नहीं, किंतु कुछ मंत्रों से ऐसा भी आभास मिलता है कि शरीर को भूमि में दफनाया भी जाता था. कुछ विद्वानों का विचार है कि देहदाह के बाद चुनी हुई हड्डियों से पूर्ण कुम्भ को पृथ्वी में गाड़ कर ऊपर स्तूप सा बना दिया जाता था. इस प्रकार का भी एक मंत्र द्रष्टव्य है :

उच्छुंचस्व पृथिवि मा नि बाधथाः
सूपायनास्मै भव सूपवंचना ।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं
भूम ऊर्णुहि ॥ (ऋ. 10/18/11)

अर्थात "हे भूमि, तुम ऊपर को उठो, नीची हो कर (मृतक को) पीड़ा मत दो. तुम इस के लिए सुप्राप्य तथा सुखदायक बनो. हे भूमि, जैसे माता पुत्र को वस्त्र से ढांप लेती है, वैसे ही तुम इसे ढांप लो."

यमराज, यमदूत और यमलोक की कथाओं से पुराण तो भरे ही पड़े है, वेदों में भी इन का पर्याप्त उल्लेख मिलता है. वेदों के अनुसार यम, जिन्हें देवता की अपेक्षा राजा अधिक कहा गया है. विवस्वान् (सूर्य) तथा सरण्यू के पुत्र थे. इन की जुड़वां बहन का नाम यमी था. विवस्वत् का पुत्र होने के कारण इन्हें 'वैवस्वत यम' कहा जाता है. मृतकों को एकत्र कर उन पर शासन करना इन का मुख्य कार्य है. इन का विस्तृत विवरण ऋग्वेद के तीन सूक्तों (10/14,10/135 और 10/154) में सहज ही देखा जा सकता है.

यमराज के निवासस्थान व खानपान के संबंध में दो वेदमंत्र प्रस्तुत हैं :

1. इदं यमस्य सादनं देवमानं यदुच्यते ।
इयमस्य धाम्यते नाडीरयं गीर्भिः परिष्कृतः ॥
(ऋ. 10/135/7)

अर्थात "यह यम का निवासस्थान है. कहा जाता है कि यह देवों द्वारा निर्मित हुआ. यह बांसुरी इस के लिए बजाई जाती है और स्तोत्रों से इस को भूषित (प्रसन्न) किया जाता है."

2. यस्मिन वृक्षे सुपलाशे
देवैः सम्पिबते यमः ।
अत्रा नो विश्पतिः
पिता पुराणां अनुवेनति ॥
(ऋ. 10/35/1)

अर्थात कुमार यामायन ऋषि कहते हैं—"सुंदर पत्तों वाले जिस वृक्ष के नीचे यम दूसरे देवों के साथ पान करते हैं मेरे नरपति पिता की इच्छा है कि मैं उसी वृक्ष के नीचे जा कर पूर्वजों में मिल जाऊं."

गौदान से सभी कामनाएं पूर्ण

अथर्ववेद हमें बताता है कि गौ का दान करने वाले को इस लोक में ही नहीं, यम के राज्य में भी सभी कामनाएं पूर्ण होती हैं :

सर्वान् कामान् यमराज्ये वशा प्रददुषे दुहे ।
अथाहुर्नारकं लोकं निरुन्धानस्य याचिताम् ॥
(अथर्व, कांड 12, सूक्त 4, मंत्र 36)

अर्थात गौ अपने दाता की सब कामनाओं को यम के राज्य में पूर्ण करती है. पर जो मांगी जाने पर भी उसे नहीं देता उस के लिए तो नरक लोक ही है."

ऋग्वेद के कई मंत्रों में यमराज के दो कुत्तों (दूतों) का भी वर्णन है. उन की आंखें चारचार हैं, नाक लंबी है और रंग चितकबरा है. मृत व्यक्ति का पुत्र अपने पिता को इन से बच कर निकल जाने तथा पितरों के पास पहुंच कर आनंद मनाने की प्रेरणा करता है. यथा :

अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा।
अथा पितॄन् सुविदत्रां उपेहि
यमेन ये सधमादं चरंति ॥
(ऋ. 10/14/10)

अर्थात 'हे मृत पिता, आप चारचार आंखों वाले दोनों चितकबरे कुत्तों से बच कर भले मार्ग से निकल जाएं आप उन ज्ञानी पितरों के पास पहुंच जाएं जो यम के साथ प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं."

वेदमंत्रों में यम की पूजा

अनेक वेदमंत्रों में यम की पूजा करने की प्रेरणा दी गई है और कई वेदमंत्रों में उस से अपने पिता विवस्वान व विविध पितरों के साथ यज्ञ में पधारने की प्रार्थना. उदाहरणार्थ :

अंगिरोभिरागहि यज्ञियेभिर्यम
वैरूपैरिह मादयस्व।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता ते
ऽस्मिन यज्ञे बर्हिष्या निषद्य ॥
(ऋ. 10/14/5)

अर्थात "हे यम, विविध रूपों वाले याज्ञिक अंगिरा लोगों के साथ पधारो और इस यज्ञ में यजमान को आनंदित करो. मैं विवस्वान को भी बुलाता हूं जो तुम्हारा पिता है. वह भी यज्ञ में कुशा के आसन पर बैठ कर यजमान को सुखी बनाए."

अब यह देखना चाहिए कि जिस लोक के राजा (विवस्वत् के पुत्र) वैवस्वत यम हैं, वह लोक है कैसा. कश्यप ऋषि ने ऋग्वेद के नवें मंडल के 113वें सूक्त में तथा अथर्वा ऋषि ने अथर्ववेद के 34वें सूक्त में स्वर्गलोक का बहुत सुंदर वर्णन किया है. वहां वे प्रायः सभी वस्तुएं पुण्यात्मा पितरों को सहज ही सुलभ हैं जिन की कामना मनुष्य भूमि पर किया करता है. नदियां, सरोवर, दूध, दही, मधु, घी, सुरा, सुंदरियां आदि सब पदार्थ वहां सहज प्राप्य हैं और इस पर भी तुर्रा यह कि इन्हें भोगने के लिए पितर सदा वहीं रहते हैं. इस वर्णन को पढ़ कर तो ऐसा लगता है कि जैसे कुरान शरीफ में वर्णित बहिश्त वेद में वर्णित स्वर्ग से प्रभावित है. उदाहरणार्थ दोतीन वेदमंत्र ही पर्याप्त होंगे :

1. यत्र राजा वैवस्वतो
यत्रावरोधनं दिवः।
यत्रामूर्यह्वतीरापस्तत्र
माममृतं कृधीन्द्रायेन्दोपरिस्रव ॥
(ऋ. 9/113/38)

कश्यप ऋषि सोम देवता से प्रार्थना करते हैं—"जिस लोक में वैवस्वत (यम) राजा है, जहां स्वर्ग का द्वार है, जहां ताजा व स्वच्छ जल है, वहां मुझे मृत्यु-रहित करो तथा इंद्र देवता के लिए बहो."

2. घृतह्रदा मधुकूलाः सुरोदकाः
क्षीरेण पूर्वा उदकेन दध्ना।
एतास्त्वा धारा उपयन्तु सर्वा
स्वर्गेलोके मधुमत् पिन्वमानाः ॥
उप त्वा तिष्ठन्तु पुष्करिणी समन्ताः.
(अथर्व 4/34/6)

खीर से विष्टारी यज्ञ करने वाले यजमान के प्रति अथर्वा ऋषि शुभकामनाएं प्रकट कर रहे हैं. घृतयुक्त सरोवरों वाली, मधुयुक्त किनारों वाली, सुरा रूप जल वाली, दूध, दही और जल से पूर्ण तथा माधुर्य से पुष्ट ये सब धाराएं तथा कमल-युक्त पूरे सरोवर तुम्हें स्वर्गलोक में प्राप्त हों.

स्वर्गलोक में स्त्रियां सुलभ

3. अनस्थाः पूताः पवनेन शुद्धाः
शुचयः शुचिमपि यान्ति लोकम्।
नैषां शिश्नं प्रदहति जातवेदाः
स्वर्गे लोके बहु स्त्रैणमेषाम् ॥
(अथर्व 4/34/2)

अर्थात (विष्टारी यज्ञ करने वाले लोग) हड्डी रहित, पवन द्वारा पवित्र, शुद्ध और निर्मल हो कर प्रकाशमान लोक में जाते हैं. (श्मशान की) अग्नि इन की जननेंद्रिय को नहीं जलाती. स्वर्ग लोक में इन्हें बहुत स्त्रियां सुलभ रहती हैं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वर्ग में मैथुनसुख का वर्णन पढ़ कर संभव है कुछ पाठक चौंकें, किंतु आश्चर्य की कोई बात नहीं. इसी सूक्त के चौथे मंत्र में स्पष्ट कहा गया है कि जो विष्टारी यज्ञ के लिए चावल पकाते हैं, यमराज उन्हें निर्वीर्य नहीं करते.

स्वर्ग है कितनी दूर

पर मरने के बाद मिलने वाला यह स्वर्ग है कितनी दूर? इस प्रश्न का उत्तर वेदों में तो हमें कहीं नहीं मिला, हां ऐतरेय ब्राह्मण (2/17) में लिखा है :

सहस्राश्वीने वा इतः स्वर्ग लोकः।

अर्थात एक हजार दिनों में कोई घोड़ा जितने योजन दौड़ सकता है उतनी दूर है.

कहना न होगा कि वर्तमान में अंतरिक्षयात्री इस दूरी से बहुत अधिक ऊपर-नीचे उड़ कर लौट आए हैं, किंतु न उन्हें ऐसा कोई स्वर्ग मिला न यमराज, न यमदूत और न स्वर्ग में रहने वाले पितर. तो फिर सचाई क्या है?

हमारे विचार में तो यह यमराज, यमलोक आदि सब हमारे पूर्वजों की कमनीय कल्पनाएं हैं, जो उन्होंने सामान्य जनों को पापविमुख और पुण्योन्मुख करने के लिए की थीं. ●

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आखिरत की अटकलें

• मुकारबखान 'आजाद'

आखिरत की कल्पनाएं जितनी हास्यास्पद हैं उतनी ही बेबुनियाद और अव्यावहारिक भी.

आखिरत यानी परलोक के बारे में हर प्रचलित मजहब ने अटकलें लगाई हैं. इस संबंध में सभी धर्मों में प्रायः एक जैसी कल्पनाएं की गई हैं. इन कल्पनाओं का उद्देश्य परलोक के प्रति मनुष्य में आस्था बनाए रखने के सिवा कुछ भी नहीं है. यह भय या प्रलोभन दिखा कर उस ओर आकृष्ट करने की एक मीठी साजिश है और यह कहने की आवश्यकता नहीं कि विश्व में ऐसे लोगों का अनुपात बहुत अधिक है जो सदा इस साजिश का शिकार रहा है और आगे भी रहेगा.

परलोक की कल्पनाएं अवैज्ञानिक

किंतु परलोक की कल्पनाएं कितनी अवैज्ञानिक, बेबुनियाद, हास्यास्पद, अविश्वसनीय और अंटशंट हैं. ऐसी कल्पनाएं करने वालों का कहना है कि खुदा की इबादत करने वालों को तो जन्नत में महल मिलेंगे और दुनियादार को यानक जहन्नुम.

इस प्रकार रूह की उठापटक, कब्र का खौफ, कयामत का कहर, पुल सरात का खतरा, जन्नतजहन्नुम की विशालता, फरिश्तों की दुनिया, हूरों और दूध की नहरों का लालच तथा आसमानों की कल्पनाएं चौंका देने वाली हैं. इसलाम धर्म में इन सभी कल्पनाओं का अलगअलग महत्त्व और अस्तित्व बनाया गया है. मुसलमान के लिए उस का ईमान बुनियादी चीज है और इन सभी लोगों की धारणा यह है कि परलोक की इन कल्पनाओं में विश्वास ही ईमान की मजबूती का पक्का सबूत है.

मुसलमानों का विश्वास है कि कब्र में दफनाने के तुरंत बाद मुरदा जी उठता है. ज्यों ही अजीज लोग उस पर मिट्टी डाल कर वहां से कोई चालीस कदम दूर हटते हैं कि कब्र में मृत बंदे को फरिश्ते फिर जिंदा कर लेते हैं. तब वहां खुदा की तरफ से दो भयानक फरिश्ते आते हैं और वे बंदे से सवालजवाब करते हैं.

मजहब क्या है

फरिश्ते (मुनकिर और नकीर) उस से कई सवाल करते हैं. "बता, तेरा रब कौन है? तू किस की उम्मत में है, तेरा मजहब क्या है, आदिआदि" और माकूल जवाब न मिलने पर उस की हड्डीपसली एक कर देते हैं, उसे मारते हैं फिर जिंदा करते हैं. उस के टुकड़ेटुकड़े कर देते हैं और उन्हें पुनः जोड़ते हैं. फरिश्ते गुर्रा कर आगे आदेश देते हैं, "दुनिया में जो काम किए, नेक या बद, उसे लिखो."

बंदा घबरा उठता है. गिड़गिड़ा कर निवेदन करता है, "मैं वह सब कैसे लिखूं? मेरे पास न कलम है, न कागजस्याही."

उत्तर में फिर वही रोब भरी आवाज

उभरती है, "अंगली की कलम बनाओ, थूक की स्याही और कफन का कागज. जल्दी करो." तब बंदा अपने सब कारनामे लिखता है.

कहते हैं, बाद में उस तहरीर का एक तौक बना कर फरिश्ते उसे बंदे के गले में बांध जाते हैं और कयामत के दिन उस लिखावट के आधार पर ही खुदा खुद काजी बन कर उस के नेक और बद होने का फैसला करेगा.

कब्र का खौफ

समझ में नहीं आता कि दो गज लंबी दो फुट चौड़ी कब्र में यह कचहरी कैसे लग जाती होगी? किंतु असलियत बताए कौन? जो गया वह तो वापस लौट कर आता नहीं. फिर जिस समाज में मुरदे को दफनाया नहीं जाता, बल्कि जला दिया जाता है उस से ये फरिश्ते कहां आ कर मिलते होंगे? या फिर मुसलमानों के लिए ही फरिश्तों की ऐसी व्यवस्था है. युद्ध में शहीद होने वालों को तो कफन भी मयस्सर नहीं होता तो वहां लिखापढ़ी किस चीज पर होती होगी?

फिर हम यह क्यों भूल जाते हैं कि जो आदमी पढ़ालिखा नहीं होता वह कब्र में जाते ही कैसे पढ़लिख जाएगा? फिर प्रश्न उठता है कफन पर कुछ लिखने का, सो क्या अंगुली से थूक के साथ कागज की जगह कफन पर लिखा जाना संभव है? यदि यह मान भी लिया जाए कि इस तरह लिखा जा सकता है और उस कफन को फरिश्ते तावीज बना कर बंदे के गले में बांध जाते हैं तो क्या मय्यत फिर उघाड़ी या नंगी रह जाती है?

इस संदर्भ में यह नहीं भूलना चाहिए कि कभीकभी किसी दुर्घटना के कारण किसी कब्र को खोल कर पोस्टमार्टम के लिए मय्यत को वापस निकाला जाता है. तब वह कफन ज्यों का त्यों मिलता है और लाश के गले में किसी तहरीर या तौक को आज तक किसी ने नहीं देखा.

खैर, वह तो मय्यत को वापस जिंदा करने और उस की जवाबतलबी की बातें हुईं. मगर इस से आगे की कल्पनाएं और भी चौंका देने वाली हैं. कयामत नाम का एक ऐसा दिन भी आने वाला है जब सभी को सामूहिक रूप से एक साथ जिंदा हो कर कब्रों से निकल कर एक सपाट मैदान में खड़ा होना पड़ेगा और उस दिन की कल्पना मुसलमानों के दिमागों में कुछ इस प्रकार है :

वह दिन बड़ा भयंकर आग उगलता हुआ होगा. सूर्य सवानेजे पर यानी बहुत नीचे आ जाएगा. पृथ्वी सपाट मैदान हो जाएगी.

तमाम नक्षत्र टूटफूट कर गिर पड़ेंगे. जंगल, समुद्र और तमाम प्राकृतिक वस्तुएं नष्टभ्रष्ट हो जाएंगी. पहाड़ रुई के फाहों की तरह इधरउधर उड़ जाएंगे और जिधर भी और जहां तक दृष्टि जाएगी बस एक सपाट तपता हुआ मैदान दृष्टिगोचर होगा. पृथ्वी और आसमान तांबे और लोहे के बन जाएंगे.

कयामत की कल्पनाएं

और उस मैदान में तमाम मखलूकात, पृथ्वी की उत्पत्ति से ले कर उस काल्पनिक दिन तक की आदम की तमाम संतानें, खड़ी हो जाएंगी. एक भयंकर फरिश्ते द्वारा सूर फूंकने पर यह सब विस्फोटक परिवर्तन होगा.

कयामत के उस तपतेसुलगते मैदान में एक बहुत ही दिव्य तख्त होगा, जिस पर खुदा खुद काजी बन कर बैठेगा और त्राहित्राहि करते उपस्थित बंदों का फैसला करेगा.

एक मिजान (तराजू) का भी जिक्र आता है, जिस पर नेकी और बदी को तोला जाएगा. फरिश्ते वहां गवाह के रूप में तैयार खड़े होंगे. बड़ेबड़े औलिया और पैगंबर घबराए दौड़ते फिरेंगे. सब ओर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्राहित्राहि मची होगी. पसीने के दरिया भर जाएंगे जिन में बंदे तरतेडूबते होंगे. वह दिन आम दिनों जैसा न हो कर कई हजार वर्षों का एक संपूर्ण दिन होगा, क्योंकि खुदा खुद हर बंदे का फैसला जो करेगा.

अब इस कल्पना का अगर हम जायजा लें तो हमें हंसी ही आएगी. हम यदि पूर्वाग्रह के बिना निष्पक्ष भाव से और जरा सी अक्लमंदी से इस अटकल पर विचार करें तो सहज ही हमारा विवेक दूध का दूध और पानी का पानी कर देगा. तब हम देखेंगे कि यह कल्पना कितनी निराधार है.

अवैज्ञानिक तथ्य

सूर्य अपनी निर्धारित कीली पर घूमता है न कि पृथ्वी के चारों ओर. पृथ्वी स्वयं सूर्य की परिक्रमा करती है. फिर भी मान लें कि किसी नक्षत्र दुर्घटना के परिणामस्वरूप पृथ्वी अपने रास्ते से भटक जाए तो वह सूर्य के करीब जा सकती है.

मगर अब तो सूर्य की तापशक्ति का भी पता लगाया जा चुका है. उस के करीब जा कर किसी ग्रह या उपग्रह का अस्तित्व रह पाना सर्वथा असंभव है. फिर सूर्य के सवानेजे नीचे आ जाने पर जब पहाड़ नष्टभ्रष्ट हो जाएंगे और पदार्थ जल कर खाक हो जाएंगे तो स्वयं पृथ्वी फिर कैसे बची रह जाएगी? साथ ही आसमान और पृथ्वी लोहे और तांबे के क्यों बन जाएंगे? क्या ये पदार्थ तब पिघलने से बच जाएंगे? आसमान के रूप परिवर्तन की कल्पना और भी हास्यास्पद है. क्या वह कोई शामियाना है?

फिर पहाड़, पृथ्वी और अन्य पदार्थों की तुलना में आदमी तो बहुत ही कोमल होता है. भला उस तेज आग में वह कैसे साबुत रहेगा? वहां तो क्षण, दो क्षण की बात नहीं, हजारों वर्षों वाले पर्याप्त बड़े दिन भर खड़ा रहने की बात है.

फरिश्ते अविचल भाव से खड़े रहेंगे, क्योंकि वे स्वयं आग से निर्मित हैं. खैर, वर्णन आता है कि जब हजरत मूसा ने कोहेतूर (तूर पहाड़ी) पर खुदा के जलवे की आंशिक झलक देखी तो वह पहाड़ जल कर खाक हो गया था और वह खुद मूर्छित हो गए थे. अब कल्पना कीजिए कि उस तेज खुदाई जलवे की जब झलक मात्र में इतनी शक्ति है तो कयामत में वह पूरा स्वरूप (जलवा) सामने होगा. भला तब बंदे कैसे उस का सामना कर सकेंगे?

आदमियों की फसल कहां समाएगी

और सब से बड़ी बात तो यह है कि अरबों वर्षों से पैदा होती जा रही आदमियों की फसल जब एक साथ खड़ी हो जाएगी तो वह भीड़ समाएगी कहां? क्या पृथ्वी का वर्तमान क्षेत्रफल विस्तृत हो जाने वाला है? या फिर एक के ऊपर दूसरा, दूसरे के ऊपर तीसरा कर के कई मंजिलों में बेचारे बंदों को मीनारों की शक्लों में खड़ा होना पड़ेगा? और फिर इस तरह ऊंचाई बढ़ने पर सूर्य से टकरा जाना क्या मुश्किल होगा? क्योंकि सूर्य खुद सवानेजे पर ही तो ठहरा होगा. फिर सूर्य का क्षेत्रफल क्या इस पृथ्वी से कम है? वह तो हमारी पृथ्वी से हजारों गुना बड़ा है. सितारे टूटटूट कर भला कहां गिरेंगे? वे तो सूर्य से भी काफी तेज और बड़े हैं.

कयामत के दिन सूर्य और पृथ्वी ठहर जाएंगे, यानी घूमेंगे नहीं. तो गतिशील न रहने पर इन ग्रहउपग्रहों का अस्तित्व कैसे रहेगा?

कयामत में हिसाबकिताब के बाद बंदों को आगे धकेला जाएगा यानी कचहरी का काम खत्म और अब अपनेअपने कर्मों का फल चखने का खुदाई इंतजाम उन्हें भोगना शेष रह जाएगा. अतः वे जन्नत (स्वर्ग) और जहन्नुम (नरक) की ओर भेजे जाएंगे. वहां तक पहुंचने के लिए एक रास्ता तय करना होगा और यह वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रास्ता है जो तलवार सा तेज और बाल से भी बारीक होगा यानी पुल सरात.

पुल सरात नाम से यह आभास मिलता है कि यह कोई पुल होगा जो काफी लंबा होगा. उस के नीचे आग का दरिया ठाटें मारता होगा. जो बंदे नेक होंगे वे तो इसे पार कर जाएंगे जो बद होंगे वे कटकट कर नीचे दहकते समुद्र में जा गिरेंगे. बकरा कुरबानी करने वाले मुसलमान मरद औरत को एक बुर्राक (घोड़ा) इसी रास्ते को पार करने के लिए मिलेगा, ऐसा मुसलमानों का विश्वास है.

खतरों से भरा रास्ता : पुल सरात

अब आप थोड़ा सा दिमाग खोल कर सोचें तो सही. भला वह रास्ता होगा कहां? उस का विस्तार कहां से कहां तक होगा? उस का आदि कहां होगा और अंत कहां होगा? जिन के लिए दोजख की सजा सुना दी गई होगी उन्हें रास्ते में रोकने का फरिश्तों को क्या हक होगा? बरसों तक वे पुल सरात पर ही क्यों सताए जाते रहेंगे?

रही बुर्राक की बात सो यह भी अजीब न्याय होगा कि जो बकरा काट देगा उसे तो वहां सवारी मिल जाएगी और जो नेक रह कर गरीब रहा हो और अभावग्रस्त होने के कारण कुरबानी न कर सका हो, वह पैदल चलेगा और कटता-मरता रहेगा. अजीब व्यवस्था है.

इस के बाद बंदों को जन्नत और दोजख में दाखिल किया जाएगा. जो अल्लाह वाले होंगे और जिन के पास नेकी का प्रमाणपत्र होगा, वे जन्नत में भेज दिए जाएंगे और बद लोग नरक में.

बहिश्तें भी एक नहीं आठआठ हैं. इसी प्रकार जहन्नुम भी इतनी ही तादाद में बने हुए हैं.

एकएक बहिश्त का विस्तार इतना है कि उस का कोई ओरछोर नहीं है. संपूर्ण प्रकार की यातनाओं की जहां व्यवस्था है वह है दोजख और जहां संपूर्ण सुखसुविधा और ऐश्वर्य है वह है बहिश्त.

जन्नत में बाग हैं, मेवे के वृक्ष हैं, दूध और शहद की नहरें हैं और उच्चकोटि की शराब के दरिया छलकते हैं. लचकती डालियों पर नफीस झूले पड़े होंगे और उन पर बंदों को नाजुक हूरें झुलाती होंगी. हर ओर आनंद होगा और बड़ेबड़े आलीशान महल, रेशमी लिबास, गाव और तकिए, तख्त और मोती जड़े शामियाने, शीतल और मंद समीरण के झोंके और दोजख की कल्पना ठीक इस के विपरीत की गई है.

दोजख और जन्नत

भला ऐसी व्यवस्था अंतरिक्ष में है कहां? छोटीमोटी व्यवस्था तो है नहीं कि उसे छिपाया जा सके.

विज्ञान ने अंतरिक्ष का कोनाकोना छान मारा है. पृथ्वी के अलावा ऐसा कल्पित ऐश्वर्य किसी भी ग्रह या उपग्रह में हो, ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता. आसमान के किसी परदे में बहिश्त और दोजख की व्यवस्था नहीं है. यह एक कोरी कल्पना है. सत्यता से इस का कोई नाता नहीं दीखता. बहिश्त की सुनहरी कल्पना धर्मभीरु लोगों के लिए मात्र एक प्रलोभन है और कुछ नहीं.

अरब जैसे सूखे और रेगिस्तानी भूखंड के लिए दूध, शहद, शराब, बाग, मेवे और नहरों की सुखद कल्पना पर्याप्त थी. वे लोग जिन्हें पानी भी पूरा नसीब न होता हो, जो दूरदूर तक बालू के तपते टीलों और चट्टानों पर लू के थपेड़े खाते हों, उन के लिए ठंडे पानी और शीतल समीरण की कल्पना क्या कम है?

ऊंटों के कारवां तपते रेगिस्तान में झुलसते हुए प्यासे चलते ही रहते हैं. न छायादार पेड़, न पानी. उन्हें सब्जबागों और शीतल मीठे पानी के स्वप्न जरूर

आते होंगे और उन स्वप्नों की कल्पनाओं को साकार रूप देने के लिए भी शायद बहिश्त की कल्पना कर ली गई होगी. ऐसी परिस्थिति में वैसा करना संभव ही है. जहां फल नहीं होते, उन के लिए शराब और मेवों से बढ़ कर और क्या प्रलोभन हो सकता है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहिश्त में हूरें

फिर मुसलमानों के लिए बहिश्त में जो सब से बड़ा आकर्षण है, वह है नौजवान हूरों (परियों) और गिलमानों (चाकर) का. बेपनाह हसीन, गोरी, नाजुक और जवान अठारह वर्षीया, कवि की कल्पना से भी अधिक सुंदर और आकर्षक सुडौल काया, लंबी सुराहीदार गरदन, बड़ीबड़ी पानीदार आंखें, चमकते नूरानी चेहरे, प्यारी दंतावलि, उन्नत दृढ़ उरोज, पतलीलचकती कमर, नाजुक और लंबे हाथ, पतलीपतली अंगुलियां. होंठ ऐसे मानो कमल की पंखुरियां परस्पर आलिंगनबद्ध हों.

कहते हैं कि ये हूरें न स्वयं कभी बूढ़ी होंगी और न उन्हें भोगने वाले नेक बंदे ही बूढ़े होने दिए जाएंगे. बस, मजे ही मजे हैं नेक मुसलमानों के लिए. फिर जब वे अपनी बांहों में घेर कर जाम पेश करेंगी तो मजे में क्या कमी रह जाएगी?

सच तो यह है कि ऐसी कल्पना करते ही मजा आने लगता है. अपार सुख का अहसास होने लगता है और दिल मचलने लगता है.

फिर जब सचमुच उन से साक्षात्कार होगा तो वह घड़ी तो निस्संदेह अपूर्व ही होगी. काश, वह दिन खुदा नेक मुसलमानों को जल्द ही दिखाए. इस के बावजूद अगर कोई बंदा मुल्लामौलवियों का कहा नहीं मानता तो निश्चय ही वह बड़ा बदनसीब है.

लेकिन समझ में नहीं आता कि जो शराब मुसलमान के लिए इस दुनिया में हराम है, वह वहां कैसे जायज होगी? भला यह विरोधाभास कैसा? यदि शराब अच्छी चीज है तो वह इस दुनिया में क्यों वर्जित है? और अगर वह खराब है तो फिर उसे जन्नत की नियामत कैसे बनाया गया? कुछ समझ में नहीं आता.

दूसरी बात यह है कि नेक मुसलिम पुरुषों के लिए तो जन्नत में नौजवान अनिंद्य सुंदरियों की व्यवस्था होगी, पर मुसलिम औरतों के लिए वहां क्या होगा? क्या उन के लिए भी खूबसूरत मरद होंगे?

धन का अपव्यय क्यों?

पति को पत्नी मिल जाए और पत्नी को पति. यहां तक तो ठीक है. मगर क्या यह भी जरूरी है कि मियांबीवी दोनों ही नेक साबित होंगे. तब? तब तो निश्चय ही बड़ा घपला हो जाएगा. अजीब व्यवस्था है कठमुल्लों की उस तथाकथित जन्नत में.

इस के साथ ही मुसलमानों को जिस बात पर सब से अधिक विश्वास है वह है विभिन्न आसमानों के अस्तित्व का. मुसलमानों की धारणा है कि एक के बाद एक सात आसमान हैं, सब से ऊपर अर्श आजम है जहां खुदा का अस्तित्व कितने ही नूरानी परदों में रहता है.

इन सात आसमानों के परदों में ही कहीं जन्नत और उस का भयानक जहन्नुम का विस्तार है, पुल सरात है और न जाने क्याक्या है? कहते हैं कि ईसा मसीह भी, जिन्हें खुदा ने जिंदा ही आसमानों पर खींच लिया था, इन्हीं आसमानों में से किसी एक पर रहते हैं.

वैसे किसी तर्क के आधार पर यह नहीं माना जा सकता कि आसमान सात हैं.

विज्ञान इस तथ्य को मानने से साफ इनकार करता है. आज आदमी चांद और अनेक ग्रहों पर जा चुका है और जाने की सोच रहा है. उस के उपग्रह अंतरिक्ष में

रातदिन घूम रहे हैं और संकेत तथा फोटो भेज रहे हैं. मगर वे सात आसमानी परदों का कभी कोई संकेत नहीं देते.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंधविश्वासों के पीछे आधार नहीं

इस प्रकार हम देखते हैं कि उपर्युक्त अंधविश्वासों के पीछे कोई ठोस आधार नहीं हैं. वे कोरी कल्पनाएं हैं, कोरी अटकलें हैं. मगर विज्ञान और बौद्धिक प्रगति के इस युग में भी मुसलमान इन कल्पनाओं की मृगतृष्णा के पीछे अपने समय और धन का अपव्यय करता है. क्या यह उचित है? नेकी, ईमानदारी, वफादारी और सत्यनिष्ठा ही सच्ची इबादत है और वह भी इसलिए निभानी है क्योंकि यह इनसानियत है, फकत इस वास्ते नहीं कि हमारा आखिरत सुधरेगा.

धर्म के नाम पर और उन तथाकथित हूरों की प्राप्ति के लिए फिज़ूलखर्ची छोड़ कर हाजतमंद मुसलिम भाइयों के लिए धनिक मुसलमान अगर कुछ करें तो सच्चे माने में यह इबादत भी है और राष्ट्रसेवा भी. निश्चय ही खुदा तभी खुश होगा, वरना इबलीस ने क्या कम इबादत की थी? ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिंदी साहित्य की बपौती

हिंदी साहित्य के लगभग चारों ही कालों के रचयिता अति व्यक्तिवादी, अंतर्वादी और यौन प्रतिबद्धता के मरीज के थे. क्या उन का लिखा साहित्य आज के विद्यार्थी को आदर्श नागरिक बना सकता है? फिर हम उसे क्यों मरे बच्चे की तरह चिपकाए घूम रहे हैं?

आम कहावत है कि मनुष्य की जैसी संगति होती है वैसा ही वह बन जाता है. यह संगति केवल मनुष्यों की ही नहीं बल्कि पढ़ी जाने वाले पुस्तकों और उन से मिलने वाले ज्ञान की भी होती है. मनुष्य चारपांच वर्ष की अल्प आयु से छोटीछोटी और बाद में उत्तरोतर प्रगति करते हुए बड़ीबड़ी किताबों के संपर्क में आता है. 'पुस्तकों में लिखा हुआ' ही उस का दोस्त होता है. 'वह लिखा हुआ' यदि वैज्ञानिक व प्रगतिशील विचारधारा पर आधारित और उस का पोषक होगा तो विद्यार्थी समकालीन जीवन की समस्याओं को सुलझाने में सफल हो सकेगा. और यदि 'वह लिखा हुआ' आज के विद्यार्थी को हजार दो हजार वर्ष पहले की समस्याओं में उलझाए रखेगा तो विद्यार्थी क्या उन्नति कर पाएगा? वह कौन सी आधुनिक समस्याओं को सुलझा पाएगा? कोई भी बुद्धिजीवी इस का सहज ही अनुमान लगा सकता है.

लेख • सोमा सबलोक

परीक्षाएं पास करने के लिए हिंदी साहित्य के विद्यार्थी का वास्ता आज से एक हजार साल पहले के इतिहास से और उस अवधि में लिखे साहित्य से पड़ता है. ऐसे पाठ्यक्रम को पढ़ कर वह उपाधि तो प्राप्त कर लेता है, पर इतना कुछ पढ़ने के बाद भी उस के पल्ले कुछ नहीं पड़ता. जो चीजें वह कक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए स्वयं पढ़ कर रट चुका होता है, वे प्रायः ऐसी चीजें होती हैं जिन का बाद में उसी कक्षा के विद्यार्थी को पढ़ाने के सिवा अन्य कोई उपयोग नहीं होता.

बहुत बार तो वह उन चीजों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एकाध वर्ष बाद उसी कक्षा के विद्यार्थी को पढ़ाने में भी असमर्थ होता है क्योंकि वे चीजें तो वह केवल डिगरी पाने के लिए पढ़ता है, न कि उन्हें जीवन में उपयोग में लाने के लिए. उस में से अधिकांश की व्यावहारिक उपयोगिता भी नहीं होती. न इन चीजों में कोई दिलचस्पी ही होती है. यही कारण है कि वह उन्हें भूल जाता है. उस की स्वतंत्र विचारधारा पनप नहीं पाती. पुरानी विषयवस्तु का जो भाग उसे याद होता है वह वर्तमान के लिए उपयोगी नहीं होता.

और नया वह तैयार नहीं कर पाता क्योंकि उस ने जो कुछ पढ़ा होता है, वह उसे इस योग्य ही नहीं बनाता कि वह कुछ नया रच सके. इस का परिणाम यह होता है कि उस के बाद की पीढ़ियों को भी वही कुछ पढ़ना पड़ता है, जो उस ने खुद पहली कक्षाओं में पढ़ा था.

विकृत आध्यात्म

हिंदी साहित्य के वर्तमान विद्यार्थी को जो साहित्य पढ़ने के लिए उपलब्ध है वह सब आध्यात्मिकता के पंक से भरा पड़ा है. आध्यात्मिकता के नाम पर हिंदी साहित्य में विकृत कामवासना और नग्नता है. यह आध्यात्मिकता उसे सिर्फ एक अज्ञात शक्ति को भजने की प्रेरणा देती है. इस आध्यात्मिकता में मात्र भक्ति रस भरा है, जो आधुनिक समस्याओं को सुलझाने का साधन नहीं है. इसलिए हिंदी पाठक प्रायः प्रत्ययवादी (आइडियोलिस्ट), धर्मभीरु और प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं.

हिंदी साहित्य को ऐतिहासिक दृष्टि से चार कालों में बांटते हैं.

(क) —आदिकाल (संवत 750 से 1375 तक)

(ख) —भक्तिकाल (संवत 1375 से 1700 तक)

(ग) —रीतिकाल (संवत 1700 से 1900 तक)

(घ) —आधुनिककाल (संवत 1900 से आज तक)

हिंदी साहित्य के इतिहास के ये काल एक से एक बदतर है, सिवा आधुनिक काल के कुछ अंश के. इन्हें पढ़ते वक्त विद्यार्थियों को कई प्रकार की उलझनों का सामना करना पड़ता है.

आदिकाल की हकीकत

इन कालों का यदि क्रमवार अध्ययन किया जाए तो पता चलता है कि जनता को गुमराह करने के अतिरिक्त इन में और कुछ नहीं. इन में काम का प्राधान्य है. इन कालों में साहित्य उन व्यक्तियों द्वारा रचा गया है जो स्वयं को समाज के नेता समझते थे, जो भक्ति के नाम पर अपनी वासना की पूर्ति करते थे और अपनी विचारधारा के अनुसार समाज को छल कर नारी की दुर्गति बनाते थे.

आदिकाल सिद्धों, नाथों और योगियों का समय था, जिन्हें मंदिरों और श्मशान भूमियों में भस्म रमाने और नारी की निंदा करने के सिवा कोई अन्य काम न था. यह दूसरी बात है कि वज्रोली क्रिया के नाम पर नारी को पाशविक रूप में कामपूर्ति के लिए प्रयुक्त किया जाता था. इस काल की दूसरी विशेषता चाटुकारिता है. चारण निरंकुश शासकों की उद्दंडता को बहादुरी कह कर उन की प्रशंसा करते थे.

इस काल में बुद्ध और जैन धर्म अपने आदर्शों से हट गए और फिर उन की महायान, वज्रयान, सहजयान और मंत्रयान शाखाएं हो गईं. इन संप्रदायों में अलौकिक शक्तियों की प्राप्ति और उन के प्रदर्शन को ही सिद्ध समझा गया, जो शैतानी भरी मदारीगीरी के अलावा और कुछ न थी. इस सिद्धि लाभ के लिए गुप्त मंत्रों का जाप, आचारविहीन गुप्त क्रियाएं विशेष कर निम्न वर्ग की नारियों से व्यभिचार आदि को अपनाया गया. इन की योगिनियों के द्वारा मनुष्य की कामुकता को बढ़ावा मिला. इस के अतिरिक्त पांच शत्रु पाशुपत, कालमुख, कापालिक, रसेश्वर संप्रदायों और जैन धर्म में भी इसी

वामाचार का प्रचार हुआ.

इस काल के साहित्यिक क्षेत्र में यदि किसी साहित्य की रचना की भी तो सिर्फ पांडित्य व अलंकार चमत्कार के प्रदर्शन के उद्देश्य से, न कि समाज को कुछ देने या उस का सही मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से.

'आदिकाल' को 'वीरगाथा काल' भी कहा गया है. इस काल के हिंदी साहित्य से पता चलता है कि उस में जराजरा सी बात पर या किसी स्त्री की प्राप्ति के उद्देश्य से मारकाट के सिवा कुछ भी न था.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस के बाद 'भक्तिकाल' का उदय होता है. इस का उदय क्यों हुआ? इस के बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे परंपरावादी इतिहासकार तक का कहना है कि भक्तिकाल का उदय हारी हुई मनोवृत्ति की उपज थी, क्योंकि "अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही नहीं था." (हिंदी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 63)

त्रिबलि, नाभि दिखाइ कर, सिर ढंकि सकुचि समाहि,
गली अली की ओर कैं, चली भली विधि चाहि. (बिहारी)

रीतिकालीन कवियों ने इसी तरह के अनगिनत अश्लील वर्णन कर के नारी को विकृत वासनाओं का आधार बनाने में कोई कोरकसर नहीं छोड़ी.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाबू गुलाबराय कहते हैं, 'मनोवैज्ञानिक तथ्य के अनुसार इस की मनोवृत्ति में दो बातें संभव हैं, या तो अपनी आध्यात्मिक श्रेष्ठता दिखाना या भोग-विलास में पड़ कर हार की भूल. भक्ति काल के लोगों में प्रथम प्रकार की प्रवृत्ति पाई जाती है."

इस काल के साहित्यकार थे—कबीर, तुलसी, नानक, सूरदास, जायसी आदि जिन्होंने भगवद्भक्ति, उत्तरदायित्वहीनता, नामस्मरण, भाग्यवाद, पुनर्जन्म, परलोक सुख, निराशावाद आदि सत्यानाशी चीजों के सिवा किसी आशावादी और जीवनोपयोगी चीज का प्रचार नहीं किया. किसी भी सामाजिक समस्या को नहीं सुलझाया. यहां तक कि वे जातिपांति के विरुद्ध भी कोई व्यावहारिक कदम न उठा सके जब कि उस समय की समस्याएं अब की अपेक्षा कम थीं.

कृष्णभक्ति साहित्य का अपना ही रूप था. इस काव्य के कवियों ने नायक कृष्ण और नायिका राधा का नग्न वर्णन कर के अपनी वासना की पूर्ति की है. उन के रसिया कृष्ण और छैली राधा आधुनिक समस्याओं को सुलझाने में कैसे समर्थ हो सकते हैं क्योंकि उन के सारे दिन का कार्य हासविलास और ऐंद्रिय सुखोभोग ही था. उन में लोकमंगल का लवलेश भी नहीं था. कृष्णभक्ति काव्य के सभी कवियों--सूरदास, नंददास और मीरा आदि को हिंदी साहित्य में विशेष व अनिवार्य अध्ययन के योग्य बताना तो आधुनिक युग की व्यावहारिक समस्याओं से ध्यान हटाने के सिवा और कुछ नहीं है.

कृष्णभक्ति और रीतिकाल

और इस के बाद आया रीतिकाल, जिस ने मुख्य रूप से ऐंद्रियपरकता, कामुकता, घोर व्यक्तिवादिता और भोगविलास को अपनाया. अभिप्राय यह कि रीति कवि के काव्य में जीवन के मांसल भोग की गहन अनुभूतियां ही हैं.

इस काल के मुख्य साहित्यकारों के रूप में बिहारी, केशवदास, रसखान, घनानंद, पद्माकर आदि का नाम लिया जाता है. ये साहित्यकार राज्याश्रित कवि थे, जिन्हें दरबारी चमकदमक के सिवा जनजीवन की न कोई खबर थी और न ही उस से कोई सरोकार था. वे तो दाम ले कर काव्य रचना करते थे. जैसा कि एक उर्दू कवि ने कहा है:

"भरते हैं मेरी आह को वे ग्रामोफोन
कहते हैं आह खेंचिए और दाम लीजिए."

या फिर नायिका अर्थात दरबारी नर्तकियों, गायिकाओं व वेश्याओं के दोस्त थे. और वही कुछ उन के साहित्य में मिलता है.

हिंदी का रीतिकालीन साहित्य आजकल के पटरी मार्का और घासलेटी साहित्य से भी बदतर है. क्योंकि उस में न केवल उपर्युक्त प्रकार की विकृतियां हैं अपितु उन की क्षोभजनक व उबाऊ पुनरावृतियां भी हैं.

इस के बाद आता है 1936 से पहले का आधुनिक काल, जिसे प्रायः भारतेंदु युग, द्विवेदी युग और छायावादी युग के नाम से पुकारा जाता है. इन में भारतेंदु और द्विवेदी युग का हिंदी साहित्य तात्कालिक सामाजिक चेतना को लिए है. यद्यपि उस में शिक्षाबाजी ही है.

आधुनिक युग की धाराएं

1936 से पहले के आधुनिक कवि हैं प्रसाद—जो थोथे अध्यात्मवाद के ही नारे लगाते रहे, महादेवी वर्मा—जो केवल दुख की नीर भरी बदली बनी रहीं. पंत—जो अपने आधे काव्य में प्राकृतिक सौंदय के दिलदारा बने रहे.

छायावाद कल्पनावाद के सिवा और कुछ भी न था. यह पश्चिम के स्वच्छंदतावाद का दो शताब्दी बाद का भारतीय संस्करण था. छायावादी साहित्य में प्रत्ययवाद (आइडियालिज्म) की अभौतिक विचारधारा को ले कर काल्पनिक प्रियतमों से बातें करने में उलझे रहने के सिवा और कुछ नहीं मिलता.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यमुना के किनारे करील के कुंजों में कृष्ण और गोपियों का खुले आम मेलजोल और उन के उन्मुक्त आचरण के वर्णन से रीतिकालीन हिंदी साहित्य भरा पड़ा है.

1936 के बाद 'प्रगतिवाद' के नाम से आधुनिक विचारधारा चल निकली, जिस ने जनता को आधुनिक समस्याओं को समझने और उन्हें सुलझाने में काफी सहायता की.

1936 के बाद भी ऐसा साहित्य मिलता है, जिस में भदेसवाद और नग्नता का चित्रण है पर उस में सुधार की भावना भी अंतर्निहित है.

प्रगतिवाद के बाद आया प्रयोगवाद. इस में ठीक वही ढाक के तीन पात वाली बात है. इस में भदेस के चित्रण और विकृत कामकुंठाओं की तृप्ति तथा घोर व्यक्तिवादिता के सिवा और कुछ भी नहीं.

प्रयोगवादी साहित्य में वैज्ञानिक मूल्यों के नाम पर विज्ञान के केवल निषेधात्मक मूल्यों–निराशा, अनास्था, घृणा, क्षणवाद और मानसिक विकृतियों—का चित्रण 'सच्ची आधुनिकता' या 'वैज्ञानिकता' नहीं है. यह युग जीवन का एक खंडित चित्र है. प्रयोगवादी कवि की भोगलिप्सा एक नपुंसक की रुग्णता—आधुनिक साहित्य, आधुनिक समस्याओं से दूर है. उस का जीवनदर्शन अधिकांशतः मानसिक विकृतियों के सागर में डुबकियां लेने के काबिल ही बनता है.

जिस प्रयोगवाद में कवि प्रयोग की आड़ में सभी प्रकार की विकृतियों के प्रति सहिष्णु हैं, ऐसे कवियों से क्या यह आशा की जा सकती है कि वे आधुनिकता की समस्याओं को सुलझाएंगे? ऐसे लोगों का साहित्य इतना उलझा हुआ है कि वह पाठक की समझ में नहीं आता. उलटा ये लोग पाठक पर आरोप लगाते हैं कि पाठक इसे समझ नहीं सकता.

ऐसे लोगों के लिए डा. गणपतिचंद्र गुप्त लिखते हैं—"पाठकों के दिमाग को अपनी कविता के लिए अनफिट घोषित कर के अपने अहं की डुगडुगी बजाते चलना वैसा ही है जैसा कि चीनी के स्थान पर नमक का बोरा ले कर बैठ जाना और फिर प्रत्येक ग्राहक को कहना कि तुम्हारी

जिभ्या का का स्वाद बिगड़ गया है. अतः किसी नई जीभ से इसे चखो."

क्या ऐसे अहंवादी और व्यक्तिवादी किसी की समस्याओं को सुलझा सकते हैं? यह ठीक है कि मनुष्य की भावनाएं होती हैं पर नितांत व्यक्तिगत भावनाओं को साहित्य कह देना भी व्यावहारिक नहीं क्योंकि साहित्य में समूचे समाज की समस्याओं को सुलझाया जाता है और उन्हें व्यावहाकिरता का रंग दिया जाता है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साहित्य की बपौती

हिंदी की साहित्यिक बपौती काम-वासना, थोथी नैतिकता, प्रियतम के नाम का जाप, भाग्यवाद, दुनिया से वैराग्य, पलायनवाद, परलोकवाद, शास्त्रवाद, ब्राह्मणवाद, सामंतवाद की निरंकुशता की प्रशंसा और व्यक्तिगत भावनाओं के अलावा कुछ भी नहीं है.

हिंदी साहित्य के रचियताओं—चाहे वे कृष्णभक्त हों या रामभक्त, सूफी हों या संत, रीतिकालीन हों या आधुनिक-कालीन—सभी व्यक्तिवादी, अंतर्वादी, और यौन प्रतिबद्धता के मरीज थे. इन्होंने 'परलोक' के लिए रहस्यवाद का लबादा ओढ़ कर अपने इष्टदेवों व आश्रयदाताओं के पथबद्ध चरित्रगान किए. उन्हीं वर्णनों में जहां कहीं इन्होंने समाज के लिए कुछ कहा भी, वह सत्यानाशी ही है. टूटती रूढ़ियों से पीड़ित हो कर वे समकालीन समाज को रूढ़िवादी बनाए रखने के लिए हाथपैर मारते रहे हैं. ऐसे घोर व्यक्तिवादियों का सामाजिकता से क्या वास्ता? वे इस संसार से पलायनवादी बन कर परलोक(?) पर आंखें लगाए थे. क्या ये सभी आधुनिक समस्याओं को सुलझाने में समर्थ हैं?

आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है. उस के सामने समाज की समस्याएं आएंगी. क्यायह हिंदी साहित्य, जो हिंदी साहित्य के विद्यार्थी को पढ़ने को मिलता है, उसे आदर्श नागरिक बनाएगा? उस की समस्याएं सुलझाएगा? उसे आधुनिक जीवन जीने के काबिल बनाएगा? कभी नहीं. ऐसे साहित्य को पढ़ कर कुछ रूढ़िवादी व यथास्थितिवादी लोग ही पैदा किए जा सकते हैं जो देश में अलोकतंत्र फैला कर अपना अस्तित्व कायम रख सकें.

आज तो ऐसे हिंदी साहित्य की आवश्यकता है जो व्यक्तिगत उलझनों से ले कर सामाजिक उलझनों तक को सुलझाने में सहायक हो, जिस से आधुनिक परिवेश में हिंदी पाठक अपना जीवन सुचारु रूप से जी सकें.

हिंदी विश्व की चार मुख्य भाषाओं में से है. भारत की जनता का अधिकांश भाग इस भाषा के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति व ज्ञानार्जन करता है. इस विशाल जनसमूह तक, जिस की संख्या 26 से 28 करोड़ है, अपने भावों व विचारों को पहुंचाने का माध्यम हिंदी है. भारत के नवनिर्माण के लिए उन तक नवचेतना ले जाने का सुगम मार्ग वही भाषा हो सकती है, जिस से वह जनसमूह भली प्रकार परिचित हो और उसे व्यवहार में लाता हो. अतः हिंदी भाषा का व्यावहारिक महत्त्व निर्विवाद है. इसे हिंदी साहित्य की बपौती का व्यावहारिक महत्त्व समझना व कहना भूल होगी.

भाव यह है कि हिंदी साहित्य की बपौती का अधिकांश भाग अव्यावहारिक तत्त्वों से भरपूर है पर इस से हिंदी भाषा की व्यावहारिक उपयोगिता समाप्त नहीं हो जाती. आज हिंदी में ऐसे साहित्य की आवश्यकता है जो करोड़ों लोगों के मानसिक स्तर को ऊंचा करने, मनुष्य को मनुष्य के दुखसुख के प्रति संवेदनशील बनाने, उन को ज्ञान, मोह और कुसंस्कार से मुक्त कराने में सहायक हो. हमें ऐसे हिंदी साहित्य की रचना करनी चाहिए जिस स मनुष्यता को लाभ पहुंचे, परस्पर मानवीय प्रेम की भावना पैदा हो, कोई किसी का सहारा ले कर जिंदगी बसर न करे और कोई अपने अधिकारों से वंचित न हो. ●

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आज देश की सब से बड़ी आवश्यकता

सीमाबंदी

व्यक्ति के लिए—परिवार की सीमा

बच्चे उतने ही पैदा कीजिए, जितने आप भली भांति पाल सकें. जब तक आप का बच्चा स्वयं कमाने लायक होता है तब तक वह आप की लगभग एक चौथाई आमदनी खा जाता है. इसलिए अपने हित में, बच्चे के हित में और देश के हित में बच्चे सीमित संख्या में ही पैदा कीजिए. यह आप के अपने हाथ में है कि कितने बच्चे हों. भगवान इस विषय में बिलकुल शक्तिहीन है. नसबंदी के बाद भगवान लाख चाहे और अपनी सारी शक्ति भी लगा दे तो आप के बच्चा नहीं हो सकता.

सरकार के लिए—कानूनों की सीमा

जितने अधिक कानून बनते हैं, उतना ही कानूनों का महत्त्व और उपयोगिता कम होती जाती है. जिस कानून का पालन नहीं कराया जा सकता, वह कानून कानून न हो कर समाज का कलंक बन जाता है.

आज केंद्रीय व राज्य सरकारें, संसद और विधान सभाओं से नित नए कानून पास कराती हैं और नतीजा यह होता है कि रोज नए जुर्म उत्पन्न होते जाते हैं. जो काम कल तक वैध था, वह आज एकाएक जुर्म बन जाता है. इस से अदालतों में लाखों मुकदमे जमा होते जाते हैं और वे बिना फैसले के बरसों पड़े रहते हैं. जो इन कानूनों की अवहेलना करते हुए सरकार की नजरों से बच जाते हैं, उन की तो गिनती ही नहीं.

ज्यादा कानून बनते हैं तो न वे ठीक तरह सोचसमझ कर लिखे जा सकते हैं, न उन पर ज्यादा बच्चों की तरह पूरा गौर हो पाता है और न वे पूरी तरह मनवाए जा सकते हैं.

जितने अधिक कानून बनेंगे, उतना ही अधिक सरकारी अमला बढ़ेगा. उतनी ही अधिक अदालतें भी बनानी होंगी और इन सब का खर्च पूरा करने के लिए नित नए टैक्स लगाने पड़ेंगे.

जिस शक्ति और समय का उपयोग अधिक उत्पादन में होना चाहिए, वह कागजी कार्यवाही में, सरकारी अमले को संतुष्ट करने में और कानून से बचने में लग जाता है. इस से अक्सर ईमानदार नागरिक भी कानून तोड़ने वाला और अपराधी बन जाता है.

- व्यक्ति जीवन भर में दो या तीन बच्चे पैदा करे.
- संसद और विधान सभाएं साल में केवल दो या तीन कानून बनाएं.
- बच्चे कम तो गरीबी कम, कानून कम तो नए अपराध और नए अपराधी कम.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समाजवाद = सरकारवाद = गुलामवाद

हर समाजवादी देश में समाचारपत्रों पर सरकारी कब्जा होता है. वहां रेडियो, टेलीविजन, पुस्तक प्रकाशन, प्रिंटिंग प्रेस सरकारी हैं. किसी नागरिक को बोलने का, लिखने का, सभाओं में भाग ले कर अपना दुखदर्द, अपने विचार प्रकट करने का मौका नहीं मिलता. अदालतें सरकारी आदेश पर मुकदमों का फैसला करती हैं. बिना आरोप लगाए, बिना मुकदमा चलाए हजारों व्यक्ति जेलों व पागलखानों में बंद रहते हैं या दूर बीहड़ों में निर्वासित कर दिए जाते हैं.

समाजवाद में सरकार अपनी इच्छानुसार व्यक्ति को वेतन देती है—और उस वेतन से खरीदने के लिए अपनी इच्छानुसार सामान मुहैया करती है, और अपनी मर्जी के मुताबिक उस के दाम मुकर्रर करती है. सरकारी नौकरी के सिवा और न कोई नौकरी है, न उद्योगधंधा है. सारे मकान सरकारी, सारी सेवाएं सरकारी. राशन, पानी, बिजली, यातायात सब सरकारी. एक बार नौकरी से अलग तो भूखों मरने के सिवा कोई चारा नहीं.

बेरोजगारी का खातमा समाजवाद की सब से बड़ी उपलब्धि मानी जाती है. परंतु बेरोजगारी हटाने का तरीका? करोड़ों व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दो, शहरों से बेकारों को दूरदराज गांवों में फेंक दो और गांवों से शहरों में किसी को न जाने दो. किसी विदेशी या तटस्थ व्यक्ति को गांवों में न जाने दो, जिस से सही हालत का पता न चल सके. बेकार अपने आप समाप्त हो जाएंगे, बेकारी स्वयं खत्म हो जाएगी.

रूस और चीन में करोड़ों निरपराध व्यक्तियों को मार डाला गया है. वहां न कोई व्यक्ति बिना परमिट/पासपोर्ट के शहर से गांव जा सकता है, न गांव से शहर आ सकता है. बेकारी और भुखमरी की कोई खबर न समाचारपत्रों में छप सकती है, न रेडियो पर प्रसारित हो सकती है और न सभाओं, जुलूसों, पुस्तकों व पोस्टरों द्वारा प्रचारित की जा सकती हैं. जनता पर शार्टवेव रेडियो रखने पर भी प्रतिबंध है, ताकि वे विदेशों के प्रसारण न सुन सकें. इन समाजवादी देशों से न कोई विदेश जा सकता है न कोई विदेशी वहां आ कर जहां चाहे घूम सकता है.

देश पर, हर नागरिक पर, सारा नियंत्रण सरकार का. पर सरकार पर किस का नियंत्रण? जनता का नहीं, केवल मुट्ठी भर व्यक्तियों का जो एक बार किसी तरह गद्दियों पर कब्जा कर बैठे. वे आपस में चाहे गद्दियां और आसन बदल लें, पर जनता उन्हें नहीं हटा सकती.

सच बात तो यह है कि जनतंत्र और समाजवाद का कोई मेल नहीं है. जहां नागरिक स्वतंत्रता है, वहां समाजवाद चल ही नहीं सकता. जहां समाजवाद है वहां नागरिक स्वतंत्रता नहीं रह सकती.

आज देश की आवश्यकता—न समाजवाद, न सरकारवाद, बल्कि

नागरिकवाद

विवि 75 : 277 : 4 दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली

सरिता, अगस्त (द्वितीय) 1976 से उद्धृत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घाटे वाले बालाजी

लेख • सावित्री परमार

बड़ी विचित्रताओं का देश है हमारा भारत. जाने कितने बाजीगर, जादूगर, चमत्कारी लोगों द्वारा रहस्य-भरे प्रदर्शन, आंखों को बांधने वाले अक्षय प्रलोभन--गली, मोड़, चौराहों पर उत्सुकता को जगाने वाले असंख्य करिश्मे. हर तरफ मजमे, भीड़, गरदन से गरदन और सिरों से जुड़े सिर, छत्ते की मानिंद.

इतनी दिमागी हलचलों के बाद जो शेष बचता है उसे जाने कितने अन्य अंधविश्वास कुरेदते रहते हैं. विचित्र

मिरगी, दौरे या दूसरे मानसिक रोग को भूतप्रेत का रंग दे कर अंधविश्वासी लोगों को कब तक गुमराह किया जाएगा?

रोमांचक घटनाओं की कतरनें इनउन हाथों से अदलतीबदलती उछलती रहती हैं. जिज्ञासाओं का बाजार गरम रहता है और जाने कितने महंत, साधु, संन्यासी, भोपे, सेवड़े, सयाने और ओझे यहां अपना व्यापार निर्विघ्न चलाते रहते हैं. डोरे, तावीज, गंडे, मंत्र, राखधूल, झाड़फूंक इन लोगों के हाथों से निकल कर ज्ञानी-अज्ञानी सभी को गुमराह किए रहती है.

राजस्थान राज्य के दो जिलों (सवाई माधोपुर तथा जयपुर) में विभक्त घाटा मेहंदीपुर नामक स्थान बांदीकुई स्टेशन से 24 मील की दूरी पर स्थित है. गाड़ी से उतरते ही यात्रियों को बालाजी के लिए बस तैयार मिलती है, जो वहां एक घंटे में पहुंचा देती है. यह स्थान दो पहाड़ों के बीच में बसा हुआ है. यहां अधिकतर यात्री भूतप्रेत बाधाओं से मुक्त होने के

घाटे वाला बालाजी अपना चित्र नहीं उतारने देते. शायद उन्हें डर है कि कैमरे में उन की आत्मा कैद हो जाएगी या उन की पोलपट्टी खुल जाएगी. यह उन की मूर्ति का चित्र है. भक्त लोग इसी पर फूलमालाएं चढ़ा लेते हैं.

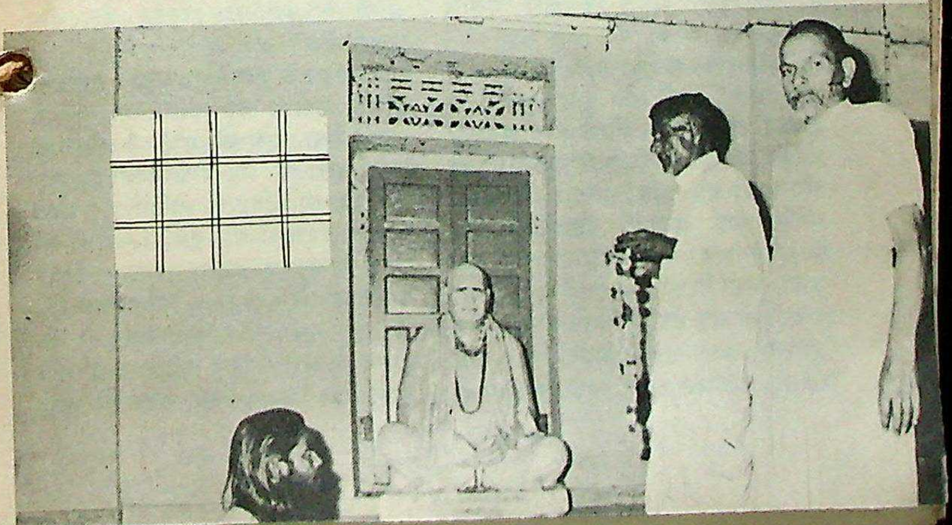

लिए बड़ी आशा ले कर आते हैं.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जब हमारी बस मेहंदीपुर पहुंची तब सूरज डूब रहा था और आसमान में पश्चिम की ओर लाली छाई हुई थी. कुल मिला कर हम दोतीन व्यक्ति इस यात्रा पर आए थे. बालाजी तक पहुंचने के लिए अब तांगे का इंतजार था. तांगे कुल दो या तीन थे और सवारियां बहुत. पहले इतमीनान से बैठ कर चाय ली. चारों तरफ हरेभरे खेत दिखाई दिए. वायु के झोंके सुखकर और विचित्र शांति प्रदान कर रहे थे. वातावरण में केवल बालाजी महाराज के चमत्कारों के वर्णन, उदाहरण और हर वाक्य में जयजयकार.

अलौकिक चमत्कार

लंबी प्रतीक्षा के बाद तांगा मिला. पचास पैसे प्रति सवारी. रास्ते भर तांगे वाले के मुंह से भी उन्हीं अलौकिक चमत्कारों की कहानियां सुनते रहे. "सा'ब, क्या बात है अपने बालाजी महाराज की! बालक, बूढ़े, औरतें, मर्द सभी आते हैं. रातदिन महाराज की सेवा में हरेक संकट-बाधा से मुक्ति, भूतप्रेत घबरा के भाग जाएं. जिन के शरीर से वर्षों तक जिन्न नहीं हटते. यहां भय से कांप कर नौदो-ग्यारह. सब आ कर ठहरते हैं और हनूमान बाबा के चरणों में अपनी करुण कहानी सुनाते हैं. चढ़ावा चढ़ता है. सवामनी लगती है. बाबा वह पछाड़ खिलाते हैं, वह कष्ट देते हैं कि सारे जंजाल गायब."

तांगा रुकता है. कच्चापक्का भीड़ भरा रास्ता, दोनों ओर दुकानें, छोटा सा बाजार. सभी दुकानें मंदिर और यात्रियों संबंधी सामान वाली. चारपांच खानेपीने की, बाकी पर लड्डू, मिठाई, तसवीरें, अगरबत्तियां, मालाएं, बताशे और शेष पर परचूनी का सामान. चायपान की खूब खपत. इन्हीं के बीच धर्मशालाएं--लोटा-बालटी किराए पर लीजिए, दोचार दिन ठहरिए, जाते वक्त बिजली का पैसा दीजिए. धार्मिक स्थल है, इसलिए खान-

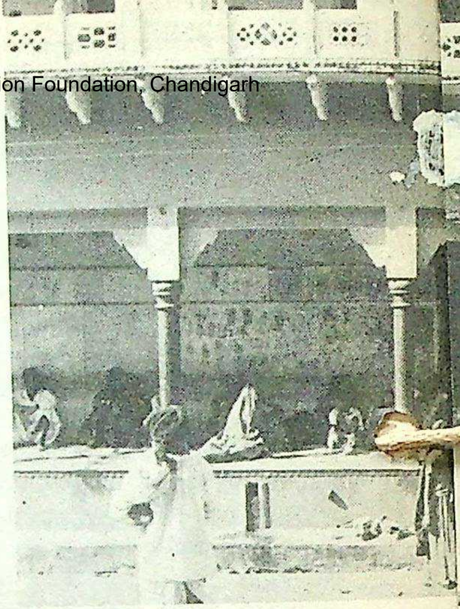

मेहंदीपुर के बालाजी के मंदिर का
दूरदूर से यहां आ

पान की पवित्रता और स्वच्छता का पूरा ध्यान रखना होता है.

हम ने ठहरने के लिए मंदिर के नजदीक वाली धर्मशाला चुनी. भीड़ बढ़ती जा रही थी. पता लगा कि अब शाम की आरती का समय है. शनिवार और रविवार विशेष दिन होते हैं भीड़ के. उस दिन शनिवार ही था. सब से पहले धर्मशाला के कुएं पर हाथपैर धोए और आरती देखने चले.

मंदिर के सामने ही भूतप्रेत बाधा के दोचार मरीजों को जमीन पर धूल में लोटते देखा. एक को लोहे की सांकल से जकड़ रखा था. वह चीखचिल्ला रहा था. आगे बढ़े तो मंदिर की सीढ़ियों पर, दोनों ओर के बरामदों में, ऐसे ही मरीजों की भीड़. चप्पलजूते बाहर उतार कर सिर पर कपड़ा ले कर भीतर जाना होता है.

हम अभी जूते उतार ही रहे थे कि दोएक पुजारी टाइप व्यक्ति आए और पूछने लगे, "आप किस संकट के मारे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

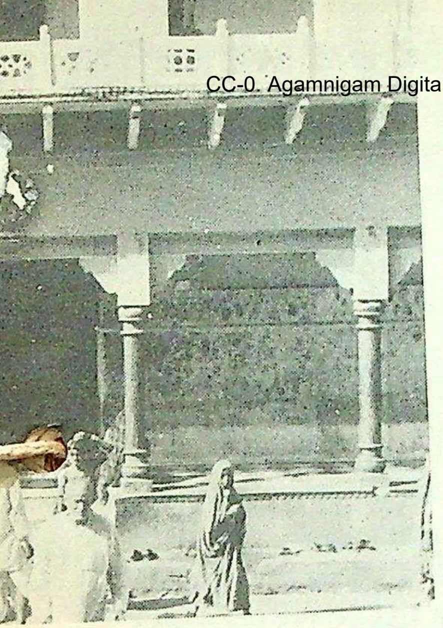

प्रवेशद्वार : अंधविश्वास के शिकार लोग पहुंचते हैं.

बाबा के श्रीचरणों में पधारे हैं?''

केवल दर्शनलाभ करने वाली बात को सुन कर वे थोड़े निराश से लगे तो मैं ने पूछा, ''हम किसी व्याधि के सताए हुए भी हैं, क्या चैन मिलेगा?''

उन की आंखें चमक उठीं, ''तो यह कहिए न! देखिए अभी मंदिर में आने से पहले उधर जाइए और वहां सब से पहले बाबा के दरबार में अपनी अर्जी दीजिए. बहुत अर्जियां लगेंगी, अपना नंबर शीघ्र लीजिए. हां, अर्जी पंदरह रुपए पचीस पैसे की लगेगी और एक रुपया दस पैसे की मंदिर में दरख्वास्त होगी. फिर देखिए आप का भाग्य, बाबा महाराज अर्जी मंजूर करते हैं या नहीं. अगर मंजूर कर ली तो जब तक पूरा संकट कट नहीं जाएगा तब तक प्रति दिन तीनों समय की आरती में आना होगा.

''बाबा शक्ति ले प्रकट होते हैं. ऐसा खेल खिलाते हैं कि कैसा भी जबरदस्त जिन्नप्रेत हो, सामने ठहर नहीं सकता. प्रति दिन फिर आप को बीस पैसे की शाम को और दस पैसे की सुबह को पर्ची कटानी पड़ेगी. लड्डूबताशे का भोग. चाहो तो सवामनी का भोग बोल देना.''

''अर्जी कल देंगे. आज पहले दर्शन करेंगे और मंदिर की जानकारी लेंगे,'' कह कर हम उन की ओर देखे बिना भीतर चले गए.

अविस्मरणीय दृश्य

''बोल सच्चे दरबार की ज़य,'' 'बोल बजरंग बली की जय,'' ''दे बाबा सच्चे बयान,'' ''काट बाबा प्रेत बाधा.'' भक्त लोग पुजारियों की आवाज के साथ चिल्ला रहे थे. आरती क्या आरंभ हुई कि एक अविस्मरणीय दृश्य प्रारंभ हो गया. जो स्त्रियां अभी तक ठीक तरह से खड़ी थीं, हर तरफ देख रही थीं, बातें कर रही थीं, उन में से बहुत सी एकदम चाबी लगे खिलौनों की तरह अजीबअजीब ऊलजलूल हरकतें करने लगीं. किसी को जैसे कोई होश नहीं. न कपड़ों का, न शरीर का, न नातेरिश्तों का.

औरतें कभी छातियां पीटतीं, कभी हवा में जोरजोर से हाथ घुमा कर दीवारों और फर्श पर पटकतीं. खुले बाल, फैली आंखें, विकृत चेहरे, करारी तेज आवाजें. ''नहीं जाऊंगी...तू मेरा क्या कर लेगा?'' और जमीन में बैठ कर हथेलियां नीचे टिका कर तेजी से दाएंबाएं, ऊपर-नीचे सिर घुमाना शुरू कर दिया.

पुरुष बाल नोच रहे थे, दीवारों में पीठ मार रहे थे. सिर पीट रहे थे. कुछ औरतें नाच रही थीं, चिल्ला रही थीं. बीचबीच में रुक कर इधरउधर देख भी लेतीं. दोचार के पास आ कर उन पुजारी लगने वाले सज्जनों ने कुछ कहा भी. संकेत सा किया. तभी उन महिलाओं ने नृत्य की मुद्रा भी बदली और पहले से अधिक चीखनेचिल्लाने लगीं.

एक औरत बीच में रुक कर पीछे घूम कर मुझ से बोली, ''आप थोड़ा पीछे हो जाओ, मेरे बाल आप को छुएंगे.''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बालाजी का चित्र लेना मना है, पर मंदिर के बाहर ढेरों चित्र मिल जाएंगे. (बाएं) बालाजी के मंदिर के सामने बाहर से आए हुए पाखंडी पुजारी कीर्तन इत्यादि कर के समय विताते हैं (दाएं)

और बातें करतेकरते फिर घुटनों पर हाथ टेक कर खूब तेजी से सिर घुमाघुमा कर झूमने लगी. एक औरत के पास उस का छोटा बच्चा खेलतासरकता आ गया तो वह उठी और उसे ले कर बाहर बैठे अपने अभिभावकों को सौंप कर आई और फिर हाथसिर पीटपीट कर झूमना शुरू. "बोल सच्चे दरबार की जय..."

हम लोग हैरान, यह क्या हो रहा है? होश भी है, बातें भी हैं, कपड़े और बाल नोचते, खींचते, पीटते समय इधर-उधर देखा भी जा रहा है, सावधानी भी बरती जा रही है. फिर? और यह कैसी जय बोली जा रही है? जहां अर्जियां लगती हैं, रुपए दिए जाते हैं, सुबहशाम पर्चियां कटती हैं. सवामनी, ये परातभरे भोग, चढ़ावे, प्रसाद--क्या तमाशा है?

भक्त बाबा के दरबार में शरण लेने प्रार्थी बन कर आएगा तो रुपएपैसे या चढ़ावा. सवामनी क्यों? अर्जी की बंदिश क्यों? उस की भावना ही क्या बहुत नहीं है? यह कैसा खुला हुआ व्यापार है? सब कुछ समझतेबूझते भी अच्छेभले आदमी मूर्ख बन कर इस व्यापार को मान्यता क्यों दे रहे हैं? कहां है श्रद्धाभक्ति का महत्त्व? यह तो पैसे की लूट है, भगवान के नाम पर डकैती है, सभी की मिली सांठगांठ है. पूरियां, चाय, लड्डू, बताशे, सब दोगुनेतिगुने दामों पर. रोगी को, घर वालों को जम कर लूटा जाता है.

भगवान के मंदिर, दर्शन सभी के लिए खुले हैं तो अर्जी क्यों? यह कैसी कोर्ट-कचहरी है? जहां के महंत, पुजारी ही न्यायाधीश, वकील, कारिंदे, मुंसिफ और कोषाध्यक्ष. उधर गूंगाबहरा भगवान, उस के नाम पर व्यापार, बैंकबैलेंस, कोठियां, कार, फोन, हीटर, पंखे और स्वास्थ्यवर्धक भोजनप्रसाद--अच्छी लीला है!

आरती समाप्त हो गई थी, साथ ही यंत्रचालित झूमना, कूदना और चीखना भी. वे सभी भूतप्रेतों के धराशायी मरीज हंसनेबोलने लगे थे. एकदम ही सामान्य

CC-0, Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

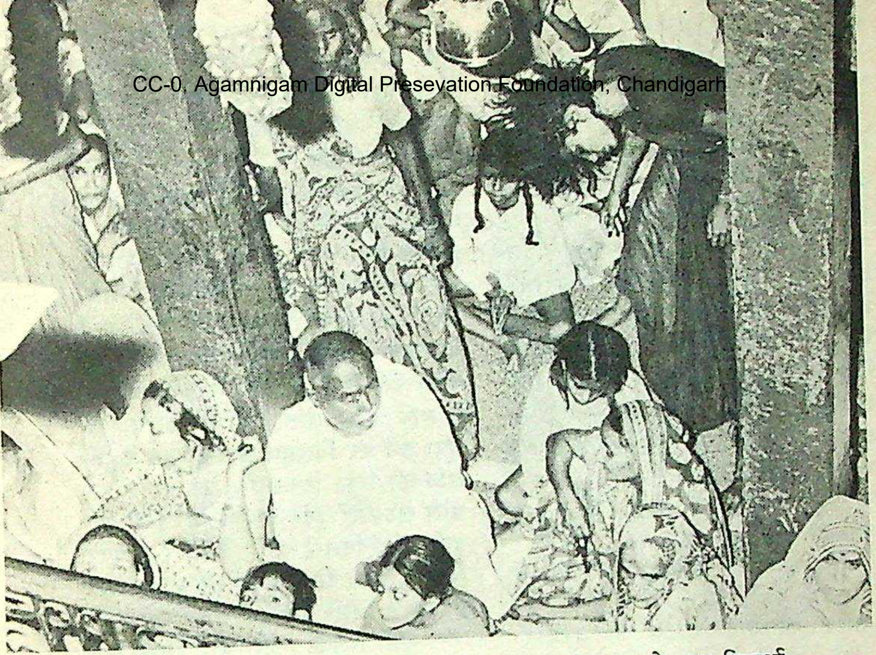

मंदिर में आरती के समय भूतप्रेत बाधा से ग्रस्त मरीज झूमते हुए दिखाई देते हैं.

मुद्रा में. मंदिर का पूर्ण अवलोकन दूसरे दिन पर रख कर हम धर्मशाला में लौट गए.

सोए हुए दोतीन घंटे भी नहीं बीते थे कि शोरगुल से आंखें खुल गईं. पता लगा कि आसपास के कमरों में जो भूत-प्रेत वाले मरीज ठहरे हुए हैं उन को स्नानध्यान के लिए तैयार किया जा रहा है. एकदम बराबर वाले कमरे से अधिक चीखफटकार की आवाज आ रही थी.

उत्सुकता न रोक पाने के कारण उस कमरे के दरवाजे पर जा कर देखा. अजीब नजारा था. बाल खोले, चूड़ियोंरहित हाथों को एक औरत जमीन पर पटक रही थी. एक बहनजी सामने पालती मारे दोनों हाथों की मुट्ठियां कसे हुए उस औरत को घूरे जा रही थीं. उन का कसा जूड़ा, चौड़ी बिंदी, स्वस्थ लाल चेहरा, गले में शाल, साफ धोती देख कर लगा कि यह कोई विशेष महिला हैं. सांप की तरह लंबेलंबे सांस ले कर फुंकार रही थीं. बीचबीच में तेज फटकारें, "मैं तुझे नहीं छोड़ूंगा. तू जिन्न है, मैं जानता हूं. आज तुझे फांसी लगेगी, जलाया जाएगा. बोल, जाता है या नहीं? करूं तुझे भस्म? हुम...हुम...हुम..."

पास खड़े किसी स्थानीय आदमी से पूछा कि यह देवी कौन है? तो पता चला, "बीमार महिला ने अर्जी दी तो बाबा महाराज इस महिला के शरीर में प्रवेश कर गए हैं. नहीं जी, स्वयं नहीं, अपने देवदूत को भेजते हैं बयान लेने के लिए. जब प्रेतराज महाराज के दरबार में पेशी होती है न. तब प्रथम पितृदेव के बयान. फिर दूत का शरीर में प्रवेश कर के मनौती बताना. तब प्रतिदिन पर्चीपेशी. शरीर कब छुटकारा पाए व्याधा से, क्या पता. हां, ठीक होने पर परातों में चावल, जैसी श्रद्धा हो, लड्डूबताशे, हो सके तो सवामनी."

चीखपुकार जारी थी. रोगिणी चिल्ला रही थी, "नहीं जाऊंगा, नहीं जाऊंगा."

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और देवीजी उसे फटकार रही थीं.

रविवार का दिन था. चारों तरफ विशेष गहमागहमी और भीड़.

हम मंदिर में पहली आरती पर पहुंचे. मंदिर अच्छी तरह देखा. बाहर दोनों ओर दालान. अंदर फिर लंबा बरामदा और आंगन, मोटी जंजीरों में लिपटे लोहे के कड़े, जिन में लटकते हुए भीमकाय घंटे. चारों ओर खंभे, बरामदे, सफेदकाले पत्थर का फर्श, सामने लोहे की जाली वाली रेलिंग. भीतर सिंदूरी पन्नाजड़ी हनुमान की मूर्ति. ऊपर सभी स्थानों पर पंखे लगे हुए थे. मंजीरे की ताल पर भजन गाए जा रहे थे. सिर झूम रहे थे. शरीर पछाड़ खा रहे थे. कहीं कोई रो रहा था तो कहीं कोई हंसे जा रही थी.

दूसरी ओर बड़ेबड़े हवनकुंड थे.

ऊपर कोतवाल साहब का दरबार नीचे फांसीघर—यहां भूतप्रेतों को भगाने के लिए पाखंड रचा जाता है.

अग्नि सुलग रही थी. आहुतियों का धुआं मंदिर में कईकई सुगंधों का मिश्रण लिए घुमड़ रहा था. दाईं ओर एक ओर एक कक्ष था. वहां भी बहुत बड़े हवनकुंड में अग्नि प्रज्ज्वलित थी. एक गहरा कुंड सा था, लंबाईचौड़ाई में बराबर क्षेत्रफल वाला. बीच में दो सिंदूरपुते थान से बने हुए थे. पता लगा कि यह फांसीघर है.

उस कक्ष से बाहर लंबाचौड़ा चबूतरा. बाईं ओर लंबीपतली गैलरी, जहां पर एक लाइन में कई उपले (गोबर के कंडे) रखे थे. मिट्टी का तेल डाल कर उन में आग लगाई जाती, बताशों का बारीक चूरा उन पर बिछाया जाता, उन से जो आग की लपटें निकलतीं, उन पर औरतें बाल लटकाए धूनी ले रही थीं. (ले क्या रही थीं, दिलाई जा रही थी.) हाथपैर आग के ऊपर सिंकाए जा रहे थे. पूरे मुंह पर, खुले बालों पर लपटें दहक रही थीं.

धुआं लिपट रहा था. 'सच्चे दरबार की जय' गूंज रही थी. एकदो पुजारी जिन्नभूतों को निकल जाने की धमकी दे रहे थे. गरम चिमटे खटखटाए जा रहे थे. औरतें चिल्ला रही थीं, ''नहीं निकलता.''

असहनीय वातावरण

मिट्टी के तेल व बताशों की चाशनी का कड़वा धुआं सब तरफ फैल रहा था. बड़ा ही असहनीय वातावरण लग रहा था. वही देवी, जिसे इष्ट प्राप्त होता था, चीख रही थी, ''और अभी वहीं मुंह रख, तुझे निकलना ही पड़ेगा. अभी तेरे फांसी लगेगी. तुझे मारमार कर निकाला जाएगा. हाथपैर आग के ऊपर. तू ने बड़ा अत्याचार किया है. छोड़ इस का पीछा, सच्चा बयान दे कि तू कौन है. कब जाएगा.'' पता लगा कि यह स्थान भंगीवाड़ा है. यहां के लिए पचास पैसे की दरख्वास्त लगानी पड़ती है, तब प्रवेश मिलता है.

ऊपर की ओर जीने से गए तो वहां भी एक मंदिर था. औरतें सिर हिलाहिला कर झूम रही थीं, रो रही थीं. एक

जवान, तंदुरुस्त लड़का दौड़ रहा था. कभी मूर्ति के आगे पहलवानों की तरह ताल ठोक कर धमकी देता, "खाऊंगा, मैं सवामनी खाऊंगा. मैं पीपल वाला जिन्न हूं. तू मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता." वहां से लौट कर भंगीवाड़े के सामने ही आ कर देखा कि एक लड़की रो रही थी. घर वाले साथ थे. सभी उसे प्रेरित कर रहे कि आग के ऊपर सिरमुंह रखे. जबरदस्ती पुजारी ने धकेला. हाथ के गरम चिमटा लगा दिया. लड़की से आग व धुआं बरदाश्त नहीं हुआ तो पुजारी ने जलते कंडे के आगे कागज लगा दिया.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अंधविश्वासी लोगों का आवागमन दिनरात लगा रहता है. पैसे लुटाने के बदले में उन के हाथ क्या लगता है?

फांसीघर में यातनाएं क्यों?

शायद किसी ने सवामनी दी थी. चावल के बड़ेबड़े थाल ऊपर जा रहे थे. चावलों के ढेर पर पांचपांच लड्डू थे. 'दे बाबा सच्चे बयान' का शोर गूंज रहा था. हम भी ऊपर चल दिए. हमें बताया गया कि यह अमर प्रेतराज का दरबार है. सिंदूर से पुती और चांदी के वर्क लगी मूर्ति. संगमरमर का मंदिर. बाहर नीचे जैसा ही लोहे का जंगला. अंदर पीतल के पात्रों में जलती हुई अग्नि, भक्तों द्वारा लाए गए प्रसाद की आहुति, तेज स्वरों में भजन, लोहे की जंजीर से बंधे कुछ पीड़ित लोग. अधिकतर जवान औरतमर्द. शहर के भी और गांव के भी. वही सिर घुमाने, हाथपैर पीटने का दौर. शेष के हाथों में हनुमानजी के भजनों की पुस्तकें. प्रमुख पुजारी के पास प्रसाद का ढेर--अजीब उदास, खिन्न करने वाले दृश्य--दुख, करुणा, क्रोध, क्षोभ की मिलीजुली भावनाएं. उपस्थित व्यक्तियों में सभी जातियों के लोग थे, फिर भी गुजराती, मराठी, बंगाली, उत्तर प्रदेश के लोग अधिक थे.

फांसीघर की ओर फिर से झांका तो ऊपर को पैर और नीचे को सिर दिए (उसी चौकोर कुंड में) एक औरत को पाया. उस शारीरिक यातना को मैं अधिक समय तक देख नहीं सकी और बाहर चली आई. मन इस सब से बेहद खिन्न हो गया था. उदासी और थकावट अलग से दिलदिमाग पर छा गई थी.

यहां तीन कथित देवों की प्रधानता देखी गई. इन में पहला नंबर है बालाजी महाराज का, दूसरा श्रीप्रेतराज दरबार का और तीसरा श्रीकोतवाल कप्तान (भैरव) का. बताया गया कि एक हजार वर्ष पूर्व ये तीनों देव यहां अचानक प्रकट हुए थे. बाद में इन के मंदिर बने और महंत प्रतिष्ठा हुई. अब तक बारह महंत यहां हो चुके हैं. इस समय दो महंत गद्दी की शोभा बढ़ा रहे हैं.

इन लोगों ने मंदिर तथा मूर्तियों से संबंधित अनेक कहानियां गढ़ रखी हैं. जरा सा प्रश्न करते ही कहेंगे, "हमारे बाबा बड़े चमत्कारी हैं. एक बार किसी सिरफिरे शासक ने बाबा की मूर्ति खोदने का दुस्साहस किया था. सैकड़ों हाथ

खोदने पर भी वह सफल नहीं हुआ. आखिर हार मान कर छोड़ गया. क्यों? इसलिए कि यह मूर्ति अलग पत्थर की नहीं है. यह तो पर्वत का एक अंग है."

एक दूसरे कंठीधारी सज्जन बोले, "कैसी विचित्र माया है कि श्रीमहाराजजी के बाईं ओर छाती के नीचे से जल की एक अति सूक्ष्म धारा निरंतर बहती रहती है. महाराजजी पर पर्याप्त चोला चढ़ जाने पर भी वह बंद नहीं होती."

"कैसा चोला?"

महावीरजी का चोला

तब हमें बताया गया, "अरे, आप ने श्रीमहाराजजी के चोले वाली बात नहीं सुनी? संवत 1979 में उन का चोला बदला गया था. उसे गंगा की पवित्र धारा में प्रवाहित करना था. इस पुण्य कार्य के लिए गांव के गांव चल दिए थे. जब चोला मुंडावर रेलवे स्टेशन पर पहुंचा तो अधिकारियों ने उस का भार जानने के लिए उसे तोला. पहले तो वह उठा ही नहीं. फिर ऐसा रूप लिया कि कभी खूब भारी हो जाता तो कभी केवल फूल जैसा हलका. सारे कर्मचारी स्तब्ध रह गए. आखिर उसे बिना तोले ही रवाना कर दिया गया."

पुजारीजी कहने लगे, "इधर और किसी का चमत्कार नहीं चलता. सेवा, धर्म, श्रद्धा और भक्ति यहां के कणकण में है. ऊपरी छाया, हवा और व्याधि कैसी भी हो, यहां इन के चरणों में आ कर सब ठीक हो जाता है. यहां कोई डाक्टर या वैद्य नहीं है. सब संकट बाबा की कृपा से दूर हो जाते हैं."

सभी अपनेअपने ज्ञान की घुंडी खोल रहे थे. भीतर से चीखनेचिल्लाने की आवाजें आ रही थीं.

मन में अनेक प्रश्न हलचल मचा रहे थे. यह गोरखधंधा समझ में नहीं आ रहा था. मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण करने पर लगा कि अधिकतर निराश, कुंठित, पीड़ित, आर्थिक रूप से परेशान और घरेलू झंझटों से पिसे हुए लोग ही वहां थे.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आरती के बाद सामान्य अवस्था में आ जाने पर उन सब से पूछा भी. उन के साथ आए लोगों से भी पूछा. बस यही बात समझ में आई कि संतान का न होना, अधिक लड़कियां, पुत्र की कामना, पति, सास, ननद, जेठ, ससुर का दुर्व्यवहार, औरत का चिड़चिड़ापन, पति का शराबी होना, आर्थिक संकट, नौकरी न मिलना, बड़ा कुटुंब, अकेलापन, पढ़ाई में जी न लगना, परिवार वालों की उपेक्षा, सैक्स, गलत कदम के परिणाम, अधिक नशा, अनिद्रा, भाईबहनों के बीच मातापिता का दुराव, अंधविश्वास और गलत वातावरण आदि ही उन की मनःस्थिति में हुए परिवर्तनों का कारण है.

भूतबाधा एक ढोंग

भूतप्रेत हैं या नहीं कुछ पता नहीं. लेकिन इस के पीछे ढोंग, पाखंड और बहानेबाजी लगी. कुंठित व्यक्तियों द्वारा इस का गलत प्रयोग कर के एक ऐसी आड़ बना ली जाती है ताकि घर वाले परेशान हों, खुशामद करें, खानेपीने को अच्छा मिले, आराम मिले, भूतप्रेत की बोली में मनमानी करा ली जाए.

निरंतर अभ्यास करतेकरते भूत बाधा दिखाना शायद असंभव भी नहीं. खैर, कितना सही है कितना गलत यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है.

भगवान की तिजारत, भक्ति का व्यापार, अज्ञानियों का शोषण तब तक होता ही रहेगा जब तक विवेक सही दिशा नहीं स्वीकारेगा. मनोवैज्ञानिक चिकित्सक और मानसिक चिकित्सालय जब सही निदान करने को मौजूद हैं तब ये विवेकशून्य इलाज क्यों होते हैं? मिरगी, दौरे, विक्षिप्तावस्था अथवा अन्य मानसिक विकृति को भूतप्रेत का रंग देना, फिर इस रंग में धार्मिक पुट दे कर लूटना और गुमराह करना मानव और मानवता के प्रति अपराध है. ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाभारत का सब से छली चरित्र

भीष्म

• अनुपम

शिशुपाल ने ठीक ही कहा था, जब भरी सभा में उस ने मुझे 'षंढ' (नपुंसक) बताया था. मेरे मातापिता ने, मंत्रियों और गुरुजनों ने इस सत्य को छिपाने की बहुत कोशिश की, पर मैं जानता था कि एक न एक दिन यह सत्य उजागर हो कर ही रहेगा. फिर वह दिन भी आएगा कि इतिहास और पुराणों में जलते हुए इस सत्य को साफ-साफ लिखा जाएगा. षंढ की एक कमजोरी होती है कि उसे स्त्रियों को सताने में बड़ा मजा आता है. उन्हें तरहतरह से तंग कर के, मारपीट कर, कामसुख से वंचित रख कर, उन्हें दूसरे पुरुषों के साथ सुला कर, मतलब उन पर तरहतरह के अत्याचार कर, वह खुश होता है.

आज मुझे सब कुछ याद आ रहा है—चारों ओर बाणों से बिंधा हुआ, कुरुक्षेत्र के इस मैदान में प्यासा पड़ा हुआ मैं आज अपने ही घावों का खून चाट कर होंठ गीले करने को मजबूर हो गया हूं. आज मरते वक्त मुझे कोई पानी देने वाला भी नहीं है. यह पीड़ा व यह दुर्दशा मेरे उन अनाचारों का फल है जो मैं ने आर्यावर्त के नारी वर्ग पर किए हैं. शायद मेरे उस पाप का परिणाम है, जिसे लोग देशद्रोह, विश्वासघात या गद्दारी कहते हैं. गद्दारी मैं ने की—कौरवों के साथ—कभी खुले, कभी छिपे रूप में, मैं ने पांडवों का साथ दिया.

मैं तो यही चाहता हूं कि बाहरबाहर धर्माचार, सत्य, न्याय का ढोंग करूं और भीतरभीतर सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करता जाऊं... वास्तव में धर्म का आविष्कार इसी लिए हुआ है कि अयोग्य लोग समस्त जन साधनों पर अपना अधिकार जमाते जाएं.

एकदम प्रकट रूप में तो मैं पांडवों के पक्ष में आ नहीं सकता था, क्योंकि यह मेरे युग की परंपरा के प्रतिकूल था. मैं कौरवों का नमक खा रहा था, बरसों से खा रहा था और कौरवों ने मुझे सब कुछ सौंप दिया था. मेरे लिए कोई कमी न रहने दी थी. पद, वैभव, मानमर्यादा, सभा में सम्मान और नेतृत्व भी. लेकिन अपनी कमजोरी मैं ही जानता हूं. पांडव पक्ष की एक नारी का संपर्क मुझे बहुत सुखकर लगता था. वह भी इसे जानती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थी और मेरी इस कमजोरी का लाभ उठा कर आए दिन वह मुझ से कई राजनीतिक हित और साधन प्राप्त करती थी.

उफ, यह भीषण गरमी! बाण चुभे जा रहे हैं और इन्हें निकालने वाला कोई नहीं. लगता है, मैं कौरव और पांडव दोनों पक्षों की घृणा का पात्र बन गया हूं. शायद दोनों पक्ष मुझ से दूर रहना चाहते हैं, क्योंकि खिलते हुए जहरीले फूल की तरह लोगों में मेरे रहस्य खुलते जा रहे हैं, खुल चुके हैं. अब मेरे लिए मरना ही बेहतर है.

मैं ने बहुत पराक्रम दिखलाया. मेरा शौर्य अनंत है. प्रभु की विचित्र लीला है. आप इतिहास, पुराण उठा कर देखिए, षंढ़ सदैव बड़ेबड़े सेनापति और योद्धा हुए हैं. संभवत: मेरी भी यही नियति रही. क्या बुरा है, कौन सा अन्याय है अगर मैं अपने विश्वासघात का फल भोग रहा हूं. आखिर अर्जुन के तीरों ने मुझे हरा ही दिया, गिरा ही दिया. मेरे लिए अर्जुन के मन में हमेशा एक नफरत रही है, क्योंकि उस बहादुर आदमी को यह पसंद नहीं कि मैं दोनों ओर का हितैषी होने का ढोंग करूं. रोटी कौरवों की खाऊं और वकालत पांडवों की करूं. अथवा पांडवों की ओर रह कर भी मैं खुले रूप में सामने न आऊं और कौरवों के सामने ढोंग रचता रहूं कि मैं तो स्वयं कौरव हूं. कुरुवृद्ध हूं, कौरव समाज का नेता हूं.

नेतापन की इस तृष्णा ने ही मुझे यह दुर्दिन दिखाया है और हराया है. इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए मैं ने क्याक्या नहीं किया. कौनकौन से जुल्म न किए. कौन सा अन्याय बाकी बचा? बचपन से ही मैं इस रहस्य को जान गया था कि अगर दुनिया में नाम पाना चाहते हो तो ढोंग रचो, ढोंगी बनो. ब्रह्मचर्य और नारी से दूर रहने की भीष्म प्रतिज्ञा कर लो. और परदे की ओट में अपना काम किए जाओ.

हमारा समाज अथवा कोई भी समाज इतना भोला या मूर्ख होता है कि वह परदे की आड़ में किए शिकार से तो नाराज नहीं होता, लेकिन आप खुलेआम में कुछ भी कीजिए, वह एकदम आप के पीछे पड़ जाएगा. और कुछ छोड़ देने या त्याग का स्वांग करने पर बहुत कुछ मिल जाता है. समाज का नेतृत्व तो एकदम सुलभ हो जाता है. जब मैं ने सत्यवती से अपने पिता का विवाह करा दिया तो सारी दुनिया में, सारे देश में मेरे त्याग का डंका बज उठा. मैं षंढ भला सत्यवती जैसी सुंदरी से विवाह कर के कहां काला मुंह कराता! सत्यवती का दूसरा नाम गंधकाली भी है, योजनगंधा भी है—यानी एक योजन तक उस की देह की खुशबू फैलती है.

वर्ग भेद

याद आया, हमारे समाज में मुक्त यौन संबंध कितने व्यापक हैं! ऋषि पाराशर ने एक दिन दासराज धीवर की इसी युवती और कुंवारी पुत्री गंधकाली (सत्यवती) से बलात्कार किया तो व्यास पैदा हुए. इन ब्राह्मणों को हर बात की छूट है. और बेचारे दूसरे वर्णों के लिए तो सांस लेने की भी इजाजत नहीं है.

जिस समाज में वर्ण या वर्ग का भेद हो, अंधविश्वास हो, रूढ़ियां और परंपराएं हों और सब से बड़ा पाप—नारी गुलाम हो, मात्र पुरुष की वासनाओं की दासी हो तो बहुत सरल हो जाता है, ऐसे समाज में फूट फैलाना, षड्यंत्र करना और अपना काम निकालना. उस समाज का पतन निश्चित है.

मैं ने बड़ी चतुराई से इस सामाजिक निर्बलता का फायदा उठाया क्योंकि कोई भी षड्यंत्र वहां सफल नहीं होता, जहां संगठन और समाज सुधार सक्रिय होता है. निकम्मा, निष्क्रिय और नपुंसक समाज ही षड्यंत्रों का शिकार होता है और एक न एक दिन नष्टभ्रष्ट हो जाता है.

आज मैं क्या देख रहा हूं? देख रहा हूं सा षड्यंत्रों का एक परिणाम! कहां गया हस्तिनापुर व इंद्रप्रस्थ का वह वैभव?

बढ़ाएं, नौजवान पुत्रों की लाशों पर लोट रही हैं और सुहागरात की खुमारी से जिन के तनमन और लोचन अभी भी बोझिल हैं, ऐसी लाखों तरुणियां विधवा हो कर अपने पतियों की देह के टुकड़े गोद में रखे बुत बनी, गुमसुम, उदास, आहत और निष्प्राण बैठी हैं. और उफ...उस पर विजय के ये बाजे बज रहे हैं. शायद पांडवों को आज एक और विजय मिली है. मेरी आत्मा को शांति मिली. दुर्योधन उद्दंड है और मैं उसे पसंद नहीं करता. युधिष्ठिर पूरी तरह मेरा आज्ञापालक है. भीम और अर्जुन ही हैं जो मुझे फूटी आंखों नहीं देखते. और कुंती...कुंती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सत्यवती ने जब चाहा कि किसी तरह चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य का विवाह हो जाए तो मैं एक दिन काशिराज की तीनों लड़कियों को पकड़ लाया. अंबिका और अंबालिका तो वश में आ गईं. पर अंबा ने मुझे शाप दिया कि कोई षंढ मेरी मृत्यु का कारण बनेगा. अब भला षंढ को षंढ ही नहीं मारेगा तो और कौन मारेगा?

लेकिन ये पहली दो लड़कियां भरी जवानी में निस्संतान रह गईं तो मैं ने उन के पति विचित्रवीर्य को राय दी कि कुरुकुल चलाने के लिए संतान जरूरी है और तुम तो निवीर्य हो. अतएव रानियों को दूर हिमालय में ले जाओ और वहीं व्यास से इन की गोद भराओ. उस ने यही किया. धृतराष्ट्र और पांडु पैदा हुए. इस रहस्य को रानियों की दासी जानती थी. मैं ने उस का मुंह बंद करा दिया. व्यास से दासी को भी गर्भिणी कराया. दासी से विदुर का जन्म हुआ.

शतरंज का मोहरा

धृतराष्ट्र अंधा होने पर भी कुछ कम न था. सुंदर स्त्रियों पर डाके डालता था. एक वैश्य की लड़की से वह उलझ गया तो युयुत्सु का जन्म हुआ. मैं ने सुना युयुत्सु बड़ा बलवान है. आगे भयंकर परिणाम सामने आएंगे, क्योंकि यह अपने मांबाप का कहा नहीं मानता. इस के मन में यह

> **स्वतंत्रता का अंत**
>
> यदि एक ही व्यक्ति या व्यक्ति समुदाय कानून बनाने, उस को लागू करने और फैसला करने के, तीनों कार्य स्वयं करने लगे तो स्वतंत्रता का स्वप्न में भी विचार नहीं किया जा सकता.
>
> —मांटेस्क्यू

बात खटकती है कि बड़ा पुत्र होने पर भी मेरा हक मारा गया है, क्योंकि मैं नाजायज संतान हूं और बरसों बाद एक दिन मैं ने युयुत्सु को अपनी राजनीतिक शतरंज का मोहरा बनाया.

उस दिन युद्ध में जब दोनों सेनाएं आमनेसामने खड़ी हो गईं, भयंकर नाद घहरा कर शंख बजने लगे. रणघोष होने लगे तो अन्याय का फल फूटा. मेरी चाल और युयुत्सु की घृणा सफल हुई——दोनों सेनाओं के देखते ही महाप्रतापी युयुत्सु अपने भाई कौरवों का साथ छोड़ कर पांडवों से मिल गया. दुर्योधन के दिल के आसमान में एक और तारा टूटा. गांधारी एक बार फिर रोई कि सौत, सौत होती है.

मेरे इस षड्यंत्र से कृष्ण ही परिचित था. वह राजनीति का धुरंधर खिलाड़ी, चालें समझता है, चालें चलता है, चालें फेंकता है और चालें झेलता है. यहां मैं एक बात कहना भूल गया. सत्यवती के कुंआरेपन में पैदा हुआ नाजायज पुत्र व्यास मेरे बड़े काम आ रहा था. काला भुसुंड, लंबी, उलझी जटाओं वाला, मैलाकुचैला, दुर्गंध वाला शरीर, लेकिन मेरे बड़े काम का. कामी नंबर एक. अंबिका और अंबालिका के बाद फिर समस्या आई कि पांडु की दोनों पत्नियों——कुंती और माद्री का क्या हो? पांडु अबल और अशक्त, स्त्रियों के एकदम अयोग्य. कौन जाने नपुंसकता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस कुल को विरासत में ही मिली है. मैं ने व्यास को बुलाया. कुंती, माद्री के संतान होना जरूरी है.

मैं ने अपने मंत्रियों की राय ली, क्योंकि राय लेने से सामने वाले व्यक्ति का अंह संतुष्ट हो जाता है. करना तो हमें अपने मन का है. कुंती यादवों की बेटी—शूरसेन की पुत्री—पृथा के रसदग्ध स्वभाव को मैं वर्षों से जानता हूं. अगर मैं स्त्री के योग्य होता तो कुंती को अपनी रानी बनाता. इतनी चतुर, बुद्धिमान और राजनीति की शतरंज की जबरदस्त खिलाड़ी औरत मैं ने अपने लंबे जीवन में दूसरी नहीं देखी. बस, मुझे उस की एक ही बात से चिढ़ रही है कि वह नारी स्वातंत्र्य की कट्टर हिमायती है—आजीवन पांडु को उस ने अपनी मुट्ठी में रखा. फिर अपने बेटे पांडवों को! मां से पूछे बिना ये तथाकथित सूरमा उठबैठ भी नहीं सकते और जब यह कुंती बूढ़ी होने लगी तो एक और नारी को इतिहास के मंच पर ले आई—द्रोपदी को. और जैसे सास ने बहू को सौंप दिया, पांडवों पर शासन करने का काम. ये दोनों जैसे चाहती हैं, पांडवों को नचाती हैं. सारे महाभारत का मूल इन की अपूर्ण आकांक्षाएं, इन के मन का जहर और अमृत है. फिर कृष्ण जो इन से मिल गया.

हम ने यानी कुंती और मैं ने सोचा, कि पांचालों की बेटी—यज्ञसेन द्रुपद की पुत्री, द्रोपदी को जैसेतैसे स्वयंवर से लाना ही होगा. कुंती को अपने यादवी सौंदर्य पर बहुत गर्व रहा है. वह बोली, "द्रोपदी तो सांवले रंग की है."

मैं ने कहा, "सांवली हुई तो क्या हुआ. वह तुम्हारे जैसी विलक्षण बुद्धि की लड़की है. मैं उसे खूब जानता हूं. देखो, कुंती, तुम्हारे भोलेभाले अथवा एकदम सीधे और डरपोक युधिष्ठिर, अलमस्त भीम और हमेशा शस्त्रों के आयात में विदेशों में व्यस्त रहने वाले अर्जुन और ये रोटी बनाने वाले दो मूर्ख नकुल और सहदेव—इन को संभालने वाली एक सफल औरत चाहिए और द्रोपदी में ये सभी गुण हैं."

कुंती मुसकराई, "द्रोपदी के समाज में अनेक पतियों की प्रथा है. मैं उसे अपने पांचों बेटों की पटरानी बनाऊंगी, जिस से पांडवों में एकता बनी रहे और एक नारी का शासन चलता रहे. हां, चाहें तो ये छोकरे एकएक पत्नी अपने पसंद की अलगअलग भी रख सकते हैं और भीष्म यों भी तुम्हारा पुरुष समाज काम सुख के लिए भूखे भेड़िए सा अन्यत्र भटकता ही है."

दूर की गोटी

द्रोपदी के आने से पूर्व पांडव लोग उठ भी नहीं सकते थे. खड़े हो कर अपने अधिकार की चुनौती देना तो दूर, कुंती और सुभद्रा के कारण यादवों की ताकत भी पांडवों के पक्ष में आई. माद्री के कारण शल्य का पक्षपात मिला और द्रोपदी के आगमन ने सभी अभावों की पूर्ति कर दी. पांचाल राज का बल भी आ मिला. भारत की उत्तरी सीमा पूरी तरह सुरक्षित हो गई और हिमालय में शस्त्र के परंपरागत व्यापारी शंकर के संस्थान से हथियार खरीदने का पांडवों का मार्ग भी निरापद हो गया. इस तथ्य के महत्त्व को कौरव नहीं समझ सके.

इस प्रकार मैं धीरेधीरे पांडवों का पक्ष मजबूत बनाता गया. किसी पक्ष को पराजित या नष्टभ्रष्ट करना हो तो पहले उस में घुलमिल कर रहो, फिर उस में फूट फैलाओ, फिर मिल कर मारो. कौरवों के साथ मैं ने यही किया. अब चाहे लोग मुझे 'नमकहराम' कहें या 'देशद्रोही,' मुझे इस की परवा नहीं, क्योंकि मुझे नाम की भूख नहीं. मेरी या किसी भी व्यक्ति की विजय तो इस सत्य में है कि उस ने आजीवन अपनी इच्छानुसार सफलताएं प्राप्त कीं. अब इस के लिए उसे चाहे जो करना पड़ा हो. आप उसे नमकहराम कहें या अपराधी, कुछ बनताबिगड़ता नहीं.

मूर्ख युधिष्ठिर जुए में सब कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हार आया. यहां तक कि इस कायर ने द्रोपदी को भी दांव पर लगा दिया. पर पर भी जब हारा तो दुर्योधन, दुःशासन और मामा शकुनि फूले न समाए. बरसों से उन की मन की मुराद पूरी हुई है— अब फंसी है पांचालराज की पुत्री कौरवों के चंगुल में. कौरव भरी सभा में उसे नंगी करने लगे तो उस ने बहुत जबान लड़ाई. मुंहफट तो वह शुरू से ही रही, पर कौन सुनता. दुर्योधन व उस के दोनोंतीनों साथी कामांध हो रहे थे और कायर युधिष्ठिर सिर झुका कर बैठा था. मैं बाहरबाहर स्वयं चुप रहा, पर कृष्ण के साथ षड्यंत्र कर द्रोपदी को बचाया.

जयद्रथ की कृष्ण और अर्जुन से बनती नहीं थी. दोनों की जयद्रथ से दुश्मनी थी. जब धृतराष्ट्र की बेटी बड़ी हुई तो मैं ने चुपचाप योजना बनाई कि किसी तरह जयद्रथ से इसे ब्याह दिया जाए. पांडवों ने इस का विरोध किया तो दुर्योधन ने पांडवों का विरोध किया और खाई बढ़ गई और जयद्रथ कौरवों का जमाई बन गया. मैं जानता था कि एक दिन इस के छक्के छूटेंगे.

इसी तरह शल्य को भी कौरवों के प्रभाव से मुक्त करना जरूरी था और यह था तो हमारी माद्री का भाई लेकिन बेवकूफ इतना कि इस गृह युद्ध में इस से [illegible] तो यह पांडवों से अकड़ गया और कौरवों के साथ हो गया. उस रात के सूने एकांत में मैं ने और कुंती ने इसे समझाया तो राजी हुआ. "मौका आने दो, तब तक मैं भीतर ही भीतर कौरवों को कमजोर बनाता रहूंगा."

दुर्योधन और शकुनि इस दृष्टि से वज्र मूर्ख हैं कि ये खुली चालें चलते हैं. शत्रु बलवान है तो उसे धोखे से मारना चाहिए. हम ने तो सर्वथा गुप्त रीति अपनाई और बराबर कौरवों को धोखे में रखा और धोखे की राजनीति में धुरंधर मुझ से भी बढ़ कर कृष्ण है ही. तो मुझे विश्वास है कि शल्य एक न एक दिन पांडवों के काम आएगा. सारे योद्धाओं में फूट है और अनेक पांडवों के पक्ष में बिक गए हैं और अनेक कई प्रकार के मोह और वासना में उलझे हैं इसलिए अब लगता है कि कौरवों का पक्ष बहुत कमजोर है जैसे इस ग्यारह अक्षौहिणी सेना को लकवा मार गया हो. वीर सिपाहियों की क्या बात, बड़ेबड़े योद्धा सेनापति भी इतने कमजोर हो गए हैं कि बिना टोली बनाए अकेले कहीं लड़ते नहीं.

सांझ होने को आई. शस्त्रों की

पहले चंपक फिर आइसक्रीम या चाकलेट

चंपक आइसक्रीम या चाकलेट से बहुत सस्ता और बहुत अधिक गुणकारी है. ज्यादा मीठा खिलाकर बच्चे का स्वास्थ्य न बिगाड़िए---- उसे चंपक पढ़ने को दीजिए और उस का दिमाग बढ़ाइए.

नन्हेमुन्नों को मीठी सीख देने वाली पत्रिका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

झंकारें अब भी सुनाई दे रही हैं. वीरों का रक्त धरती की प्यास बुझा रहा है पर मेरी प्यास बुझा सके ऐसा कोई वीर मेरे पास नहीं है. मैं ने बहुत बुरा किया. कौरवों को अंधेरे में रखा. दस दिन के अपने सेनापति काल में मैं ढीलीढाली लड़ाई चलाता रहा. उस का लाभ पांडवों को मिला है. और वे निरंतर अपनी शक्ति का संगठन करते रहे हैं.

दुर्योधन की आशंका

दुर्योधन कम दुष्ट नहीं. वह नहीं चाहता था कि मैं कौरवों का सेनापति बनूं, क्योंकि उस के मन में भरपूर आशंका थी कि मेरा झुकाव पांडवों की ओर है. पर कुलवृद्ध होने के नाते दुर्योधन ने औपचारिक रूप से मुझ से निवेदन किया. उस की मंत्रण थी कि एक बार भी यदि मैं न कह दूं तो उस के दल की पौ बारह. पर प्रस्ताव पाते ही मैं ने तत्काल हां भर दी और अपना पद संभाल लिया. पांडवों ने धन्यभाग्य माना और मुझे 'अवध्य' घोषित कर दिया. दुर्योधन का अटल पक्ष लेने वाले तीन ही व्यक्ति हैं—शकुनि, दुःशासन और कर्ण. मैं ने बहुत प्रयत्न किया. मैं किसी को तोड़ नहीं सका.

यादवों को भी मेरे चरित्र में संदेह रहा है, इसी लिए तो पिछले इतने दिनों से कृष्ण मेरे पीछे पड़ा हुआ है. उस ने मुझे मारने या मरवाने के कितने प्रयत्न किए, यहां तक कि वह खुद युद्ध के तीसरे और नौवें दिन मुझ पर आक्रमण कर बैठा. अर्जुन ने उस के पैर पकड़ कर उसे लौटा दिया. इस घटना से मेरी बहुत हानि हुई क्योंकि कौरवों के मन की आशंका और पक्की हो गई. इधर अर्जुन ने भी मेरा अपमान ही किया. एक शिखंड़ी नपुंसक के साथसाथ मुझ पर बाण चला कर मुझे इस गौरव से वंचित कर दिया कि मैं वीर के हाथ से मरा हूं और मैं ने वीरगति पाई है.

बारबार मैं दुर्योधन के मन पर यह प्रभाव डालता रहा कि पांडव अपराजेय हैं. मेरी मति सचमुच सठिया गई थी. क्या दुर्योधन नादान बच्चा था, क्या उस के पास गुप्तचर नहीं थे कि वह मेरे षड्यंत्र को न समझ पाता. युद्ध के चौथे ही दिन रात्रि में दुर्योधन ने मुझे बहुत बुराभला कहा. मैं भी अड़ गया. मैं ने कहा कि अर्जुन को कृष्ण का सहयोग है और इन दोनों के रहते पांडव सेना अजेय है. तुम युद्ध बंद कर दो. दोतीन दिन तक यही चक्र चलता रहा. सातवें दिन भी मैं ने फिर कोशिश की—दुर्योधन ने फिर मुझ से बकवास की. इधर पांडवों को हानि पहुंच रही थी और वे चिड़चिड़े हो रहे थे. जिस युधिष्ठिर के लिए मैं ने इतना किया, युद्ध के सातवें दिन वही शिखंडी को फटकार रहा था कि क्यों कर अब तक उस ने मुझे नहीं मारा?

अब तो कौरव दल में मेरा खुला विरोध होने लगा. मुझे गद्दार, विश्वासघाती, कौरवों का नमक खा कर पांडवों का दलाल बने रहने वाला कहा जाने लगा. कर्ण ने दुर्योधन और उस के साथियों से कल रात साफ कह दिया, "भीष्म को बरखास्त कर दो. उसे युद्ध भूमि से हटा दो."

इस पर दुर्योधन अपने भाइयों के साथ मेरे पास आया और उस ने मुझे बहुत खुले और निर्लज्ज शब्दों में अपमानित किया. उस ने मुझे बरखास्त करने की धमकी भी दी. तब मैं ने यह कहना बंद कर दिया कि पांडव अजेय हैं.

मुझे हुक्म देना पड़ा, "आगामी कल के युद्ध में मैं जीजान से लड़ूंगा."

दसवें दिन दुर्योधन ने मेरे पीछे जासूस लगा दिए. यहां तक कि युद्ध भूमि में, मेरे रथ में दुःशासन को मेरे साथ बिठा दिया गया. फिर भी मैं ने मौका देख कर कर्ण से कहा कि तुम पांडवों की ओर चले जाओ. पर कर्ण ने मुझे दुत्कार दिया. अब मेरी दशा ऐसी हो गई कि मरे बिना गति नहीं. त्रिशंकु जैसा मेरा हाल हो गया. आज चीन देश का राजा भगदत्त जो कौरवों की ओर से लड़ रहा है, कुशल पूछने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'आया था. मैं ने कहा, "पांडवों का खयाल रखना."

विचित्र विडंबना है मेरी. मैं अविवाहित पर मेरा सारा जीवन दूसरों के पुत्रों को संभालने में बीत गया. इस चक्कर में एक बार फंसा तो आज तक न निकल पाया. पांडवों के लिए मैं ने क्या नहीं किया? अर्जुन के इन बाणों से अधिक तेज मेरे अपने पिछले पाप शरीर में चुभ रहे हैं. विचित्रवीर्य के लिए काशिराज की तीनों कन्याओं को मैं स्वयंवर मंडप से भगा कर ले आया था.

अंबा बोली, "मैं तो मन में शाल्व को वर चुकी हूं." मैं ने उसे शाल्व के पास भेज दिया. पर निर्दयी शाल्व ने उसे अपने यहां रखने से इनकार कर दिया, "परायों के हाथों पड़ गई, हरण की हुई अंबा, अब मैं तुझे नहीं रख सकता."

निराश, रोती हुई अंबा मेरे पास आई. तीव्र तेज से तमतमाए चेहरे से कहने लगी, "भीष्म, जब तुम विवाह मंडप से जबरन मुझे ले आए तो मुझे स्वीकार भी करो."

मैं ने कहा, "देवि, मैं ने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा की है. मैं तुम से विवाह नहीं कर सकता." हाय—उसी दिन अपमानित, निराश्रित धिक्कारित दशा में अंबा जल कर मर गई और मरतेमरते मुझे शाप दे गई. "षंढ, तुम षंढ के हाथ मरोगे."

मेरे कारण माद्री ने आत्महत्या की. अंबा चिता में जल गई. गांधारी आजन्म आंख पर पट्टी बांध कर रही और कुंती—मोटी, तगड़ी और मजबूत 'पृथा' सदैव असंतुष्ट और द्रोपदी की हालत और भी नाजुक. इन नारियों के शाप मेरे अंगअंग में दावानल की तरह जल रहे हैं. मेरा शत्रु शिशुपाल राजसूय के अवसर पर ठीक ही गर्जना कर रहा था, "भीष्म तुम्हारा सारा जीवन क्षत्रिय जाति पर कलंक लगाने वाला है. तीनतीन पीढ़ी तक तुम ने एक ब्राह्मण व्यास से अपनी भाभियों का गर्भाधान कराया और उन के संतानें उत्पन्न कराईं. तुम्हें धिक्कार है, तुम हरगिज ब्रह्मचारी नहीं, पूरे षंढ हो."

गांधार से यदि यह शकुनि न आता तो सत्ता पर मेरा प्रभाव अखंड रहता और अवश्य मैं ने कौरवपांडव के बीच राज्य का बंटवारा कर दिया होता.

कुरुकुल में स्त्रियों की भयंकर दुर्दशा हुई है. उन के शरीर और मन कुचल डाले गए हैं. उन्हें पराए पुरुषों की शैया पर सोने को बाध्य किया गया है—अब

जन्मोत्सव, विवाह
व अन्य
शुभ अवसरों पर

पुस्तकें भेंट में दीजिए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संत कवियों की प्रशंसा की परंपरा चली तो आलोचकों ने तुलसी को हिंदी साहित्य का सूर्य घोषित कर दिया. प्रशंसा की चकाचौंध में किसी ने यह सोचने की चेष्टा नहीं की कि तुलसी वास्तव में हिंदू समाज के पथ-प्रदर्शक थे या पथभ्रष्टक?

तुलसी की वास्तविकता पाठकों के सामने ला कर रखना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है. इससे पाठकों को तुलसी साहित्य के बारे में एक नई दृष्टि से सोचने की प्रेरणा मिलेगी.

मूल्य रु. 8. डाक खर्च रु. 2.

पुस्तकालयों, विद्यार्थियों व अध्यापकों के लिए 50% की विशेष छूट.

मनीआर्डर द्वारा 5 रुपए भेजिए. वी. पी. पी. से भेजना संभव नहीं है.

विश्व विजय प्रकाशन
एस-12, कनाट सरकस,
नई दिल्ली-1.

यह कुल नाश के योग्य हो गया है. हाय, अपने ही कुल को पतन की पराकाष्ठा पर मैं ने ही पहुंचाया है. सब मुझे कोसते हैं कि मैं ने कौरवपांडवों की पत्नियों के उस काले ब्राह्मण से संतानें क्यों पैदा करवाईं. किसी क्षत्रिय योद्धा को मैं ने निमंत्रण क्यों नहीं दिया? इतना मूर्ख नहीं हूं मैं. राजा न होते हुए भी सारा शासन आज तक मेरे हाथ में रहा.

यदि मैं किसी क्षत्रिय योद्धा से संतानें उत्पन्न करवाता तो अवश्य योद्धा का प्रभाव राज सभा पर छा जाता और मैं कहीं का न रहता. मैं तो यही चाहता था कि बाहरबाहर धर्माचार, सत्य, न्याय और ब्रह्मचर्य का ढोंग करूं और भीतर-भीतर सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करता जाऊं. कुरूकुल की स्त्रियों पर तो मेरा एकछत्र शासन है ही, एक तो वे मेरी लाई हुई हैं, दूसरे मैं उन की छिपी हुई सहवास कथाएं जानता हूं. इसलिए वे मेरे सामने सिर नहीं उठा सकतीं. समाज पर प्रभुत्व स्थापित करना चाहो तो मेरी तरह पाखंडी बनो—घोर पाखंडी.

मुझे इस बात का दुख अवश्य है कि मैं ने नमक तो कौरवों का खाया, सेवा पांडवों की की. संतोष इसी बात का है कि धर्म का पाखंड रचने वाला हरेक ढोंगी ऐसा ही करता है. वास्तव में धर्म का आविष्कार इसी लिए हुआ है कि उन के चक्कर में पड़ कर योग्य तो निष्क्रिय हो कर बैठ जाएं और अयोग्य लोग जैसे बने वैसे समस्त धनसाधनों पर अपना अधिकार जमाते जाएं.

आज मैं मर रहा हूं. आजन्म मैं अभागा रहा. साधारण से साधारण क्षत्रिय की कामना होती है कि, 'मैं युद्धभूमि में मरूं. मैं वीरगति पाऊं.' हाय, ऐसी गति मुझे नहीं मिली. मैं मारा नहीं गया—घायल हुआ हूं. तड़पतड़प कर मर रहा हूं. अंधेरा...अंधेरा...अंधेरा...कौन अंबा, नहीं...नहीं...मेरा गला मत घोंटो, अंबा. मैं गद्दार, दुर्योधन, दुर्योधन, क्षमा करना. ●

दिल्ली प्रेस नई दिल्ली.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संत कवियों के चमत्कार

लोगों के हाथों में भानुमती के पिटारे थमा दिए गए हैं, ताकि वे भारत की भोली और भावुक जनता को जब चाहे बहका सकें . . .

● हरिहरराय झा

भारत के लोग किसी महापुरुष के आदर्शों को अपनाने के बजाए प्राय: उसे देवता बना देना अधिक पसंद करते हैं. भारत में हर महत्त्वपूर्ण पात्र और घटना का दैवीकरण हो जाता है. इसी कारण जनश्रुतियां इतिहास का मार्गदर्शन करने के बजाए उसे भूलभुलैया में डाल देती हैं.

तुलसीदास को ही लीजिए. उन के रामचरितमानस के मूल्यांकन के लिए एक मंदिर में वेद, शास्त्र, पुराण इत्यादि एक के ऊपर एक रखे गए. रामचरितमानस को सब से नीचे रख कर मंदिर के द्वार बंद कर दिए गए. जब द्वार खोला गया तो रामचरितमानस सब से ऊपर पाया गया.

कहा जाता है, तुलसीदास पहले संस्कृत में रचनाएं लिखते थे. वह दिन में लिखते और रात को रचना नष्ट हो जाती थी. भगवान शंकर ने उन्हें स्वप्न में कहा कि तुम जनता की भाषा में लिखा करो. तुलसीदास ने प्रचलित भाषा में 'मानस' लिखा.

उपर्युक्त जनश्रुति से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि उस समय पंडित लोग संस्कृत में लिखे काव्य को ही असली काव्य मानते थे. तुलसीदास ने जब 'मानस' ग्रामीण भाषा में लिखा तो पंडितों ने इस की खूब आलोचना की. इसलिए 'मानस' भक्तों ने इस पर भगवान शंकर के आदेश की मुहर लगा दी. वैसे भगवान के आदेश के बिना ही जनभाषा में लिखा किसी भी प्रकार से निंदनीय नहीं था. फिर भी परंपरा से प्रभावित हो कर 'मानस' के हर कांड का प्रारंभ संस्कृत श्लोकों से किया गया.

पता नहीं केशवदास के पास भी शंकर भगवान का आदेश आया था या नहीं, उन्हें भी बाध्य हो कर प्रचलित भाषा में लिखना पड़ा. पर वह अपना संस्कृत ज्ञान छिपा न सके, जिस से उन का काव्य इतना क्लिष्ट हो गया कि उन्हें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'कठिन काव्य का प्रेत' कहा गया. वह स्वयं भी इस बात को स्वीकार करते हैं :

'भाषा बोली न जानहि, जिन के घर के दास.

तिन भाषा कविता करी, जड़मति केशवदास.'

जिस प्रचलित भाषा को केशवदास के दास भी नहीं जानते थे अर्थात वे भी संस्कृत के ही विद्वान थे, उस भाषा में केशव को 'रामचंद्रिका' लिखनी पड़ी.

चमत्कार और भाषा

आप लोगों का विश्वास जीतने के लिए तुलसीदास जैसे भक्त शिरोमणि के जन्म से संबंध कोई न कोई विचित्र बात तो होनी ही चाहिए. जनमते समय रोए भी नहीं. बत्तीसों दांत मां के गर्भ से ले कर आए और पैदा होते ही 'राम' का ही उच्चारण करने लगे. उन के 'मानस' पर भगवान शंकर ने और 'विनय पत्रिका' पर रामचंद्रजी ने हस्ताक्षर भी कर दिए. यह पता नहीं, उन्होंने हस्ताक्षर देवभाषा में किए या भाषा में, और अपने पद की मुहर भी लगाई या नहीं. ये बातें भारत की भोली और भावुक जनता को बहकाने के लिए काफी हैं.

मीराबाई को राणा ने कितने कष्ट दिए. पर 'गिरधर नागर' की कृपा देखिए कि पीने के लिए विष भेजा गया तो अमृत हो गया. पिटारे में सांप भेजा तो शालिग्राम की मूर्ति निकली. कांटों की सेज बनाई गई तो फूलों की शैय्या बन गई.

हो सकता है मीराबाई ने भावुकता में काल्पनिक श्रीकृष्ण के दर्शन कर लिए हों पर उपर्युक्त कथाएं मीरा की भावुकता पर आधारित भी नहीं हैं. भाषाशास्त्रियों का स्पष्ट मत है कि मीरा के जिन पदों में उपर्युक्त कथाएं मिलती हैं उन की भाषा शैली मीरा की भाषा शैली से भिन्न है. स्पष्ट है कि उपर्युक्त कथाओं वाले पद मीरा के बाद किसी तथाकथित मीरा ने 'मीरा के प्रभु गिरधर नागर' लगा कर रच डाले हैं. धोखे से विष और सांप तो भेजे जा सकते हैं पर कांटों की शैय्या पर धोखे से सोने का सवाल ही नहीं उठता. फिर किसी पद में सांप शालिग्राम की मूर्ति बन जाता है और किसी पद में सांप चंदनहार बन जाता है. इस का क्या रहस्य है?

मीरा की मृत्यु कितने विचित्र ढंग से होती है! वह स्वयं कृष्ण की मूर्ति में विलीन हो जाती है अर्थात् मीरा का शव मूर्ति में घुस गया और मूर्ति जैसे जड़ पदार्थ का रुकावट पैदा करने का गुण समाप्त हो गया.

इतिहासज्ञों का स्पष्ट मत है कि इन सच्चे भक्तों की मृत्यु बड़ी ही दर्दनाक हुई है. पर भारतीय जनमानस इस तथ्य को कभी भी स्वीकार नहीं कर पाया है. इसी लिए वास्तविकता को तोड़मरोड़ कर मीरा को कृष्ण की मूर्ति में विलीन करवाने की आवश्यकता पड़ी.

काव्यात्मक सत्य

एक विद्वान महोदय लिखते हैं, "मीराबाई के ये चारों चमत्कार ऐतिहासिक और भौतिक दृष्टि से भले ही सत्य न हों, काव्य की दृष्टि से इस से अधिक सत्य और कुछ भी नहीं हो सकता और यह 'काव्यात्मक सत्य' ऐतिहासिक सत्य से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है."

'भले ही सत्य न हो' कह कर जब विद्वान महोदय स्वयं इसे ऐतिहासिक झूठ घोषित करने से हिचकिचाते हैं तो अशिक्षित जनता इसे शाश्वत सत्य क्यों न मान ले. वैज्ञानिक युग में 'काव्यात्मक सत्य' नामक किसी भी पृथक सत्य का अस्तित्व ही नहीं होता. इस आडंबरपूर्ण शब्द को अर्थहीन ध्वनिमात्र ही क्यों न समझा जाए?

अनेक अन्य संतों के बारे में भी तरहतरह के चमत्कार जनमानस में प्रच-

एक के बाद एक लुटेरे आते रहे, भारतीयों को लूटते रहे, हत्याएं करते रहे, मंदिरों देवालयों तक को धूल में मिलाते रहे और हम चमत्कार होने का इंतजार करते रह गए . . .

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लित हैं. गोस्वामी हितहरिवंश एक बार खेलखेल में कुएं में गिर पड़े. परिवार वाले बड़े चिंतित हुए. पर गोस्वामी थे आखिर भगवान के भक्त. कुछ ही देर में कुएं में दिव्य प्रकाश फैल गया. वह कुएं से अपनेआप ऊपर उठ कर बाहर निकल आए. कुआं निर्मल जल से भर गया. अपनेआप ऊपर उठ कर इन्होंने हठयोगी राव के पानी पर चलने के दावे को भी मात कर दिया.

हो सकता है उन्हें कुएं से किसी तरह निकाल लिया गया हो या केवल कुएं में गिरतेगिरते बचे हों पर इस से क्या? जितना बड़ा संत उतनी बड़ी अफवाह. आखिर भक्तों की भक्ति का मापदंड उन के चमत्कार ही तो हैं.

रसखान जैसे भक्त श्री गोवर्धन के दर्शन करने गए तो द्वारपाल ने इस मुसलमान को धक्का दे कर बाहर निकाल दिया. बाद में जब जनमानस ने इसे अपना अपराध माना तो इस अपराध से छुटकारा पाने के लिए कह दिया गया कि धक्का देते समय श्रीनाथजी के नेत्र लाल हो उठे. जब रसखान तीन दिन तक बाहर भूखेप्यासे पड़े रहे तो श्रीकृष्ण ने स्वयं दर्शन दिए.

एक बार छीतस्वामी ने गोसाईं विट्ठलनाथजी के हाथ में खोटा नारियल और खोटा रुपया दे दिया. गोसाईंजी के हाथ का स्पर्श होते ही नारियल स्वादिष्ट बन गया और रुपया भी ठीक निकला.

श्री हरिरायजी एक बार श्रीनाथजी को राजभोग समर्पण के बाद उन के लिए गद्दी बिछाना भूल गए. स्वप्न में उन्हें आदेश हुआ, "राजभोग के बाद मैं खड़ा हूं. मेरे लिए गद्दी बिछाई जाए."

प्रत्येक प्राणी अपने ही ढंग से सोचने का आदी होता है. क्योंकि इनसान का गद्दी पर सोना सुखद लगता है इसलिए वह भगवान की मूर्ति को सुलाने के लिए गद्दी बिछाता है. स्वयं कपड़े पहनता है. इसलिए वह मूर्ति को बढ़िया रेशमी कपड़े पहनाता है. सच पूछा जाए तो गधा भी यही सोचता होगा कि इतने बड़े खेत में इतनी अधिक घास उगाने वाला कितना बड़ा गधा होगा. वह भी 'बड़े गधे' के सौ पूंछ और चार सौ पैर की कल्पना करता होगा, जिस तरह हम देवीदेवताओं के कभी चार तो कभी छः और कभी हजार हाथ होने की कल्पना करते हैं.

मुल्लाओं के कंठ अवरुद्ध पर . . .

श्रीकृष्णदासजी के पास वारांगना नामक वेश्या काम से प्रेरित हो कर आई. उन्हें देखते ही वेश्या का चित्त शुद्ध हो गया. वह कृष्णदासजी के भजन को गाते हुए नाचने लगी. भजन समाप्त होते ही श्रीनाथजी के अंग से ज्योति निकली और वारांगना उसी में विलीन हो गई.

मुगलकाल में बेशुमार संत हुए. चमत्कारों की दृष्टि से एक से एक बढ़ कर. फिर भी हिंदू समाज इस काल में दुर्दशाग्रस्त रहा. तैमूरलंग द्वारा नरहत्या और मंदिर विध्वंस करने पर हिंदुओं ने अपने बाहुओं पर भरोसा करना उचित न समझा. वे दौड़ेदौड़े साधुसंतों के पास गए. श्रीरामानंदाचार्यजी ने कहा, "धैर्य धारण करो, विपत्ति के बादल टल जाएंगे." और कहा यह जाता है कि उन की तपस्या के प्रभाव से सभी मुसलमान मुल्लाओं के कंठ अवरुद्ध होने लगे. सब परेशान हो गए. जब स्वामीजी ने बारह शर्तों का पत्र भेजा तब कहीं संकट दूर हुआ.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भक्त रैदास को साधुवेश में ही भगवान पारस पत्थर दे गए पर रैदास ने उस पत्थर का बिलकुल उपयोग ही नहीं किया. बेचारे करते तो कैसे? पारस पत्थर के अस्तित्व के बारे में ही वैज्ञानिकों को शंका है. फिर इन्होंने सोचा होगा कि इस का उपयोग मानवसमाज के कल्याण के लिए करने से क्या फायदा. इस से तो वह निवृत्ति मार्ग से हट कर प्रवृति मार्ग की तरफ बढ़ते हैं और संसार के मायाजाल में फंसते हैं. वे चाहते तो इस पत्थर से कितने ही गरीबों को रोजीरोटी दिला सकते थे पर वह तो भक्त ठहरे. उन्हें गरीबों की हायतोबा से क्या मतलब. उन के लिए तो हरिनाम ही साधन और साध्य था. वह ऐसी सृष्टि में विचरण करते थे जहां का हर प्राणी हरे राम या हाय राम ही करता है.

दिव्यचक्षु बनाम 'मेंटल इमेज'

सूरदास ने दिव्यचक्षुओं से भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन किए. यदि हम भी आंख मूंद कर बिल्ली की कल्पना करते हैं तो हमारे सामने बिल्ली का चित्र बन जाता है जिसे मनोवैज्ञानिक मानसिक चित्र या मेंटल इमेज कहते हैं. हो सकता है उन्होंने मानसिक चक्षुओं से श्रीकृष्ण के दर्शन कर लिए हों और उन के भक्तों ने इसे दिव्यचक्षु की संज्ञा दे डाली हो.

ये सभी चमत्कार केवल जनश्रुतिओं पर आधारित हैं इन जनश्रुतियों के प्रचलित होने के कुछ कारण तो समझ में आते हैं. ये गाथाए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भक्ति के प्रचार के लिए फैलाई गई. किसी भी संत का महत्त्व उस के चमत्कारों से है. संतों के शिष्यों का सदा यही प्रयास रहता है कि वे अपने गुरु के अधिक से अधिक और विचित्र यानी मूर्खतापूर्ण चमत्कार गढ़ें जिस से वे अपने गुरु के प्रतिद्वंद्वी को पछाड़ सकें.

कभीकभी अन्य मार्ग के संत को छोटा सिद्ध करने के लिए भी जनश्रुतियां गढ़ी जाती थीं. बाबा बेणीमाधवदास इस के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं. उन्होंने तुलसी को सूर, मीरा, केशव और रसखान इन सब से ऊंचा सिद्ध करने के लिए हास्यास्पद घटनाएं जोड़ी हैं. रसखान को उन्होंने तीन वर्ष तक 'मानस' सुनवाई तो केशवदास से एक ही रात में 'रामचंद्रिका' समाप्त करवा कर गोसाईंजी के दर्शन के लिए भेज दिया. हरिदास को पद शुद्ध करवाने के लिए वृंदावन से अयोध्या भेज दिया. यही नहीं, अंधे और 76 वर्ष के बूढ़े कवि सूरदास को भी 'सूरसागर' दिखाने के लिए आयु में बहुत छोटे कवि तुलसी के पास भेज दिया. आखिर क्यों न भेजते? उन्हें तो 'काव्यात्मक सत्य' की सृष्टि करनी थी. इस में स्थान और काल का भेद रुकावटें थोड़े ही डाल सकता था?

यह नियति का व्यंग्य नहीं तो और क्या है कि तुलसीदास ने एक विधवा के मृत पति को पुन: जिला दिया पर उन की अपनी मृत्यु बड़ी ही कष्टपूर्ण हुई थी.

चमत्कारों का प्रेरणा स्रोत

एक बार ईश्वर ने दादू को लोदीराम के पास बक्स के पार्सल में साबरमती नदी के डाकिए द्वारा भेजा. ईश्वर को अपने नाम प्रचार की इतनी चिंता थी कि लोदीराम की पत्नी को बिना बच्चा जने ही स्तनों में दूध दे दिया.

महाकवि जायसी के बारे में यह भविष्यवाणी हुई कि उन की मृत्यु शिकारी के हाथों होगी. राजा ने शिकार ही बंद करवा दिया. पर एक शिकारी ने आत्मरक्षा के लिए एक शेर को मार डाला. पास आने पर मालूम पड़ा कि वह कोई शेर नहीं, महाकवि जायसी थे. आत्महत्या को पाप समझने वाले परम धार्मिक कवि जायसी जीवन से ऐसे घबरा उठे कि योगबल से शेर का रूप धारण कर मृत्यु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का वरण कर लिया.

नरसी मेहता को भी मंदिर के बाहर बैठा दिया गया. भगवान की मूर्ति को हार पहना कर मंदिर का द्वार बंद कर दिया गया. मंदिर के बाहर वह 'हारमाला' गाने लगे. रात भर भजन करने के पश्चात उन की वाणी से बम का गोला निकला. ताला टूट गया. द्वार खुल गए, मंदिर का हार उड़ताउड़ता उन के गले में आ गया.

'हारमाला' पढ़ने से साफ मालूम होता है कि इस के भजनों की भाषा नरसी मेहता के भजनों की भाषा से बिलकुल नहीं मिलती. यह भी समझ में नहीं आता कि नरसी मेहता के पास कौन सा प्रेस रिपोर्टर बैठा था जिस ने रात भर गाए गए भजनों को अक्षरशः नोट किया.

तुलसी, मीरा और नरसी मेहता के विषय में ऐसी जनश्रुतियां फैलना स्वाभाविक ही था क्योंकि वे अपने इष्टदेव के अटूट भक्त थे. दुःख इस बात का है कि कबीर जैसे ढोंग धतिंग से दूर रहने वाले व्यक्ति को भी इन किंवदंतियों ने नहीं छोड़ा. आजीवन हिंदू व मुसलमान में कुछ भेद नहीं समझते थे, जिन्होंने दोनों धर्मों की खोखली रूढ़ियों और सांप्रदायिकता की भावना को बुरी तरह लताड़ा, उस व्यक्ति की मृत्यु पर हिंदू और मुसलमानों में झगड़ा हुआ कि उन का दाहसंस्कार किया जाए या दफन किया जाए? फिर क्या था. उन के शव पर कपड़ा बिछाया गया. कपड़ा हटाने पर लाश गायब! केवल फूल मिले जो हिंदू-मुसलमानों ने आधेआधे बांट लिए. अपने हिस्से के फूलों का हिंदुओं ने दाहसंस्कार किया और मुसलमानों ने उन्हें दफन किया.

संत कवियों के बारे में इस प्रकार उड़ाई गई अफवाहों का बुरा प्रभाव पड़ता है. इस प्रकार की अफवाहों से एक तरफ साधुसंत अपने वर्ग का महत्त्व स्थापित करते हैं और अशिक्षित और तथाकथित शिक्षित लोगों को वैज्ञानिक ढंग से सोचने का मौका ही नहीं देते. दूसरी तरफ ये अफवाहें साहित्य में भ्रांति उत्पन्न कर देती हैं. कई जनश्रुतियों में तो कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा इकट्ठा कर के भानुमति का कुनबा जोड़ दिया जाता है.

●●●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप के परिवार के लिए श्रेष्ठ तीन पत्रिकाएं ...

आप की पत्नी
व आप के लिए

सरिता

जीवन की गुत्थियां सुलझाने वाली कहानियां, निर्भीक व निष्पक्ष लेख, समीक्षाएं, हास्य-व्यंग्य व भावभीनी कविताएं. संभ्रांत परिवारों के लिए विशेष रूप से संपादित. रु. 2

आप के युवा
बेटेबेटियों के लिए

मुक्ता

युवा वर्ग की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने वाली कहानियां, मार्गदर्शन करने वाले लेख और अन्य प्रेरक रचनाओं से भरपूर युवकयुवतियों की अपनी पत्रिका. रु. 2

आप के
नन्हेमुन्नों के लिए

चंपक

नन्हेमुन्नों को साहसी व चरित्रवान बनाने वाली पत्रिका, परियों और जादूटोनों की कहानियों से अलग नए युग की नई कहानियां, कविताएं व लेख—मोहक साजसज्जा के साथ. रु. 1

दिल्ली प्रेस की सचेतक पत्रिकाएं आधुनिक परिवार का मनोरंजन तो करती ही हैं, उसे सुख, शांति व समृद्धि की राह भी दिखाती हैं.

आप भी आज से ही अपने परिवार के लिए खरीदना शुरू कर दीजिए.

तीनों पत्रिकाओं के नमूने का सेट मंगाने के लिए निम्न कूपन के साथ एक रुपए के डाक टिकट/पोस्टल आर्डर भेजिए :

दिल्ली प्रकाशन वितरण, नई दिल्ली-55.

मुझे नमूने का सेट भेजिए.

नाम ____________

पता ____________

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उलाहने

पति पर बात बात पर चीखनेचिल्लाने के बजाए सब्र से काम ले कर देखिए

● श्यामली चट्टोपाध्याय

पारिवारिक विषयों के विशेषज्ञों का कहना है कि वैवाहिक जीवन में पति का सारा सुख पत्नी के स्वभाव और मिजाज पर निर्भर करता है. पत्नी में रूपबुद्धि के चाहे लाख गुण हों पर यदि वह स्वभाव से चिड़चिड़ी या कटु मिजाज है और पति को रातदिन उलाहने देती रहती है तो पति की जिंदगी दूभर हो कर रह जाती है.

कितने ही व्यक्ति जीवन में सफल होने का अपना सारा संघर्ष सिर्फ इसलिए छोड़ देते हैं कि उन की पत्नियां अपनी रातदिन की चखचख से उन का सारा उत्साह और आशाएं समाप्त कर देती हैं. इस से पहले कि वे कुछ कर पाएं, उन की पत्नियां यह मालूम करना चाहती हैं कि वे क्यों उतना पैसा नहीं कमा सकते, जितना उन की जानपहचान के कुछ दूसरे लोग कमा रहे हैं. वे क्यों अपना फालतू समय बेकार की किताबें पढ़ने या गली-महल्ले के फिजूल काम करने में बरबाद कर रहे हैं, जब कि उन का पहला काम बीमार सासससुर यानी पत्नी के मांबाप और बेकार सालों की सुध लेना है. कोई भी काम करने से पहले इस तरह की जानकारी हासिल करने के लिए पत्नियां कमर कस कर सामने आ खड़ी होती हैं.

इस में कुछ भी संदेह नहीं कि ये उलाहने परिवारों की सुखशांति को नष्ट करने का सब से बड़ा कारण बनते हैं. ऋण, अभाव या फिजूलखर्ची अथवा घर का कुप्रबंध या शरारती बच्चे, यहां तक कि कोई छोटीमोटी बेवफाई आदि भी उतना क्लेश पैदा नहीं कर सकते, जितना कि पत्नी की चौबीसों घंटे चलने वाली जबान पैदा कर सकती है.

कुछ समय पूर्व अमरीका के एक प्रमुख मनोवैज्ञानिक ने डेढ़ हजार से ज्यादा दंपतियों का सर्वे किया था और उन से पारिवारिक क्लेश के कारणों की सूची बनाने के लिए कहा था. जो नतीजे सामने आए, उन में पतियों ने मानो एक स्वर से उलाहने देने को पत्नियों का सब

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से बड़ा दोष बताया. प्रायः सभी ने क्लेश के कारणों में पत्नियों की इस आदत को सूची में सब से ऊपर रखा.

अमरीका में किए गए कई अन्य सर्वेक्षणों से भी यही नतीजा निकाला गया कि और किसी बात से पारिवारिक सुख को उतनी हानि नहीं होती जितनी पत्नियों द्वारा पतियों को उलाहने देने से. इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि पत्नियों ने अपनी सूची में क्लेश के जिस कारण को सब से ऊपर रखा था, वह था पति का किसी दूसरी औरत से संबंध.

उलाहनों से ग्रस्त ये महापुरुष

कोई दूसरी औरत कितने पतियों के जीवन में आती है, इस के अनुसंधान का कोई निश्चित तरीका नहीं. पुरुष के मामले में ऐसी कोई शर्त लगाना प्रायः असंभव ही है. लेकिन इस सचाई में जरा भी संदेह नहीं है कि हजारों वर्ष से, जब से नर व नारी ने गुफा में एक साथ रहना शुरू किया, स्त्री के पास पुरुष को प्रभावित करने का एक बड़ा उपाय रहा है. यह उपाय है उलाहना देना.

कहा जाता है कि यूनान का प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात एथेंस में वृक्षों के नीचे सिर्फ इसलिए आ बैठा था कि वह अपनी पत्नी की जबान को और सहन न कर सका था.

रोम के सम्राट आगस्टस सीजर ने अपनी दूसरी पत्नी स्क्रिबोमिया को सिर्फ इसलिए तलाक दे दिया कि वह जैसा कि उस ने खुद लिखा है, "पत्नी की कैंची की तरह चलती जबान से तंग आ गया था."

फ्रांस के बादशाह नेपोलियन तृतीय और अमरीका के प्रसिद्ध राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन को भी इसी वर्ग की पत्नियों के साथ जीवन बिताना पड़ा था.

रूसी लेखक व दार्शनिक टालसटाय के बारे में यह मशहूर है कि जब वह घर से भाग कर एक दूरस्थ रेलवे स्टेशन पर मरने लगा तो उस ने लोगों के पूछने पर अपनी अंतिम इच्छा यह बताई थी कि उस का दम निकलने से पहले उस की पत्नी को खबर न की जाए. स्वयं हमारे यहां, उर्दू के महान शायर हजरत मिर्जा गालिब जीवन भर अपनी बेगम के उलाहने सुनसुन कर दुख और निराशा के महान शेर कहते रहे. जबान चलाने वाली पत्नियों से उत्पीड़ित पतियों की यह सूची सचमुच बहुत लंबी है.

पत्नियां आज भी इसी चखचख से अपना काम निकालना चाहती हैं, लेकिन आज तक ऐसा कोई उदाहरण सामने नहीं आया जिस से पता चलता हो कि चखचख से पत्नियों का काम निकल जाता है. दरअसल इस तरीके से कभी भी पत्नियों का काम नहीं बना, उलटे उन का नुकसान ही हुआ.

पत्नी के उलाहनों का सब से भयंकर और घातक रूप देखने को मिलता है, जब वह पति की तुलना अन्य व्यक्तियों के साथ कर के उसे छोटा सिद्ध करने की कोशिश करती है. जसे, 'तुम्हें तरक्की भला क्यों मिलेगी, तुम कोई माथुर साहब तो हो नहीं, जो साल में दोदो तरक्कियां लेते हैं,' या 'तुम जैसे निखट्टू किताबी कीड़े की बजाए मेरी शादी किसी बढ़ई से हो जाती तो दिन आराम से कट जाते'. लेकिन दरअसल इस प्रकार की सब बातें ऐसी होती हैं, जैसे रिसते घाव में छुरी.

उलाहनों का आरकेस्ट्रा

शिकवाशिकायत करना, सिर पीटना, तुलना करना, हेटा बताना, व्यंग्य करना, एक ही बात की रट लगाए रखना ये और ऐसे ही अनेक रूप इस बुरी आदत के हो सकते हैं, और कितनी ही पत्नियां इन में से किसी एक या अधिक में विशेष पारंगत होती हैं.

लेकिन सब का मूल तत्व एक ही है

उलाहने देना मात्र स्वभाव नहीं शारीरिक या मानसिक बीमारी भी है, कहीं आप भी इस बीमारी का शिकार तो नहीं...

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और वह है एक असहनीय अत्याचार, जो मजबूर पतियों के साथ किया जाता है. यह अत्याचार एक नशे की तरह है और जो पत्नी एक बार इस की अभ्यस्त हो जाती है, वह न इस से संतुष्ट ही होती है और न इसे छोड़ ही पाती है.

देखा जाए तो ऐसे दंपति विरले ही होंगे जिन के अपने पूरे वैवाहिक जीवन में कुछ जोरदार किस्म के झगड़े न हुए हों. स्वस्थ व्यक्तियों के बीच, खासकर जब उन्हें आधे से अधिक समय एक ही छत के नीचे बिताना हो, कभीकभार जोर के झगड़े हो जाना, ज्वालामुखी फट पड़ना बिलकुल स्वाभाविक है. लेकिन ऐसे झगड़ों से उन स्वस्थ व्यक्तियों का आपसी बंधन सूत्र टूटता नहीं, अक्सर वह भड़ास निकल जाने के बाद पहले से कुछ अधिक ही मजबूत हो जाता है.

लेकिन पत्नी के उलाहने, लगातार और कभी न खत्म होने वाले उलाहने मजबूत से मजबूत वैवाहिक बंधन को भी छिन्नभिन्न कर देते हैं. ये उलाहने एक धीरेधीरे असर करने वाले जहर की तरह हैं, जो आदमी को आहिस्ताआहिस्ता मारता है, बड़े निश्चित और अचूक ढंग से मारता है, इस से पति की मानसिक मृत्यु तो होती ही है, कभीकभी शारीरिक मौत भी निकट आ जाती है.

आखिर पत्नियों को यह घातक आदत पड़ कैसे जाती है? विशेषज्ञों का मत है कि इस के कई कारण हैं. लेकिन आम तौर से इस की शुरुआत किसी शारीरिक या मानसिक दोष से होती है और यह अपनी चरम सीमा पर पहुंच कर स्वास्थ्य संबंधी समस्या बन जाती है.

यह भी बहुत जरूरी है कि लगातार उलाहने देने वाली पत्नी का किसी मनोचिकित्सक द्वारा बाकायदा निरीक्षण कराया जाए, और यदि वह इस आदत का मूल कारण किसी शारीरिक दोष को बताए तो फिर साधारण चिकित्सक से उस का इलाज कराया जाना चाहिए. हां, मनोचिकित्सक से निरीक्षण कराने के बारे में पत्नी को पता न चले तो बेहतर है अन्यथा जरा सी असावधानी से भी एक नई समस्या खड़ी हो जाएगी जो अनेक उलाहनों का रूप ले लेगी.

अन्य कारणों में एक विशेष है, स्थायी थकावट, जो लगातार घर का काम करते रहने से पैदा हो सकती है. यह भी इस आदत को जन्म देने का आधार बन जाती है. हद से ज्यादा थकी हुई पत्नियां प्रायः ही उलाहने दे कर अपने शारीरिक और मानसिक तनाव को कम करने की कोशिश करती हैं. इस का इलाज घर के कामों की कुछ इस तरह व्यवस्था करना है जिस से पत्नी को पूरा आराम करने और मन बहलाने का समय मिल सके.

मानसिक बीमारी

एक और बड़ा कारण है कोई छिपी हुई शत्रुता. पत्नी को पता नहीं होता लेकिन किन्हीं कारणों से पति के प्रति उस के मन में द्वेष या विरोध का भाव भरा होता है. इन कारणों के पीछे ऐसी बातें होती हैं, जैसे ससुराल या मायके से संबंधित समस्याएं, यौन संबंध में अतृप्ति, पति से काफी प्रेम न मिलना, खुद की जिंदगी से ही भारी असंतोष. ये सभी भावनाएं मन में दबी होती हैं और लगातार उलाहनों के रूप में प्रकट होती रहती हैं. इन दबी भावनाओं को उलाहनों के जरिए

प्रकट कर के पत्नी संतोष तो महसूस कर लेती है, लेकिन यह संतोष अस्थायी होता है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उलाहनों के फलस्वरूप मन में दबी ये भावनाएं अपनी जड़ें गहरी करती जाती हैं और इस तरह आखिरकार एक लाइलाज आदत पड़ जाती है. ऐसी हालत में किसी मनोवैज्ञानिक द्वारा मनोविश्लेषण ही इस का एकमात्र उपाय है, ताकि शत्रुता का असली कारण खुल कर सामने आ जाए और तब उसे दूर करने के लिए कुछ किया जा सके. यदि वह पूरी तरह दूर न हो तो भी उस की साफ जानकारी हो जाने भर से काफी फायदा हो सकता है. लेकिन आम तौर से कोई भी इलाज उस वक्त तक कारगर नहीं हो सकता जब तक कि खुद पत्नी को अपनी इस बुरी आदत का पूरी तरह से एहसास न हो और वह पूरी ईमानदारी के साथ उस का इलाज कराने के लिए उत्सुक न हो जाए.

यदि आप शिकार हों...

किसी भी बीमारी का सफलतापूर्वक इलाज कराने के लिए जरूरी है कि आप को उस बीमारी के मौजूद होने का पता हो. लगातार उलाहने देना भी एक भावनात्मक बीमारी है. अतः पत्नी को सब से पहले विश्वास हो जाना चाहिए कि उसे यह बीमारी लगी हुई है, तभी उस का कुछ इलाज हो सकता है.

यदि आप को इस बारे में कुछ संदेह हो तो अपने पति से पूछिए और यदि वह कहे कि 'हां, तुम्हें यह बीमारी है' तो फौरन ही भड़क कर उलाहनों का सिलसिला फिर से शुरू मत कर दीजिए. कारण यह कि इस से तो यही सिद्ध होगा कि पति ने बिलकुल ठीक कहा है.

भड़कने की बजाए आप इस मौके पर शांत रहने की भरसक कोशिश कर, और इस जानकारी के आधार पर कि पति की नजर में आप सचमुच इस बीमारी की शिकार हैं, आप खुद अपने इलाज के लिए इन छः सुझावों पर अमल करें :

1. इस मामले में पति और परिवार के अन्य सदस्यों का सहयोग प्राप्त कीजिए. उन से आप पहले से ही कह दीजिए कि किसी बात पर भड़कने, उलाहना देने या कटु व कठोर शब्दों का प्रयोग करने पर वे आप पर जुरमाना कर दें. यह दंड पहले से ही निर्धारित कर लिया जाना चाहिए और यह इतना कठोर नहीं होना चाहिए कि स्थिति को और बिगाड़ दे. उदाहरण के लिए किसी बात पर आप नाराज हों तो आप पर दस पैसा जुरमाना कर दिया जाए.

2. यदि आप यह देखें कि एक बार कहने से पति ने कोई जरूरी काम नहीं किया तो आप समझ लें कि यह काम नहीं होने वाला है. तब या तो उस काम को आप खुद कर लें या फिर उस के न होने से अपना या पति का नुकसान होने दें. कुछ ही दिनों में पति महोदय बिलकुल ठीक हो जाएंगे.

3. नरमी के तरीकों से बेहतर नतीजे हासिल कीजिए. कहा जाता है कि 'जहां गुड़ से काम चले वहां जहर क्यों दें.' आप भी इस सिद्धांत को अपनाएं. जो काम कराना हो, उस की सूचना के साथ कुछ प्रलोभन या प्रशंसा के शब्द भी जोड़ दें. बच्चों को जरा घुमा लाओ तो खाना ज्यादा अच्छा बन जाएगा.' या 'मिसेस माथुर कह रही थीं कि काश, उन के पति भी अपनी पैंट को इतनी ही बढ़िया इस्तरी कर सकते, जैसी तुम कर लेते हो,' आदि वाक्यों से जो चमत्कार हो सकता है, वह जिंदगी भर के उलाहनों से भी नहीं हो सकता.

4. हंसीमजाक की बातें सुन कर और हास्य पुस्तकें पढ़ कर अपने स्वभाव में कुछ विनोदभाव पैदा कीजिए. दुखांत घटनाओं पर कोई नहीं हंसता, लेकिन हर घटना को अकारण ही दुखांत बना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देना मानसिक व भावनात्मक दिवालिए-पन का परिचय देना है. कुछ पत्नियां अपने पतियों से सिर्फ इतना काम कराने के लिए कि वे स्नान के बाद बाथरूम से भीगा तौलिया साथ उठा लाया करें या साबुन को तिनके पर अटका आया करें, जितनी भावात्मक शक्ति का अपव्यय करती हैं, उतनी कोई भलीचंगी माता अपने बच्चे के मरने पर भी नहीं करती. आखिर इन छोटीछोटी बातों पर चीखने-चिल्लाने की जरूरत ही क्या है? खास तौर से जब इस से हालत में कोई सुधार नहीं होता, ऐसी बातों को हंस कर टाल देने से ही उन के सुधार की कुछ आशा की जा सकती है.

आत्मनिरीक्षण

5. बड़ीबड़ी शिकायतों पर शांत भाव से बातचीत कीजिए. जिन बातों से आप चिढ़ती हैं, जिन के कारण आप उलाहने देने पर उतर आती हैं, उन्हें जैसेजैसे वे आप के सामने आती जाएं, एक कागज पर लिख लें, और तत्काल कुछ न कुछ कहें. बाद में जब आप पति के साथ एकांत में हों तो उस कागज को निकाल कर पढ़ें. आप ने उस में ऐसीऐसी फिजूल बातें लिख रखी होंगी जिन का उस शांत वातावरण में जिक्र तक करना आप के लिए शर्म का विषय होगा. लेकिन हां, जो बड़ी शिकायतें आप उस सूची में पाएं, उन पर जरूर अपने पति के साथ गंभीरता से बातचीत करें. उन्हें दूर करने में आप उन का सहयोग प्राप्त करने की पूरी कोशिश करें. लेकिन याद रखें, यदि इस में पहले ही दिन सफलता न मिले तो मामला टाल दें. किसी और दिन उपयुक्त मौका देख कर बात करें.

6. उलाहने दिए बिना काम निकाल लेने की अपनी नई सफलताओं पर गर्व अनुभव कीजिए. जैसेजैसे आप इन तरीकों में सफल होती जाएं और आप को अपने वर्षों के रुके हुए काम तथा इच्छाएं पूरी होती दिखाई दें, आप अपनी इस नई योग्यता को और बढ़ाने का संकल्प करें. इस से यह योग्यता धीरेधीरे आप के स्वभाव का अंग बन जाएगी. और तब आप उन तरीकों पर बिना कुछ सोचे अपनेआप ही अमल करने लगेंगी. बस, उसी दिन से आप यह समझ लें कि आप स्वस्थ हो गई हैं और उलाहने देने की आप की पुरानी बीमारी हमेशा के लिए समाप्त हो गई है. ●●●

सरिता व मुक्ता में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण लेखों के रिप्रिंट

सेट नं. 3

प्रेमपत्र न लिखिए, डायरी न लिखिए, इसलाम और स्त्री, योगी अरविंद, गीता में अंतर्विरोध, गायत्री मंत्र, आलोचना व आपत्तियों का उत्तर, फलसब्जी संरक्षण, सर्दियों के लिए बुनाई, आप का रसोई उद्यान, फूल मोतिया के, मटर की उन्नत किस्में, आखिरत की अटकलें, बीज उपचार, घाटे वाले बालाजी, भीष्म, सरिता और हिंदू समाज, हिंदी साहित्य की बपौती, मुसलिम विवाह, महाभारत की ऐतिहासिकता, आलोचना व आपत्तियों का उत्तर, संसद सदस्य चादरवाला केस, भगवान श्री रजनीचर, क्या आप की लड़की प्रेम करती है?. सेट नं. 3 का मूल्य 3 रुपए

अध्यापकों, ग्रामसेवकों व ग्राम पंचायतों के लिए आधा मूल्य.

वी. पी. भजना संभव नहीं, अतः पूरा मूल्य अग्रिम मनीआर्डर से भेजें. अगर रजिस्ट्री से मंगवाना चाहें तब रुपए 3.50 अतिरिक्त जोड़ कर भेजें व साधारण डाक से रु. 0.40 प्रत्येक सेट के लिए अतिरिक्त भेजें.

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली. विवि.79.5.78

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप के परिवार के लिए श्रेष्ठ तीन पत्रिकाएं ...

आप की पत्नी
व आप के लिए

सरिता

जीवन की गुत्थियां सुलझाने वाली कहानियां, निर्भीक व निष्पक्ष लेख, समीक्षाएं, हास्य-व्यंग्य व भावभीनी कविताएं. संभ्रांत परिवारों के लिए विशेष रूप से संपादित.

आप के युवा
बेटेबेटियों के लिए

मुक्ता

युवा वर्ग की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने वाली कहानियां, मार्गदर्शन करने वाले लेख और अन्य प्रेरक रचनाओं से भरपूर युवकयुवतियों की अपनी पत्रिका.

आप के
नन्हेमुन्नों के लिए

चंपक

नन्हेमुन्नों को साहसी व चरित्रवान बनाने वाली पत्रिका, परियों और जादूटोनों की कहानियों से अलग नए युग की नई कहानियां, कविताएं व लेख—मोहक साजसज्जा के साथ.

दिल्ली प्रेस की सचेतक पत्रिकाएं आधुनिक परिवार का मनोरंजन तो करती ही हैं, उसे सुख, शांति व समृद्धि की राह भी दिखाती हैं.

आप भी आज से ही अपने परिवार के लिए खरीदना शुरू कर दीजिए.

तीनों पत्रिकाओं के नमूने का सेट मंगाने के लिए निम्न कूपन के साथ एक रुपए के डाक टिकट/पोस्टल आर्डर भेजिए :

दिल्ली प्रकाशन वितरण, नई दिल्ली-55.

मुझे नमूने का सेट भेजिए.

नाम ________

पता ________

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वैदिक युग में मांस भक्षण

डा. रामसरूप 'रसिकेश'

वैदिक युग के लोग आज के मांसाहारियों से बढ़ कर ही थे.

वैदिक युग के संबंध में जो गलत बातें हमारे धर्म मंदिरों में बताई जाती हैं, उन में से एक यह है कि वैदिक युग के लोग विशुद्ध शाकाहारी थे. किंतु हमें तो वेदों के स्वाध्याय से ऐसा लगता है कि वे दालभात, सागसब्जी, मांसमछली सभी कुछ खाते थे.

जो लोग वैदिक युग को विशुद्ध शाकाहारी युग मानते हैं, वे अपने पक्ष की पुष्टि में निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत किया करते हैं :

(क) यः पौरुषेण क्रविषा सभंक्ते यो
अश्व्येन पशुना यातुधानः,
यो अध्न्याया भरति क्षीरमग्ने
तेषां शीर्षाणि हरसापि वृश्च.
(ऋग्वेद 10/87/16)

अर्थात हे अग्नि देवता, जो राक्षस मनुष्यों का या घोड़ों अथवा पशुओं का कच्चा मांस खाता है, जो गौ का दूध चुरा ले जाता है, उन के सिरों को तू अपने तेज से काट (जला) डाल.

तात्पर्य यह कि वैदिक युग में ऐसे राक्षस विद्यमान थे जो मनुष्य व घोड़ों आदि पशुओं को खा जाते थे तथा उन की गायों का दूध भी चुरा लेते थे. तभी तो वायु ऋषि ने 'रक्षोहन्' (राक्षस नाशक) अग्नि देवता से उन के नाश के लिए प्रार्थना की.

किंतु ध्यान देना चाहिए कि इस मंत्र से यह सिद्ध नहीं होता कि आर्य लोग स्वयं अपने पशुओं का मांस नहीं खाते थे और अपनी गायों का दूध नहीं पीते थे.

(ख) य आमं मांसमदन्ति
पौरुषेयं च ये क्रविः,
गर्भान् खादन्ति केशवा-
स्तानितो नाशयामसि.
(अथर्व. 8/6/23)

अर्थात जो पशुओं का और मनुष्यों का भी कच्चा मांस खाते हैं, जो लंबे केशों वाले राक्षस गर्भस्थ शिशुओं को भी खा जाते हैं, उन्हें हम यहां से भगा देते हैं.

वस्तुतः इस सूक्त का संबंध स्त्रियों के प्रसवकाल से है. उन दिनों सामान्य विश्वास यह था कि ऐसे समय में स्त्रियों को कोई भूतप्रेत या राक्षस चिपट जाते हैं, जो गर्भस्थ शिशुओं को भी खा जाते हैं. उन्हीं को भगाने के लिए इन मंत्रों वाले सूक्त की रचना मातृनामा ऋषि ने की थी. इसलिए स्पष्ट ही ऐसे मंत्रों द्वारा वैदिक युग में मांस भक्षण का निषेध सिद्ध करना अनुचित है.

मांसाहार के प्रमाण

अब हम कुछ ऐसे वेदमंत्र प्रस्तुत करते हैं जिन में वैदिक आर्यों में मांस का पकाना व खाना स्पष्टतः वर्णित है.

(क) अवर्त्या शुन आन्त्राणि पेचे
न देवेषु विविदे मर्डितारम्,
अपश्यं जायाममहीयमानामधा

मे श्येनो मध्वा जभार.
(ऋग्वेद 4/18/13)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस मंत्र में ऋषि वामदेव अपना अनुभव बता रहे हैं: "चूंकि मैं ने अन्य देवों में से किसी को भी सुखदायक न पाया, इसलिए मैं ने लाचार हो कर कुत्ते की आंतें पकाईं. मैं ने अपनी पत्नी को अपमानित होते भी देखा. तब इंद्र बाज पक्षी के समान उड़ कर मेरे लिए मधुर (सोमरस) ले आया."

वैदिक काल की इस सुप्रसिद्ध घटना का उल्लेख मनुस्मृति में भी किया गया है:
श्वमांसमिच्छन्नार्तोऽत्तुं धर्माधर्मविचक्षणः,
प्राणानां परिरक्षार्थं वामदेवो न लिप्तवान्.
(मनुस्मृति 10/106)

प्राणत्राण के लिए मांस खाने की इच्छा

अर्थात धर्म और अधर्म का ज्ञाता वामदेव ऋषि भूख से दुखी हो कर प्राणत्राण के लिए कुत्ते का मांस खाने की इच्छा करता हुआ किसी पाप से लिप्त न हुआ.

यहां कहा जा सकता है कि आपत्काल में किसी ऋषि ने भूख मिटाने के लिए कुत्ते की आंतें पका लीं तो कोई बड़ी बात नहीं, क्योंकि प्राणरक्षा के लिए तो कुछ भी किया जा सकता है. इसलिए अधिक पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत है.

ऋग्वेद (10/27/1) में इंद्र देवता कहते हैं कि जो मुझे हवि नहीं देता, मैं उसे निष्प्राण कर देता हूं.

इस पर वसु ऋषि का कथन है:
यदीदहं युधये संनयान्यदेवयून्
तन्वा शूशुजानान्,
अमा ते तुम्रं वृषभं पचानि
तीव्रं सुतं पंचदशं निषिचम्.
(ऋग्वेद 10/27/2)

अर्थात जब मैं देवता विरोधी शत्रुओं पर अपने साथियों सहित आक्रमण करूंगा तब मैं तुम्हारे लिए पुष्ट बैल पकाऊंगा और सोमरस निचोड़ूंगा."

इसी प्रकार ऋग्वेद में अन्यत्र भी (10/28/3) इंद्र के सोमपान व बैलों के पकाए हुए मांस के भक्षण का उल्लेख मिलता है.

यहां यह आक्षेप संभव है कि वैदिक युग के लोग देवताओं के लिए तो पशुमांस पकाते हों, किंतु स्वयं न खाते हों, जैसे कि वर्तमान में भी विवाह आदि के अवसर पर धूम्रपान न करने वाले लोग भी आमंत्रित जनों के आतिथ्य के लिए सिगरेट पेश करने में संकोच नहीं करते. किंतु स्मरण रखना चाहिए कि देवताओं का तो प्रायः नाम ही होता है, भेंटों का अधिकतर भाग तो भक्तों और पुजारियों के पेट में ही पहुंचता है.

अतिथि से पूर्व भोजन करना अनिष्टकारी

एक और स्पष्टतर वैदिक प्रमाण लीजिए. अथर्ववेद के नवें कांड के छठे सूक्त में ब्रह्मा ऋषि कहते हैं कि अतिथि से पूर्व गृहस्थ का भोजन करना भारी अनिष्टकारी है. इसी सूक्त का 39वां मंत्र है:
एतद् वा उ स्वादीयो
यादधिगवं क्षीरं वा मांसं वा,
तदेव नाश्नीयात्. (अथर्व. 9/6/39)

अर्थात यह जो गौ का दूध व मांस है. यह अधिक स्वादु होता है. उसे (अतिथि से पूर्व) न खाए.

अतिथि से पूर्व की बात 37वें मंत्र से चली आती है:
तस्मात् पूर्वो नाश्नीयात्.

अर्थात उस (अतिथि) से पहले न खाए.

यदि लोग मांस न खाते थे तो उन्हें उस के रसीले होने का ज्ञान कैसे हो गया? इस के अतिरिक्त गौ का दूध न पीने की प्रेरणा में भी तो कोई औचित्य नहीं, क्योंकि उसे तो सभी पीते थे. इसलिए 'अतिथि से पूर्व' ही गोदुग्ध व गोमांस की मनाही की गई है.

इस के बाद के तीन मंत्रों (अथर्व. 9/6/40-42) में कहा गया है कि जो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मनुष्य अतिथि के लिए मंत्रपाठपूर्वक जल से सींच कर दूध, घी व मधु लाता है, उसे तो विभिन्न यज्ञ करने का फल मिलता है, किंतु जो मांस का उपसेचन कर अतिथि को पेश करता है उसे 'द्वादशाह' (बारह दिनों में समाप्त होने वाले) यज्ञ का फल प्राप्त होता है.

एक वेदमंत्र और लीजिए जिसे कांकायन ऋषि ने गौ की स्तुति में कहा है :

यथा मांस यथा सुरा यथाक्षा अधिदेवने.
यथा पुंसो वृषण्यत स्त्रियां निहन्यते मनः.
एवा ते अघ्न्ये मनोऽधि वत्से निहन्यताम्.
(अथर्व. 6/70/1)

अर्थात जैसे मांसभक्षक को मांस, शराबी को शराब, जुआरी को फलक पर पड़े पासे और कामपीड़ित पुरुष को नारी प्यारी होती है, वैसे ही, हे गौ, तुझे यह बछड़ा प्यारा हो. यह हर्ष का विषय है कि क्रमशः मांसभक्षण कम होता गया, तो भी कुछ अवसर ऐसे थे जिन पर मांसभक्षण धड़ल्ले से होता था.

मांस सर्वोतम अन्न

इस का कारण महर्षि याज्ञवल्क्य यों बताते हैं :

एतदु ह वै परमन्नाद्यं यन्मांसम्.
(शतपथ ब्राह्मण 11/7/1/3)

अर्थात यह जो मांस है, यह सर्वोत्तम अन्न (खाद्य पदार्थ) है.

मनुजी के शब्दों में वे विशेष अवसर निम्नलिखित थे :

मधुपर्के च यज्ञे च पितृ दैवत कर्मणि.
अत्रैव पशवो हिंस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः.
(मनुस्मृति 5/41)

अर्थात मनु का कथन है कि पशुओं को मधुपर्क, यज्ञ, पितरों व देवताओं के कर्म में ही मारा जाना चाहिए, और अवसरों पर नहीं.

वर्तमान में तो विवाह के अवसर पर ही वर का सत्कार मधुपर्क से किया जाता है और वह प्रायः मधु में घी व दही मिला कर बनाया जाता है. पर प्राचीन काल में मधुपर्क मांस के मिश्रण से भी बनाया जाता था और उस से ऋत्विक, राजा, आचार्य, वर, श्वशुर, मामा आदि का भी सत्कार किया जाता था. ऐतरेय ब्राह्मण (3/4) में भी राजा व अन्य पूज्य व्यक्ति के आने पर उन का विशिष्ट पशुओं के मांस से आतिथ्य वर्णित है.

यज्ञों में पशुबलि व मांसभक्षण का विस्तृत वर्णन हम 'सरिता' फरवरी (द्वितीय), 1977 में 'वैदिक यज्ञों में पशुबलि' शीर्षक लेख में कर ही चुके हैं, अतः उसे दोहराने की आवश्यकता नहीं. देवों व पितरों को मांसभोजन देने के उल्लेख वेदों व अन्य धर्मग्रंथों में सहज ही द्रष्टव्य हैं. उदाहरणार्थ :

अपूपवान् मांसवांश्चरुरेह सीदतु. लोककृतः
पथिकृतो यजामहे ये देवानांहुतभागा इह स्थ.
(अथर्व 18/4/20)

अर्थात मालपुओं वाला तथा मांस वाला भात यहां है. यज्ञभागी देवों में से जो यहां हों, हम उन (मृतक के लिए) लोकनिर्माता व पथनिर्माता देवों का पूजन करते हैं.

उपर्युक्त वेदमंत्र मृतक के अस्थिचयन के समय पढ़ा जाता था.

मनुस्मृति (3/267-272) में सुस्पष्ट वर्णन है कि श्राद्ध में किनकिन पशुओं का मांस खिलाने से पितर कितनेकितने समय तक तृप्त रहते हैं. यथा :

"सूअर और भैंसों के मांस से पितर दस मास तक तृप्त रहते हैं तथा खरगोश और कछुए के मांस से 11 मास तक."
(मनु. 3/270)

इतना ही नहीं, जो मनुष्य विधिपूर्वक (श्राद्ध, मधुपर्क आदि में) मांस नहीं खाता, वह मर कर 21 बार पशुयोनि में जाता है. (मनु. 5/35)

पशु मांस से पितरों की तृप्ति

अनेक चतुर पंडित 'मांस' का अर्थ

'फलों का गूदा' कह कर भोलेभाले लोगों को भटकाया करते हैं. पर मनुस्मृति के समान ही धर्मसूत्रों में भी पशुमांस से पितरों की तृप्ति का स्पस्ट उल्लेख है. उदाहरणार्थ गौतम धर्मसूत्र (7/16/25-26) में कहा गया है कि गोमांस से पितर वर्ष भर तृप्त रहते हैं और भैंसों के मांस से भी सुप्रसन्न होते हैं. और तो और बृहदारण्यकोपनिषद् (6/4/18) में बैल व सांड के मांस के साथ भात मिला कर खाने का जिक्र है. उस में कहा गया है :

"जो व्यक्ति चाहे कि मेरा पुत्र विद्वान, विख्यात, सभाविजेता, सुवक्ता, सर्ववेदपारदर्शी व दीर्घजीवी पैदा हो, उसे चाहिए कि मांस का पुलाव पतिपत्नी दोनों खाएं. वह मांस भी बैल व सांड का हो."

कई शाकाहारी धार्मिक लोग इस संदर्भ को पढ़ कर नाकभौं सिकोड़ते हैं कि क्या याज्ञवल्क्य जैसे ऋषि ऐसी बात लिख सकते थे? वे तुरंत कुकल्पना कर लेते हैं कि उपनिषदों में 'माषोदन' (माष+ओदन) के स्थान पर भूल से 'मांसोदन' छप गया होगा. पर बात ऐसी नहीं है. सब कहीं से प्रकाशित उपनिषदों में 'मांसोदन' ही पाठ है, 'माषोदन' नहीं.

भक्ष्य और अभक्ष्य पशुपक्षी

धर्मसूत्रों व अन्य मान्य धार्मिक ग्रंथों में भक्ष्य और अभक्ष्य पशुपक्षियों की सूचियां भी दी गई हैं. उन से स्पष्ट सिद्ध है कि अनेक प्रकार के पशुपक्षी खाए जाते थे. उदाहरणार्थ, गौतम धर्म सूत्र (17/27/31), आपस्तम्ब धर्मसूत्र (1/5/17/35) याज्ञवल्क्य (1/177), वाल्मीकि रामायण में पांच नखों वाले पांच ही प्राणियों को भक्ष्य बताया गया है. उदाहरणार्थ, श्रीराम द्वारा घायल होने पर बाली बोला :

पंच पंचनखा भक्ष्या ब्रह्मक्षत्रेण राघव.
शल्यकः श्वाविधो गोधा शशः कूर्मश्च पंचमः
(वाल्मीकि रामायण, किष्किंधा, 17/37)

अर्थात हे राघव, ब्राह्मण और क्षत्रिय लोग तो पांच नाखूनों वाले प्राणियों में से इन पांच को ही खाते हैं—साही, श्वाविध, गोह, खरगोश तथा कछुआ, हमारी तो हड्डी, मांस, त्वचा सभी कुछ निषिद्ध है, तब आप ने हमें क्यों मारा?

आपस्तम्ब धर्मसूत्र (2/2/5/15) में ऊंट, नीलगाय, ग्रामीण सूअर और गौ का भक्षण तो निषिद्ध है. किंतु बैल का मांस पवित्र कहा गया है.

यह अच्छा ही हुआ कि वैदिक युग के बाद हमारे पूर्वजों में जीवदया की भावना क्रमशः बढ़ती गई और करोड़ों लोगों ने मांसभक्षण बंद कर दिया. हमारी भी प्रबल इच्छा यही है कि मांसभक्षक लोग यथाशीघ्र मांसाहार त्याग दें और साथ ही त्याग दें यह झूठ बोलना भी कि वैदिक युग के लोग मांस नहीं खाते थे. ●

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमार

डा. रामसरूप 'रसिकेश'

इन का कोई अस्तित्व भी था या यह सिर्फ कोरी कल्पना ही है.

यदि पाठकों में से किसी का नाम अश्विनीकुमार हो, उसे इस लेख के किसी अंश से कुछ कष्ट पहुंचे, उस के लिए हम पहले ही क्षमा याचना उचित समझते हैं. कारण, हमारा उद्देश्य किसी व्यक्ति व संप्रदाय के अनुयायियों का दिल दुखाना नहीं, बल्कि अपने दो प्राचीन देवताओं का दिग्दर्शन मात्र कराना है. इस से पाठकों को पता लग जाएगा कि मानव जाति प्राचीन काल में एक ईश्वर के अतिरिक्त कैसेकैसे देवीदेवताओं में विश्वास रखती थी और उन की स्तुति से विविध लाभ प्राप्त करती थी.

अश्विनीकुमार एक देवता नहीं है, दो देव भाई हैं, जो सदा इकट्ठे रहते हैं. इन के पिता थे विवस्वान् (सूर्य देवता) और माता अश्विनी (घोड़ी). बात बहुत बेढंगी सी लगती है, देवता का विवाह घोड़ी से कैसे हो गया? ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के अनुसार घटना यों घटी :

(क) त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोतीतीदं
विश्वं भुवनं समेति ।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो
जाया विवस्वतो ननाश ॥

(ख) अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी
सवर्णामदर्दुविवस्वते ।
उताश्विनावाभरद्यत्तदासी दजहादु
द्वा मिथुना सरण्यूः ॥

(ऋग्वेद 10-17-1 अथर्व 8/33)

अर्थात "त्वष्टा (विश्वकर्मा) देवता अपनी पुत्री (सरण्यू) का विवाह कर रहे हैं इसलिए सारा संसार वहां एकत्र हो गया है. जब यम की माता (सरण्यू) का पाणिग्रहण हुआ, तब महान विवस्वान (सूर्य) की पत्नी लुप्त हो गई.

"उन्होंने (देवों ने) मरणशील मनुष्यों से अमर देवी (सरण्यू) को छिपा लिया तथा उस जैसी स्त्री रच कर विवस्वान को दे दी. सरण्यू ने उस के लिए दो अश्वी भाइयों को उदर में धारण किया और दो जुड़वां बच्चों को जन्म दिया."

इन मंत्रों से इतना तो झलकता है कि सूर्य की पत्नी, यम की माता, सरण्यू तो लुप्त हो गई और उस की सी एक अन्य स्त्री उस के स्थान पर स्थापित कर दी गई. तत्पश्चात लुप्त स्त्री ने दो अश्वियों (घुड़सवारों को) जन्म दिया. पर यह सब क्यों और कैसे हुआ, यह स्पष्ट नहीं है. प्राचीन ग्रंथों में कहा गया है—"इतिहासपुराणाभ्यां वेदार्थानुपबृंहयेत् ।" अर्थात मनुष्य वेदों के गुह्य अर्थों का स्पष्टीकरण इतिहास व पुराणों से करे.

भागवत पुराण (8/13/8-10) के अनुसार विश्वकर्मा की दो पुत्रियां थीं—संज्ञा और छाया. कुछ एक के मत से तीसरी बडवा (घोड़ी) भी थी. इन में से संज्ञा की तीन संतानें थीं—यम, यमी और वैवस्वत मनु.

इन को जन्म देने के बाद संज्ञा सूर्य का तेज न सह सकी. इसलिए वह स्व

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्थान पर अपने समान रूपरंग वाली एक सेविका (छाया) को रख कर, स्वयं घोड़ी का रूप धारण कर, वन में तप करने चली गई. पति (सूर्य देवता) को पत्नी के इस कपट का पता ही न चला. जब छाया दो पुत्रों (सावर्णि और शनैश्चर) तथा एक पुत्री (तपती) की मां बन गई, तब कहीं सूर्य को रहस्य का ज्ञान हुआ और वह संज्ञा की खोज में निकल पड़ा. जब उस ने संज्ञा को कुरु देश के तपोवन में घोड़ी के रूप में तप करते देखा, तब घोड़े का रूप बना कर उस से सहवास किया और दो अश्वी (घुड़सवार) देवता उत्पन्न हुए (महाभारत, आदिपर्व, 7/34 तथा अनुशासन पर्व). यह भी ध्यान रहे कि कहींकहीं इन अश्वियों को आकाश और समुद्र देवता की और कहीं पर पूषा देवता की संतान भी बताया.

अश्विनीकुमारों के कई नाम हैं जैसे--दस्रौ (दो शत्रुनाशक), नासत्यौ (न+असत्यौ=दो सच्चे) आदि. महाभारत में बड़े भाई का नाम 'नासत्य' कहा गया है, छोटे का 'दस्र'. महर्षियास्क कृत 'निरुक्त' में एक को निशा (रात्रि) का पुत्र बताया गया है तो दूसरे को उषा का. अश्विनीकुमारों का समय उषा और सूर्योदय के मध्य में माना जाता है. (ऋग्वेद 8/5/2)

अश्विनीकुमार पुराने होते हुए भी जवान हैं. वे सुंदर, सुनहले, बलिष्ठ तथा कमलमालाधारी हैं. वेदों में तीन की संख्या से उन का घनिष्ठ संबंध बताया गया है--

"हे अश्वियों, हम को तीन बार धन दो. देवकर्मा के अनुष्ठान में तुम तीन बार पधारो. तीन बार हमारी बुद्धि की रक्षा करो. तीन बार हमें सौभाग्य व कल्याण से संपन्न करो. तुम्हारे तीन चक्रों वाले रथ पर सूर्यपुत्री (सूर्या) बैठी हुई है."

अश्वी वैवस्वत मन्वन्तर के देवता माने जाते हैं. अन्य देवताओं के समान सोम आदि पदार्थ तो इन्हें प्रिय हैं ही, मधु इन का मनभाता भोजन है. इन का थैला मधु से भरा रहता है और ये मधु के सैंकड़ों घड़े उड़ेलते रहते हैं. इन के रथ का रंग भी मधु सा है और उस में मधु रखा रहता है. इन की चाबुक भी मधुमयी है. महाभारत के अनुसार पहले तो ये देवता न थे, जब इन्होंने च्यवन ऋषि को जवान बना दिया, उस ने देव पद दिला दिया.

ऋग्वेद में अश्वियों के संबंध में कोई पचास सूक्त पाए जाते हैं और उन में से इन के विभिन्न स्थानों का उल्लेख है. यों तो ये चारों दिशाओं में विचरण करते हैं. (ऋग्वेद 1/46/14), किंतु द्यौ तथा अंतरिक्ष लोक से भी इन के पधारने की बात कही गई है. जैसे—

कण्व ऋषि के गोत्र में उत्पन्न हम, तुम्हारे लिए सोमयुक्त मधु निचोड़ते हैं. इसलिए, हे अश्वियों, तुम प्रसन्न हो कर द्यौ तथा अंतरिक्ष लोक से यहां पधारो." (ऋग्वेद 8/8/4).

ऋग्वेद (7/70/3) में वसिष्ठ ऋषि उन से यों प्रार्थना करते हैं :

"हे अश्वियो, तुम द्यौ लोक से आ कर विशाल वृक्षों और प्रजाओं के मध्य में जो स्थान ग्रहण करते हो, पर्वत के शिखर पर बैठते हुए अन्नदाता को भी वही स्थान प्रदान करो."

इस के अतिरिक्त कहींकहीं यह भी कहा गया है कि इन का स्थान अज्ञात है. (ऋग्वेद 6/63/1)

अश्वियों के वाहन

साधारण मनुष्यों को तो प्रायः पैदल ही चलना पड़ता है, पर बड़े लोग और देवता पैदल चलना शान के खिलाफ मानते हैं. यही कारण है कि विभिन्न देवीदेवों के अलगअलग वाहनों की कल्पना की गई. अश्विनीकुमार प्रायः अश्वों पर सवार होने के कारण ही अश्वी (घुड़सवार) कहे जाते हैं. चूंकि इन के घोड़े भी पंखों से युक्त हैं, इसलिए ये उन पर सवार हो कर उड़े फिरते हैं.

इन का रथ सुनहला तथा मधुमान है. उस के धुरे, पहिए और बैठने के स्थान

तीनतीन हैं--दो अपने लिए, तीसरा पत्नी (सूर्या) के लिए. दीर्घतमा ऋषि के पुत्र कक्षीवान इन से यों प्रार्थना करते हैं:

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हे अश्वियों, बाज पक्षी के समान वेगवान सुखदायक बंधनयुक्त तुम्हारा रथ हमारे सामने आए. हे वरदायक देवो, तुम्हारा रथ मानव मन व पवन के समान वेगवान है." (ऋग्वेद 1/118/1)

इन के रथ में सात घोड़ों के जोड़े जाने का उल्लेख मिलता है. (ऋग्वेद 1/47/8) किंतु कभीकभी उसे गधे भी खींचते थे. उदाहरणार्थ--

"हे अश्वियों, तुम्हारे तिकोने रथ के तीन पहिए कहां हैं? बैठने के स्थान के तीनों काठ कहां हैं? कब बली गधे तुम्हारे रथ में जोड़े जाते हैं जिन के द्वारा तुम हमारे यज्ञ में आते हो?"

ऐतरेय ब्राह्मण (4-4-9) के अनुसार सोम और सूर्या के विवाहकाल में इन के रथ के आगे गधे ही जोड़े गए थे.

इन के रथ का मार्ग सुनहला है. इस से वे एक ही दिन में भूमि से स्वर्ग तक की यात्रा कर लेते हैं. इन के रथ के चलने पर उषा का जन्म होता है और ये उषा का अनुगमन भी करते हैं. इसी रथ के द्वारा वे प्रातः, दोपहर व सायंकाल यज्ञों में पधारते तथा कुशा पर बैठते हैं.

सूर्यपुत्री सूर्या से इन के विवाह का वर्णन ऋग्वेद के अनेक सूक्तों में किया गया है. तथा--"आ वां रथं दुहिता सूर्यस्य कार्ष्मेवातिष्ठदर्वता जयन्ती। विश्वे देवा अन्वमन्यंत हृद्भिः समु श्रिया नासत्या सचेथे।" (ऋग्. 1/116/17)

अर्थात "हे अश्वियों, घोड़े द्वारा विजित सूर्यपुत्री (सूर्या) तुम्हारे रथ पर आरूढ़ हो गई. सब देवताओं ने इस घटना का हृदय से अनुमोदन किया. तब तुम्हारी कांति खूब खिल उठी."

यह वेद मंत्र तो घटना का संकेत मात्र करता है, पर पूरा विवरण तो ऐतरेय ब्राह्मण (4/7) में ही प्राप्त होता है. असल बात यह है कि सूर्य देवता स्व सुता का विवाह सोम देवता से करना चाहते थे. उधर उसके सब देवता भी सूर्या के अभिलाशी थे. निर्णय हो तो कैसे? सौभाग्य से देवताओं ने परामर्श द्वारा यह निश्चय किया कि सूर्य को अवधि बना कर घुड़दौड़ की जाए और जो सब से आगे निकल जाए, वही सूर्या का स्वामी बने. मुकाबला हुआ और अश्विनीकुमार सर्वविजयी हुए. फलस्वरूप सूर्या उन की हो गई और उन के रथ में जा बैठी. वह रथ ढाक तथा सेमल वृक्षों की लकड़ी से निर्मित था तथा वह सुंदर चक्र से युक्त था. (ऋग्वेद 10/85/20)

स्मरण रहे कि ऋग्वेद (10/85) में सूर्या के विवाह का विस्तृत विवरण विद्यमान है और उस सूक्त के अनेक मंत्रों का उच्चारण आजकल भी हमारे विवाह संस्कारों में किया जाता है.

अश्वियों के मुख्य कार्य

अश्विनीकुमार स्वर्ग के वैद्य अर्थात देवों के चिकित्सक माने जाते हैं (तैत्तिरीय ब्राह्मण 3-1-2-11). इस के अतिरिक्त वे अपने भक्त मनुष्यों को भी विविध संकटों, रोगों, मृत्यु आदि से बचाते हैं और उन्हें सुख, स्वास्थ्य, संतति, संपत्ति आदि प्रदान करते हैं. ऋग्वेद में उन के ऐसे दुख भंजक कार्यों का उल्लेख मिलता है और ऐसे ही मनोरथों की सिद्धि के लिए उन की आराधनाएं भी की गई हैं. यथा--

उत त्या दैव्या भिषजा शं न करत अश्विना।
युयुतामितो रपो अप स्त्रिधः॥
(ऋग्वेद 8/18/8)

अर्थात--"हे देवों के वैद्य अश्विनीकुमार हमें शांति प्रदान करें. हम से पापों (रोगों) तथा शत्रुओं को दूर करें."

कायाकल्प करना, वृद्धों को पुनः जवान बनाना अश्वियों का विशेष कार्य है. जिस 'च्यवन प्राश' रसायन का सेवन वृद्धजन, जवान और जवान पहलवान बनने के लिए आज भी करते हैं उस का नाम च्यवन (च्यवान) ऋषि के नाम पर ही रखा

गया था. वृद्ध च्यवन को पुनः युवा बनाने की घटना का निर्देश वेद मंत्रों में अनेक स्थलों पर किया गया है. उदाहरणार्थ :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

युवं च्यवानमश्विना जरंतं पुनर्युवानं चक्रथुः शचीभिः। युवो रथं दुहिता सूर्यस्य सह श्रिया नासत्या वृणीत ॥

(ऋग्वेद. 1/117/13)

अर्थात—"हे अश्वियों, तुम ने बूढ़े च्यवान (च्यवन) ऋषि को वैद्यक शक्तियों से पुनः जवान कर दिया था. हे सच्चे देवों, सूर्य की पुत्री (सूर्या) तुम्हारे रथ कांति से युक्त हो कर आरूढ़ हुई थी."

सैंकड़ों कष्टनाशक कार्य करने में समर्थ

अश्विनीकुमार कोढ़, क्षय आदि रोगों के नाशक हैं तथा ईसामसीह के समान अंधों को आंखें, बहरों को कान तथा लंगड़ों को जंघाएं आदि देते हैं. (ऋग्वेद 10-39-3) राजा रवे की पत्नी विश्पला की टांग टूटने पर इन्होंने उस के स्थान पर लोहे की टांग लगा दी थी. महाभारत के अनुसार माद्री ने पांडु की अनुमति से नियोग प्रथा का अनुसरण करते हुए इन्हीं से सहवास कर के नकुल तथा सहदेव को प्राप्त किया था. ये स्त्रियों को संतति ही नहीं देते, प्रेमी युगलों के मिलाने का भी सुकार्य करते हैं. (अथर्ववेद 2-30-2). इस प्रकार के सैंकड़ों कष्टनाशक कार्यों का वर्णन वेदों में उपलब्ध होता है. यहां केवल एक मंत्र उद्धृत कर इस प्रसंग को समाप्त करते हैं :

याभी रेभं निवृतं सितमद्भ्य
उद् वंदनमैरयतं स्वर्दृशे।
याभिः कण्वं प्रसिषासंतमावतं
ताभिरु षु ऊतिभिरश्विना गतम् ॥

(ऋग. 1/112/5)

अर्थात "हे अश्वियों, जिन रक्षण उपायों द्वारा तुम दोनों ने कूप में फेंके हुए और पाश से बांधे हुए रेभ ऋषि को जल से बचाया था, सूर्य के दर्शन के इच्छुक वंदन ऋषि को भी जल से निकाला था तथा प्रकाश से इच्छुक कण्व ऋषि की रक्षा की थी, उन्हीं रक्षा साधनों से युक्त हो कर हमारे पास आओ."

उपर्युक्त पंक्तियां पढ़ कर पाठक पूछ सकते हैं कि आखिर ये अश्विनीकुमार थे कौन, जिन के लिए अकेले ऋग्वेद में ही पचास सूक्त रचे गए हैं. जैसे अग्नि देवता अग्नि के अधिष्ठाता माने जाते हैं, सूर्य देवता सूर्य के और वायु देवता वायु के. वैसे ही ये अश्वी भी क्या किसी भौतिक पदार्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं?

सत्य यह है कि अश्वियों का स्वरूप सुस्पष्ट नहीं है. महर्षि यास्क भी इन के संबंध में इतना ही कह सके कि ये सूर्य व चांद भी हो सकते हैं, दिन और रात भी तथा पृथ्वी और आकाश भी. आज के विद्वानों ने भी इन के विषय में पर्याप्त माथापच्ची की है. कोई कहता है, ये कोई प्राचीन अश्वारोही राजकुमार थे जो कृषि तथा आयुर्वेद के विशेषज्ञ होने के अतिरिक्त आर्य राष्ट्र के विस्तारक थे. किसी के मत से ये बुध तथा शुक्र नाम के नक्षत्रों के प्रतीक हैं तो किसी के मत से बृहस्पति तथा शुक्र के. कुछ लोग इन्हें प्रातः व सायं के प्रकाश तथा अंधकार के मिश्रण का प्रतिरूप मानते हैं और कुछ ध्रुव प्रदेश में दीखने वाले प्रकाशपुंजों के प्रतिनिधि.

पर स्पष्ट बात यह है कि उक्त सब कल्पनाओं में से किसी पर भी पूर्वोक्त वैदिक विवरण पूर्णतया लागू नहीं होते. हमें तो ऐसा ही प्रतीत होता है कि जैसे मिताभी जाति में तथा जिंद अवेस्ता में इन्हें देवता माना गया है वैसे ही हमारे वैदिक पूर्वज भी इन्हें देवता ही मानते थे. महाभारत के शांतिपर्व में तो इन्हें शूद्र देवता कहा गया है. जहां तक हमारा निजी मत है, हम तो एक निराकार सर्वव्यापक परमात्मा को छोड़ किसी अन्य चेतन देवीदेवता में तनिक भी विश्वास नहीं रखते और चाहते हैं कि वर्तमान वैज्ञानिक युग के प्रबुद्ध पाठक इन सहस्रों काल्पनिक वैदिक व पौराणिक देवीदेवताओं से जितना दूर रहें उतना ही अच्छा. ●

दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाभारत की ऐतिहासिकता

● सुरेंद्रकुमार शर्मा 'अज्ञात'

प्रसिद्ध हिंदू इतिहासकार डा. रमेशचंद्र मजुमदार ने एक जगह भारतीयों के ऐतिहासिक बोध पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, "इतिहास लेखन के प्रति भारतीयों की विमुखता भारतीय संस्कृति का भारी दोष है. उन्होंने कभी भी गंभीरतापूर्वक इतिहास लेखन की ओर ध्यान नहीं दिया."

सैकड़ों वर्ष पूर्व अलबरूनी ने भी इसी तरह के विचार व्यक्त किए थे, "हिंदू लोग घटनाओं के ऐतिहासिक क्रम की ओर अधिक ध्यान नहीं देते. वे घटनाओं के कालानुक्रम को लिपिबद्ध करने में अत्यंत असावधानी से काम लेते हैं और जब कभी ऐतिहासिक जानकारी के लिए उन पर दबाव डाला जाता है तो उत्तर देने में समर्थ न होने पर वे कोई कहानी सुनाना आरंभ कर देते हैं."

लेकिन हिंदुत्व के अभिमानी लोग इस कटु यथार्थ को स्वीकार करने से कतराते हैं और भारतीयों के ऐतिहासिक बोध को सिद्ध करने के लिए सुदूर अतीत की कुछ रचनाओं, विशेषतः रामायण और महाभारत, का नाम ले कर यह दावा करते हैं कि उक्त पुस्तकें हमारी इतिहास पुस्तकें हैं.

ब्राह्मण ग्रंथों में 'आख्यान,' 'इतिहास' और 'पुराण' शब्द मिलते हैं. उपनिषदों में इतिहास और पुराण को 'पंचम वेद' तक कहा गया है (छांदोग्य उपनिषद 7/1) लेकिन इन पंचम वेद कहे जाने वाले इतिहास और पुराणों में देवताओं, राक्षसों, नागों की कथाओं के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं. भारतीय संसार को माया या भ्रम मानते रहे. अतः उन के मुताबिक सांसारिक घटनाओं का कालक्रम के अनुसार इतिहास लिखना एक व्यर्थ का काम था, मूर्खता थी.

चमत्कारिक घटनाएं मायाजाल

उन्होंने चमत्कारिक घटनाओं को दिव्यकर्म, इंद्रजाल और मायाजाल स्वीकार किया. भारतीय बुद्धि विशेष घटनाओं की अपेक्षा सामान्य को अधिक महत्त्व प्रदान करती है. अनुश्रुति और वास्तविकता के अंतर को समझने की उन्होंने कभी चेष्टा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं की. परिणामस्वरूप घटनाओं के क्रम की पूर्ण उपेक्षा कर दी गई और कालानुक्रम की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया.

ये ही प्रमुख तत्त्व इन के कथित इतिहास ग्रंथों, रामायण और महाभारत में प्रधानतया उपलब्ध होते हैं. रामायण की अपेक्षा महाभारत की ऐतिहासिकता पर ज्यादा जोर दिया जाता है. अतः उसे ही ऐतिहासिकता की कसौटी पर परखना किसी तथ्य पर पहुंचने में सहायक हो सकेगा.

इस से पहले कि किसी पुस्तक में लिखित वस्तु की प्रामाणिकता पर विचार किया जाए, यह देखना नितांत आवश्यक है कि वह पुस्तक किस स्वभाव की है, उस का लेखक कौन है, उस का उद्देश्य क्या है.

महाभारत के नाम से जानी जाने वाली यह पुस्तक किसी एक लेखक की कृति नहीं है. इतिहास पुराण के नाम पर प्रचलित कथाएं गौतम बुद्ध से पहले काफी मात्रा में इकट्ठी हो चुकी थीं. ये गद्य और पद्य, दोनों में थीं. समय पा कर इन कथाओं में वीरों की स्तुतियां भी जोड़ दी गईं, जिन्हें 'गाथा नाराशंसी' कहते हैं. वीरों की इन स्तुतियों का स्वरूप शीघ्र ही 'बृहत्कथा' हो गया और इसी 'नाराशंसी' गाथाओं की, प्रणाली का विकास रामायण और महाभारत आदि ग्रंथों में पाया जाता है.

महाभारत : पूर्व प्रचलित कथाएं

इस से स्पष्ट है कि 'महाभारत' पूर्व प्रचलित कथाओं का संपादित रूप है, न कि किसी की कृति का. इस तथ्य को स्वयं महाभारत सत्य प्रमाणित करता है. महाभारत के हर अध्याय की समाप्ति पर जो पुष्पिका दी गई है उस में लिखा है—"इति श्रीमन्महाभारते शतसाहस्त्र्यां संहितायां वैयासिक्याम्..." (महाभारत नाम की संहिता में). संहिता का अर्थ है संग्रह. तात्पर्य यह है कि स्वयं महाभारत अपने को पूर्व प्रचलित कथाओं का संग्रह मानता है. महाभारत नाम के कथा संग्रह का संपादक कौन था? अब यह प्रश्न रह जाता है.

महाभारत के आदिपर्व (62/22) से ज्ञात होता है कि कृष्ण द्वैपायन व्यास ने सब से पहले इस का संपादन किया. तब इस में सिर्फ 8800 श्लोक थे (आदिपर्व 1/117). उस ने अपने संग्रह का नाम 'जय' रखा था. इस के बाद 'वैशंपायन' नाम के दूसरे संपादक का महाभारत से ही पता चलता है. उस ने व्यास के बाद के आख्यानों को भी इस में जोड़ दिया, जिस से यह संग्रह काफी बढ़ गया. अब इस में 8800 की जगह 24000 श्लोक हो गए. आकार वृद्धि के साथ नाम परिवर्तन भी हो गया और 'जय' अब 'भारत संहिता' कहा जाने लगा (आदिपर्व 1/78).

आख्यान निरंतर बनते गए. उन को एकत्र करने के उद्देश्य से 'भारत संहिता' में फिर परिवर्तन किया गया. इस बार उग्रश्रवा सौति ने इस के 96244 श्लोक बना दिए.

अब यह संग्रह विशालकाय होने के साथसाथ भारी भी हो गया था. अतः उस ने इस का नाम 'महाभारत' कर दिया था—महत्त्वाद् भारवत्त्वाच्च महाभारतमुच्यते (आदि 1/300).

महाभारत ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में अस्तित्व में आ चुका था, क्योंकि 400 ई. पू. में रचे गए आश्वलायन गृह्यसूत्र (3/4/4) में 'महाभारत' का स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध होता है. 500वीं ईस्वी में दक्षिण भारत की यात्रा को आए यूनानी लेखक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राचीन भारत में इतिहास लेखन की परंपरा कभी नहीं रही.
महाभारत और रामायण, दोनों ही ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं हैं.
उन में जिन पात्रों का वर्णन है वे सब कपोलकल्पित हैं.

डायोकायसोस्टीम ने अपने संस्मरण में 'एक लाख श्लोकों वाले महाभारत' का स्पष्ट रूप में जिक्र किया है.

इस से स्पष्ट है कि इसे न तो इतिहास ग्रंथ के रूप में बनाया गया था और न ही इस का स्वरूप इतिहास ग्रंथ सा है. बाद में भी प्राचीन भारतीय विद्वानों और लेखकों ने इसे इतिहास ग्रंथ नहीं स्वीकारा. प्रसिद्ध दार्शनिक कुमारिल भट्ट (700 ई.) ने इसे 'स्मृति ग्रंथ' (धर्म शास्त्रीय पुस्तक) माना है और सुबंधु तथा बाणभट्ट (600 तथा 640 ई.) इसे 'काव्य ग्रंथ' कहते हैं. ऐसे में महाभारत को इतिहास ग्रंथ कहना बिलकुल गलत है.

विषयगत ऐतिहासिकता

महाभारत बहिरंग परीक्षा में ऐतिहासिक ग्रंथ सिद्ध ही नहीं होता, अंतरंग परीक्षा से भी वह इतिहास ग्रंथ के सम्मान का अधिकारी नहीं है.

'महाभारत' की आधिकारिक कथा कौरवों और पांडवों के युद्ध की चर्चा है. दोनों चाचेताए के पुत्र थे. आपसी संबंध अच्छे न होने के कारण इन का कुरुक्षेत्र के मैदान में 18 दिन तक प्रलयंकारी युद्ध हुआ, जिस में 18 अक्षौहिणी सेना तबाह हुई.

दूसरे, महाभारत में जो युद्ध का वर्णन किया गया है, वह एकदम अविश्वसनीय और उस युग के मुताबिक नहीं है. 18 दिनों में 18 अक्षौहिणी सेना उन दिनों के तीरों, भालों तलवारों और बरछों से नष्ट नहीं हो सकती थी. उन शस्त्रों से 18 अक्षौहिणी सेना के अंगभूत लाखों हाथियों, घोड़ों, रथों और इनसानों को नष्ट करना महीनों में भी कठिन था, 18 दिन की तो बात ही करना बेकार है.

सेना की गणना यथार्थ नहीं

वैसे, सेना की जो गणना बतलाई गई है, वह भी यथार्थ नहीं. स्वयं महाभारत में एक अक्षौहिणी का परिमाण इस तरह बताया गया है. 'एक अक्षौहिणी में 21,870 हाथी, इतने ही रथ, 65,610 घुड़सवार तथा 1,09,350 पैदल सैनिक होते हैं' (महाभारत आदि, 2/22 से 26). ऐसी 18 अक्षौहिणयों में कितने लाख हाथी, रथ, घोड़े और इनसान होंगे, सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है. लाखों की संख्या में हाथियों और घोड़ों का जिक्र निहायत अनर्गल कल्पना है. दुनिया भर में लाखों की संख्या में हाथी नहीं हो सकते, अकेले भारत में उन के होने की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती.

दूसरे, यदि यह पल भर के लिए मान भी लिया जाए कि उक्त संख्या में हाथी, घोड़े कहीं से पैदा कर लिए गए थे, फिर भी इस कठिनाई का कोई हल नहीं मिलता कि इतने लाख हाथी, घोड़े, रथ और इनसान कुरुक्षेत्र के मैदान में खड़े कैसे हुए होंगे. उन के लड़ने की तो बात ही अलग है. स्पष्ट है कि तथाकथित इतिहास ग्रंथ की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

18 अक्षौहिणी फौज के नष्ट होने की बात एक बचकानी कल्पना मात्र है, जिस का ऐतिहासिक यथार्थ से दूर का भी संबंध नहीं.

इतना ही नहीं, महाभारत का अधिकांश भाग ऐसा है, जिस में एकदम कपोलकल्पित उपाख्यान (गप्पें) हैं जिन की विद्यमानता में कोई भी बुद्धिमान महाभारत को इतिहास ग्रंथ कहने की भूल नहीं कर सकता. उदाहरणार्थ द्रोणाचार्य के व्यक्तिगत जीवन के बारे में बताते हुए तथाकथित इतिहास ग्रंथ में लिखा है कि घृताची नामक अप्सरा को नग्नावस्था में देख कर भरद्वाज ऋषि का वीर्यपात हो गया. उस वीर्य को उस ने द्रोण (यज्ञ-कलश) में रख दिया, उस से द्रोणाचार्य पैदा हो गया (महा. आदिपर्व अध्याय 129).

ऋष्यशृंग ऋषि के जीवन इतिहास का वर्णन करते हुए इस इतिहास ग्रंथ में लिखा है कि ऋषि विमांडक एक बार नदी में नहा रहा था कि उर्वशी नाम की अप्सरा को देख कर उस का वीर्य स्खलित हो गया. नदी के उस वीर्य मिश्रित पानी को एक मृगी पी गई. उस ने समय पा कर एक मानव शिशु को जन्म दिया, जिस का नाम ऋष्यशृंग रखा गया (वनपर्व, अध्याय 110).

व्यास की माता की उत्पत्ति

व्यास की माता की उत्पत्ति के बारे महाभारतकार का कहना है कि राजा उपरिचर का एक बार वन में वीर्यपात हो गया. उस ने उसे दोने में डाल कर एक बाज पक्षी के द्वारा अपनी रानी गिरिका के पास भेजा. रास्ते में दूसरे किसी बाज ने उस पर झपटा मारा, जिस से वह वीर्य यमुना में गिर गया और एक मछली ने उसे निगल लिया. इस से उस मछली ने एक लड़की और एक लड़के को जन्म दिया. लड़की का नाम सत्यवती रखा गया. यही व्यास ऋषि की माता थी.

इस तरह असंख्य दिवास्वप्नों सी कल्पनाएं महाभारत में पदपद पर उपलब्ध होती हैं. ये सब इतिहास ग्रंथों में मिलने वाली बातें न हो कर, प्रमत्त प्रलाप हैं. इस तरह की विषयवस्तु वाले महाभारत को इतिहास ग्रंथ न तो कहा जा सकता है और न माना ही जा सकता है.

तथाकथित इतिहास ग्रंथ महाभारत में उस युद्ध के समय के बारे में कुछ भी निश्चित रूप में उपलब्ध नहीं होता, जिस के गिर्द इस महाभारत की रचना की गई. महाभारत में मिलने वाले ग्रह विद्या संबंधी संकेतों के आधार पर विद्वानों ने उस युद्ध के विषय में विभिन्न मत अभिव्यक्त किए हैं.

'आर्यभट्टीय' (476 ई.) नामक ग्रह विद्या के ग्रंथ के मुताबिक यह युद्ध 3102 ई. पू. में हुआ सिद्ध होता है. पुराणपंथियों का भी यही मत है.

महाभारत युद्ध कब हुआ?

वृद्धगर्ग और वराहमिहिर (600 ई.) जैसे दूसरे ज्योतिर्विद् इस युद्ध को 2449 ई. पू. में हुआ मानते हैं.

श्री मोदक ने ग्रह विद्या संबंधी संकेतों के आधार पर उक्त युद्ध के 5025 ई. पू. में होने की बात कही है.

वराहमिहिर के कुछ अनुयायी इसे 2604 ई. पू. में हुआ बताते हैं.

ज्योतिष के ही आधार पर शंकरबालकृष्ण दीक्षित ने महाभारत का युद्ध 1421

ई. पू. में माना है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत के पुरातात्त्विक सर्वेक्षण के भूतपूर्व महानिदेशक डा. बी. बी. लाल ने महाभारतकालीन स्थलों की खुदाई के बाद यह मत प्रतिपादित किया है कि 'महाभारत का कथित युद्ध 1100 ई. पू. से 900 ई. पू. के मध्य हुआ.' (देखें : सी. वी. वेद कृत दि महाभारत ए क्रिटिसिज्म. पृ. 50-70); दीक्षित कृत 'भारतीय ज्योतिष' पृष्ठ 180, 'हरियाणा संवाद,' 15 जून, 1971 में डा. बुद्धप्रकाश का लेख).

ये परस्पर विरोधी मत महाभारत में मिलने वाले ग्रह विद्या संबंधी संकेतों के आधार पर स्थापित किए गए हैं. इन में एकदूसरे से कहीं सैकड़ों वर्षों का भेद है और कहीं हजारों का. यदि महाभारत वास्तव में इतिहास ग्रंथ होता तो उस में इतने परस्परविरोधी संकेत न मिलते, जिन के आधार पर उपयुक्त या ऐसे ही परस्परविरोधी परिणाम निकलते. इन विसंगतियों की विद्यमानता में महाभारत को इतिहास ग्रंथ नहीं कहा जा सकता.

महाभारत के युद्ध के विषय में परवर्ती साहित्य में भी कई जगह हवाले मिलते हैं. हर पुस्तक में इस युद्ध की तिथि दूसरी से नितांत भिन्न ही लिखी गई है. उदाहरणार्थ :

वायु, मत्स्य, ब्रह्मांड और भागवत पुराण के अनुसार गणना करने पर यह युद्ध 1924 या 1474 ई. पू. सिद्ध होता है.

कुछ पुराणों में महापद्मानंद और महाभारत के युद्ध के बीच के समय का उल्लेख किया गया है. उस के अनुसार गिनती करने पर उक्त युद्ध 874 ई. पू. में हुआ सिद्ध होता है.

'कथा सरित सागर' के अनुसार यह युद्ध 700 ई. पू. में हुआ.

'विष्णु पुराण' के मुताबिक यह युद्ध 1500 ई. पू. में हुआ प्रमाणित होता है.

मगध के इतिहास के आधार पर श्रीदत्त ने इस युद्ध के 1250 ई. पू. में होने की बात कही है.

भारत की धार्मिक परंपरा इस युद्ध को 5000 ई. पू. में हुआ मानती है.

इन में से कुछ तिथियां यथा 2605 ई. पू., 3102 ई. पू., 5000 ई. पू और 5025 ई. पू. आदि तो आर्यों के भारत में प्रविष्ट होने से भी पूर्व की ठहरती हैं. जब वे अभी भारत में आए ही न थे तो वे कुरुक्षेत्र के मैदान में लड़े कैसे? इस का उत्तर यह नहीं हो सकता कि वे भारत के बाहर से आए ही नहीं थे, क्योंकि यह तथ्य दुनिया भर के इतिहासज्ञ मानते हैं कि आर्य भारत के मूल निवासी नहीं हैं. प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेता डा. सांकलिया का कहना है कि महाभारत का युद्ध 1100 ई. पू. से ज्यादा प्राचीन नहीं हो सकता, क्योंकि इस के पूर्व भारत में लोहे का आविष्कार ही नहीं हुआ था.

ये विभिन्न तिथियां भी न केवल महाभारत की ऐतिहासिकता पर अमिट प्रश्नचिह्न हैं, अपितु भारतीयों के ऐतिहासिक बोध को भी अनावृत करती हैं.

रामायण पहले

प्राचीन भारतीयों के ऐतिहासिक बोध के प्रशंसक जब प्राचीन इतिहास ग्रंथों का नाम लेते हैं, तब वे रामायण का नाम पहले लेते हैं और महाभारत का बाद में. यह उन के मुंह से अचानक ही निकल जाता है, ऐसी बात नहीं. इस के पीछे एक पौराणिक विश्वास है, जिस के अनुसार दुनिया में पहले सतयुग था, जब सब भला

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ही भला था. उस के बाद त्रेतायुग (रामायण का युग) आया, जब थोड़ी खराबी पैदा हुई. तदनंतर द्वापर युग (महाभारत युग) आया, जब आधा धर्म और आधी खराबी थी. तत्पश्चात कलियुग आया, जब चारों ओर खराबी ही खराबी फैल गई, इत्यादि.

यह विश्वास बिलकुल अवैज्ञानिक एवं बेसिरपैर का है. विश्व की सभ्यताओं का इतिहास और समाजशास्त्रीय अध्ययन इस बात के प्रबल प्रमाण हैं कि सभ्यताएं असभ्यता से सभ्यता की ओर जाती हैं न कि सभ्यता से असभ्यता की ओर. जंगली से ग्राम्य और ग्राम्य से नागर सभ्यता पनपती है.

इस दृष्टि से देखने पर महाभारत पहले और रामायण बाद में बनी प्रतीत होती है. प्रसिद्ध जरमन विद्वान डा. वेबर और आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के संस्कृत के प्रोफेसर डा. ए. ए. मैकडानेल ने भी इसी मत का प्रतिपादन किया है.

दोनों पुस्तकों की तुलना करने पर महाभारत आदिम सभ्यता के ज्यादा निकट दिखाई पड़ती है और रामायण में अपेक्षाकृत ज्यादा सभ्य समाज का चित्रण है.

वैदिक काल की समाप्ति के तुरंत बाद ही महाभारत रचा गया. इसी लिए इस में अनेक स्थानों पर वैदिक छंद भी उपलब्ध होते हैं. रामायण बहुत बाद में रची गई, जब वैदिक छंदों का प्रयोग लुप्त हो चुका था. महाभारत में जीवन का यथार्थ है, जिस में सभ्यता के लबादे का अभाव है, जब कि रामायण में सभ्यता का नकाब ओढ़ा स्पष्ट दीख पड़ता है. महाभारत के सामाजिक नियम कबीलों के अवशेष लिए हैं. इसलिए पांच पांडवों की एक सांझी पत्नी है. रामायण तक आतेआते ये अवशेष नष्ट हो चुके थे. वहां हरेक की अपनी पत्नी है और बड़े भाई की पत्नी माता समान और छोटे भाई की पत्नी पुत्री समान मानी जाने लगी थी.

महाभारत रामायण से पहले

न सिर्फ सांस्कृतिक तत्त्वों के आधार पर ही महाभारत रामायण के पहले की रचना सिद्ध होती है, अपितु इस के लिए साहित्यिक एवं भाषा वैज्ञानिक आधार भी उपलब्ध होते हैं.

महाभारत की भाषाशैली नितांत सरल और सादी है. इस में आर्ष प्रयोग, वैदिक त्रिष्टुप छंद, गद्य, पद्यगद्य, पद्य का मिश्रित रूप, प्रतिपाद्य विषय में शिथिलता आदि उपलब्ध होते हैं. ये इस बात के परिचायक हैं कि तब तक एक अलंकृत काव्यशैली की प्रतिष्ठा नहीं हुई थी. इस के विपरीत रामायण में अलंकृत काव्यशैली, संतुलित पद विन्यास आदि दिखाई पड़ते हैं, जो इस के उत्तरकाल में रचे होने के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं.

महाभारत की ऊबड़खाबड़ रचना के पश्चात धीरेधीरे एक अलंकृत शैली विकसित हुई. उस में रामायण लिखी गई और आगे चल कर वह आदर्श काव्य पुस्तक बन गई. इसी लिए इसे 'आदिकाव्य' कहने लगे. काव्य की श्रेष्ठता ही उस के आदिकाव्य कहलाने का मुख्य कारण है. 'आदि' का अर्थ यह नहीं कि यही पहला काव्य है और इस के पहले कोई काव्य था ही नहीं. अपितु 'आदि' से अभिप्रायः है लौकिक संस्कृत में प्रथम कोटि का काव्य, अर्थात इस के पीछे के अन्य काव्य इसी के आधार पर, इसी के आशय पर बने.

यदि यह आदर्शभूत आदिकाव्य महाभारतकार के आगे होता, यदि उस से पहले एक अलंकृत, सुललित शैली विकसित हो चुकी होती तो महाभारत उसी तरह की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अलंकृत काव्य रचना होती. यह नहीं हो सकता था कि पहले सुललित रचना शैली विकसित होती और बाद में महाभारत जैसी रूक्ष एवं अटपटी शैली प्रचलित होती और बाद में एकदम सुललित शैली में कालिदास आदि कवियों की एक लंबी परंपरा चल पड़ती.

इन तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए यही स्वीकारना पड़ता है कि महाभारत की रचना पहले हुई और रामायण की बाद में.

इस के अतिरिक्त एक ऐसा ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध होता है, जिस पर किसी भी प्रकार की टिप्पणी की गुंजाइश नहीं है. महाभारत के समय में ग्रीकों से संपर्क न होने के कारण, महाभारत में मेष आदि 12 राशियों का कहीं नामो-निशान तक नहीं मिलता. इस के विपरीत रामायण में इन राशियों के नाम हैं. इस से विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि रामायण महाभारत की अपेक्षा अर्वाचीन है, बाद की रचना है (देखें, दीक्षित कृत भारतीय ज्योतिष, पृ. 161 तथा 180).

यहीं नहीं, वाल्मीकि रामायण (अयोध्या कांड, सर्ग 109, श्लोक 34) में एक जगह बुद्ध की निंदा करते हुए लिखा है, "यथा हि चोरः स तथा हि बुद्धस्तथागतं नास्तिकमत्र विद्धि."

अर्थात बुद्ध चोर है, तथागत अर्थात बुद्ध को नास्तिक समझो. महात्मा बुद्ध की यह निंदा इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि रामायण महात्मा बुद्ध के बाद रची गई.

महाभारत में बुद्ध का कोई जिक्र नहीं मिलता, अतः वह बुद्ध के पूर्व की रचना है.

भारत के पुरातात्त्विक सर्वेक्षण के भूतपूर्व महानिदेशक डा. बी. बी. लाल ने, जो कि आजकल अयोध्या की खुदाई के कार्य में संलग्न हैं, हाल ही में उद्घोषणा की है कि अब तक खुदाई से प्राप्त तथ्यों से यही सिद्ध होता है कि अयोध्या 800 ई. पू. से ज्यादा पुरानी नहीं, जब कि महाभारत की घटनाएं 900 ई. पू. से पहले की सिद्ध होती हैं.

बृहदारण्यक उपनिषद में वैदेह राजा जनक (सीता का पिता) के दरबार में याज्ञवल्क्य ऋषि से भुज्यु लाह्यायनि नामक ऋषि पूछता है: "क्व पारिक्षिताः अभवन्निति" अर्थात राजा परीक्षित के खानदान का क्या बना? यह राजा परीक्षित अर्जुन का पोता और अभिमन्यु का बेटा था (देखें, महाभारत, आश्व. अध्याय 66). उस परीक्षित के बारे में राम के ससुर जनक के दरबार में प्रश्नों का पूछा जाना इस बात का प्रमाण है कि महाभारत के एक प्रधान पात्र अर्जुन का पोता उस से (जनक से) पहले हो चुका था. प्रसिद्ध इतिहासकार श्री हेमचंद्रराय चौधरी ने तो यहां तक सिद्ध कर दिया है कि जनक के समय परीक्षित की पांचवीं पीढ़ी का निःचक्षु नामक राजा राज्य करता था.

रामायण और महाभारत को इतिहास ग्रंथ कहने वाले रामायण को महाभारत से पहले का इतिहास बताते हैं, जब कि अकाट्य प्रमाण महाभारत को रामायण से पहले का इतिहास (?) सिद्ध करते हैं.

इस तरह हम देखते हैं कि प्राचीन भारतीयों में ऐतिहासिक बोध नाम की चीज नहीं थी. रामायण और महाभारत को इतिहास ग्रंथ कहने वालों के सभी तर्क तथ्यों के सम्मुख ठहरने में असमर्थ हैं. महाभारत रामायण की अपेक्षा पहले रचा गया था. इस की विषयवस्तु का अधिकांश काल्पनिक और पौराणिक है. अंतरंग और बहिरंग परीक्षा में यह पूरा नहीं उतरता. अतः सही अर्थों में यह इतिहास ग्रंथ होने के काबिल नहीं है.

●●●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरिता, मुक्ता व भूभारती में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण लेखों के रिप्रिंट

सेट नं. 1.

प्राचीन हिंदू संस्कृति; शंबूक वध; अतीत का मोह; पुरोहितवाद; हमारी धार्मिक सहिष्णुता; कृष्ण नीति : हमारा नैतिक पतन; ज्ञान की कसौटी पर परलोकवाद; राम का अंतर्द्वंद्व; राम का अंतर्द्वंद्व : आलोचनाओं का उत्तर; भारत में संस्कृति का ब्राह्मणनियंत्रित विस्तार; हिंदू धर्म; संस्कृत; भारतीय नारी की धार्मिक यात्रा; कर्ण; भारतीय नारी की सामाजिक यात्रा; तुलसी और वेद; रामचरितमानस में ब्राह्मणशाही; युगोंयुगों से शोषित भारतीय नारी; भ्रष्टाचार; रामचरितमानस में नारी; सत्यनारायण व्रत कथा; क्या नास्तिक मूर्ख हैं?; गांधीजी का बलिदान; यज्ञोपवीत; जंत्र तंत्र मंत्र; कर्मयोग; गरुड़ पुराण. सेट नं. 1 का मूल्य तीन रुपए.

सेट नं. 2.

ईश्वर, आत्मा, और पाप; कितना मंहगा धर्म; कितना मंहगा धर्म : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर; कितना महंगा धर्मः निर्णय; राम कथा व सीता चरित्र; सरिता और हिंदू समाज; तुलसी साहित्य अनुवादों की सफल नुमाइश के सिवा क्या है?; तुलसी साहित्य : आलोचनाओं व आपत्तियों के उत्तर; हिंदुओं के मंदिर कैसे हों?; रावण; रामचरितमानस के अविश्वसनीय प्रसंग; रामचरितमानस के कुछ असंगत स्थल; श्रीकृष्ण; गीता : कर्मवाद की व्याख्या या कृष्ण का आत्मप्रचार; क्या कौमार्य रक्षा दकियानूसी है?; कृष्ण और राधा; श्रीमद्भागवत; भागवत और भूगोल; समाजवाद बनाम स्वतंत्रता; हिंदू विवाह पद्धति; कामायनी; पुत्रेष्टि यज्ञ; तुलसीदास और हिंदू समाज; हिंदी साहित्य का गलत इतिहास; धनुषयज्ञ; कृष्ण और गोपियां; हमारे देव मंदिर; क्या समाजवाद अनिवार्य है?; विवाहपूर्व यौन संबंध; श्रीकृष्ण अपने जीवन की संध्या में; सताई गई नारी; कृष्ण और कुब्जा. सेट नं. 2 का मूल्य पांच रुपए.

सेट नं. 3.

प्रेम पत्र न लिखिए; डायरी न लिखिए; इसलाम और स्त्री; योगी अरविंद; गीता में अंतर्विरोध; गायत्री मंत्र; फल सब्जी संरक्षण; खट्टे मीठे अचार; सर्दियों के लिए बुनाई; आप का रसोई उद्यान; संसद सदस्य चादर वाला केस; घाटे वाले बालाजी; आखिरत की अटकलें; हिंदी साहित्य की बपौती; फूल मोतिया के; मटर की उन्नत किस्में; बीज उपचार; भीष्म; मुसलिम विवाह; भगवान श्री रजनीचर. सेट न. 3 का मूल्य तीन रुपए.

अध्यापकों, ग्रामसेवकों, व ग्राम पंचायतों के लिए आधा मूल्य.

वी पी. भेजना संभव नहीं. अतः पूरा मूल्य अग्रिम मनीआर्डर से भेजें. अगर रजिस्ट्री से मंगवाना चाहें तब 2/- अतिरिक्त जोड़ कर भेजें.

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाभारत की ऐतिहासिकता

आलोचनाओं का उत्तर

● सुरेंद्रकुमार शर्मा 'अज्ञात'

'महाभारत की ऐतिहासिकता' पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सर्वश्री डा. विमलचंद्र पांडेय, महामहोपाध्याय डा. वा. वि. मिराशी, विद्यानिवास मिश्र, करपात्री स्वामी और गोवर्धन पीठ व पुरी के शंकराचार्य आदि के लेख अथवा वक्तव्य प्रकाशित हुए हैं, जिन में इन लोगों ने महाभारत की ऐतिहासिकता को सिद्ध करने के उद्देश्य से कई तर्क दिए हैं. इन तर्कों पर विचार करना आवश्यक है तभी प्रबुद्ध पाठक किसी निश्चित तथ्य तक पहुंच सकते हैं.

सब से पहले इन लोगों का कहना है कि महाभारत एक इतिहास ग्रंथ है. अंतःसाक्ष्य के मुताबिक भी यह बात सिद्ध होती है—जयो नामेतिहासोऽयम् अर्थात यह 'जय' नाम का इतिहास है. (आदि. 62/20). अतः इसे कल्पना की उपज कहना किसी भी प्रकार उचित नहीं.

यह बात वास्तविकता के नितांत विपरीत है, क्योंकि आदिपर्व के उक्त श्लोक में 'जय' नामक पुस्तक को इतिहास कहा गया है न कि महाभारत को. 'जय' नामक पुस्तक व्यास ने रची थी, जिस की श्लोक संख्या बहुत कम थी. उस में, हो सकता है, महाभारत के युद्ध के संबंध में कुछ तथ्य रहे हों. पर वह पुस्तक आज अप्राप्य है. आज 'महाभारत' नामक जो ग्रंथ मिलता है पहले उस का नाम 'जय' था, फिर 'भारत' हुआ और बाद में 'महाभारत.'

'भारत' में 24,000 श्लोक थे. उस में कथाकहानियां कम थीं. 'महाभारत' में 1,00,000 श्लोक हो गए. इस में बहुत सी कथाकहानियां जोड़ दी गईं. (आदि. अ. 1/101,02). इस कहानी संग्रह को 'जय' नामक इतिहास का नाम ले कर इतिहास सिद्ध नहीं किया जा सकता. 'महाभारत' के प्रत्येक अध्याय का समापक वाक्य (पुष्पिका) स्वयं इसे 'संहिता' (संग्रह) कहता है, न कि इतिहास ग्रंथ.

दूसरे, महाभारत के श्रंतःसाक्ष्य पर यह 'काव्य' सिद्ध होता है, न कि इतिहास. आदिपर्व के निम्नलिखित श्लोक द्रष्टव्य हैं :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उवाच स महातेजा ब्रह्माणं परमेष्ठिनम्. कृतं मयेदं भगवन परमपूजितम्. (61)

त्वया च काव्यमित्युक्तं तस्मात्काव्यं भविष्यति. (72) श्रस्य काव्यस्य कवयो न समर्था विशेषणे. (73) काव्यस्य लेखनार्थाय गणेशः स्मर्यतां मुने. (74, अध्याय 1).

अर्थात वेदव्यास ब्रह्मा से बोले कि "मैं ने यह काव्य रचा है." तब ब्रह्मा ने कहा कि "क्योंकि तू ने इसे स्वयं 'काव्य' कहा है अतः यह काव्य ही कहा जाएगा. कोई कवि इस काव्य की महिमा गाने में समर्थ नहीं. इस काव्य को लिखवाने के लिए गणेश को बुलाइए."

जब स्वयं महाभारत का रचयिता इसे काव्य कह रहा है, 'काव्य' शब्द का प्रयोग इस के लिए बारबार करता है, तब इसे इतिहास कहने का हठ करना अन्याय ही कहा जाएगा. कोई भी बुद्धिमान इसे इतिहास नहीं सिद्ध कर सकता. परवर्ती विद्वानों ने भी इसे इतिहास नहीं कहा. सुबंधु और बाणभट्ट (क्रमशः 600 तथा 640 ई.) ने इसे काव्यग्रंथ कहा है. प्रसिद्ध दार्शनिक कुमारिल भट्ट (700 ई.) ने इसे स्मृतिग्रंथ (धर्मशास्त्रीय) माना है.

इतिहास या धर्मशास्त्र या...

'महाभारत' ने स्वयं अपने को कई जगह धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, मोक्षशास्त्र और कामशास्त्र आदि कहा है :

धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम्.
मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना. (आदि. 62/23).
श्रर्थशास्त्रमिदं प्रोक्तं धर्मशास्त्रमिदं महत.
कामशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना. (श्रादि. 2/83).

अर्थात व्यास ने यह धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, मोक्षशास्त्र श्रौर कामशास्त्र रचा है.

इसे यदि इतिहास ग्रंथ कहना उसे अभीष्ट होता तो वह (व्यास) यह भी लिख सकता था कि यह इतिहास ग्रंथ है. स्पष्ट है, महाभारत के लेखक को इसे इतिहास ग्रंथ कहना श्रभीष्ट न था. अतः इसे इतिहास ग्रंथ कहने का हठ करना लेखक के प्रति अन्याय है.

कुछ महानुभाव श्रद्धांधता के वशीभूत हो कर लिखते हैं, "हिंदुस्तानी शरीर में पश्चिमी श्रात्मा व दिमाग धारण करने वालों के लिए 'महाभारत' इतिहास नहीं, सच्चे हिंदुस्तानियों के लिए तो है."

यह निरा भावुकतापूर्ण कथन है. क्या हर बुद्धिविरोधी बात को सत्य स्वीकारते जाना ही हिंदुस्तानीपन है? क्या पशुपक्षियों श्रौर देवताश्रों व राक्षसों की कहानियों को इतिहास मान लेने से 'हिंदुस्तानी' लोगों का गौरव बढ़ जाएगा?

हिंदुस्तान को आजाद करवाने वालों में सब से बढ़चढ़ कर भाग लेने वाले महात्मा गांधी ने, जिन के हिंदुस्तानीपन पर शक ही नहीं किया जा सकता, 'महाभारत' के विषय में 'यंग इंडिया' में लिखा था, "मेरे लिए 'महाभारत' ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है. इस को इतिहास से सिद्ध नहीं किया जा सकता. इस में सनातन सचाइयों का श्रालंकारिक रूप में काव्यमय वर्णन किया गया है. इस में कवि अपनी

अद्भुत शैली के अनुसार ऐतिहासिक पुरुषों और कथाओं को देवदूत, राक्षस और कुछ का कुछ बना कर वर्णन करता है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गप्पग्रंथ

महाभारत में ऐसीऐसी गप्पें हैं कि कोई भी समझदार हिंदुस्तानी इन्हें इतिहास नहीं मान सकता. उदाहरणार्थ ये चारपांच वर्णन देखिए :

(1) महाराजा शशबिंदु की एक लाख रानियां थीं. हर एक रानी के पेट से एक हजार पुत्र जन्मे. कुल मिला कर राजा के दस करोड़ पुत्र हुए. तब राजा ने एक यज्ञ किया उस ने हर एक पुत्र एकएक ब्राह्मण को दान में दे दिया. हर पुत्र के साथ एकएक सौ रथ और एकएक सौ हाथी दिए. (कुल मिला कर दस अरब रथ और दस अरब हाथी बने.) इस के अलावा हर पुत्र के साथ सौसौ युवतियां दान कीं. (दस अरब युवतियां हो गईं.) (द्रोण. अ. 65 तथा शांति. अ. 208).

सोचने की बात यह है कि यदि एक राजा के दस करोड़ पुत्र हों और उन के साथ दस अरब युवतियां हों तो शेष भारत की जनसंख्या तब कितनी होगी? दस अरब रथ और दस अरब हाथी एक ही राजा के पास हों तो बाकी राजाओं के हाथियों और रथों को मिला कर कितनेकितने रथ और हाथी भारत में रहे होंगे? क्या यह काल्पनिक विवरण नहीं?

(2) इसी अध्याय में एक और गप्प देखिए. एक राजा हर रोज प्रातः एक लाख साठ हजार गौएं, दस हजार घोड़े और एक लाख स्वर्ण मुद्राएं दान दिया करता था. यह काम वह लगातार 100 वर्ष करता रहा.

एक लाख साठ हजार को 365 से गुणा करो. तत्पश्चात 100 से गुणा करने पर जो गुणनफल होगा, उतनी गौएं अकेले उक्त राजा ने दान कीं. इसी प्रकार उस ने 10000x365x100 = 365000000 घोड़े तथा 100000x365x100 = 3650000000 स्वर्ण मुद्राएं दान कीं.

(3) महाभारत के युद्ध में पांडवों व कौरवों दोनों ओर से अठारह अक्षौहिणी सेना के लड़ने की बात कही गई है. एक अक्षौहिणी में 21870 रथ, 21870 हाथी, 65610 घुड़सवार और 109350 पदाति होते हैं. इन्हें 18 से गुणा करने पर लगभग 4 लाख रथ, 4 लाख हाथी, 12 लाख घुड़सवार और 20 लाख पदाति बन जाते हैं. इन का कुरुक्षेत्र के मैदान में एकसाथ लड़ना बिलकुल असंभव बात है. लगभग 40 लाख रथों, हाथियों घुड़सवारों तथा पदातियों वाली चतुरंगिणी सेना के चलनेफिरने व ठहरने के लिए जितना स्थान अपेक्षित है, वह कुरुक्षेत्र के मैदान से बहुत ज्यादा विशाल और विस्तृत होना चाहिए.

चार लाख हाथियों और 12 लाख घोड़ों की बात भी अपनेआप में एक गप्प से अधिक नहीं.

(4) महाभारत के युद्ध में पांडवों की सेना के प्रधान सेनापति (उद्योग, 157/13) धृष्टद्युम्न और महाभारत की नायिका द्रौपदी की उत्पत्ति का जो विवरण आदिपर्व (अध्याय 166/39 से 44) में दिया गया है उस में इतिहास वाली कोई बात नहीं. दोनों की उत्पत्ति हवनकुंड से बताई गई है. महर्षि याज हवन कर रहे थे और जल रही आग में से धृष्टद्युम्न और द्रौपदी निकल आए.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह विवरण एक जोरदार गप्प से अधिक नहीं. क्या कभी जल रही आग की लपटों से भी आदमी पैदा होते हैं? आग की लपटों से तो जीवित आदमी भी जल कर मर जाता है. इस के नितांत विपरीत वर्णन करने वाला 'महाभारत' इतिहास कैसे स्वीकारा जा सकता है?

(5) महाभारत के प्रतिपक्षी थे—दुर्योधन और उस के 99 भाई. ये धृतराष्ट्र के पुत्र थे. इन की उत्पत्ति के बारे में इस तथाकथित इतिहास में लिखा है कि धृतराष्ट्र की पत्नी गांधारी को गर्भ तो ठहर गया लेकिन दो वर्ष बच्चा नहीं हुआ. इसी समय उसे खबर मिली कि उस की देवरानी कुंती के पुत्र जन्मा है. ईर्ष्यावश वह चिल्लाई और दोहत्थड़ मारमार कर अपना पेट पीटने लगी. इस से उस का गर्भपात हो गया.

ऋषि व्यास ने उस के पेट से निकले मांसपिंड को धुलवाया. धुलने ही में उस के सौ टुकड़े हो गए. उन सौ टुकड़ों को उस ने घी के सौ घड़ों में अलगअलग रखवाया. कुछ समय पश्चात उन घड़ों से सौ लड़के निकले. एक महीने पश्चात एक लड़की निकली. ये सौ लड़के दुर्योधन और उस के भाई थे.

'महाभारत' के प्रधान पात्रों के जीवनवृत इतने कल्पनामय और अविश्वसनीय हैं कि उसे इतिहास कहना और उसे इतिहास ग्रंथ न मानने वाले स्वस्थ दिलदिमाग वाले व्यक्ति को 'पश्चिमी आत्मा वाला हिंदुस्तानी शरीर' कह कर तिरस्कृत करने की कोशिश करना स्वयं अपने को बुद्धिमानों के मध्य उपहासास्पद बनाना है.

परंपरावाद

डा. विमलचंद पांडेय (अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्व विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़) का कहना है कि इतिहास का स्रोत परंपरा होती है, अतः हमें भी इस पर निर्भर करना चाहिए. परंपरा 'महाभारत' को इतिहास मानती आ रही है, अतः 'महाभारत' को इतिहास मानना चाहिए.

यह तर्क बहुत बचकाना है. कोई ठोस तर्क न दे सकने पर डा. पांडेय ने डूबने की स्थिति में तिनके का सहारा लिया है. परंपरा इतिहास के कई स्रोतों में से एक स्रोत तो है, लेकिन यह इतिहास का एकमात्र स्रोत नहीं है.

परंपरावादी डा. पांडेय ने महाभारत युद्ध की तिथि 1100 ई पू. निश्चित की है, जबकि परंपरा के अनुसार यह युद्ध आज से 5000 वर्ष से भी ज्यादा पहले हुआ. उन्होंने स्वयं परंपरागत इस विश्वास को सही नहीं माना कि यह युद्ध 'द्वापर युग' के अंत और 'कलियुग' के शुरू में हुआ था. स्वयं परंपरा का उल्लंघन कर दूसरों को परंपरा की दुहाई दी जाती है! यह इस बात का प्रबल प्रमाण है कि परंपरा इतिहास का पूर्णतः विश्वसनीय स्रोत नहीं है.

दूसरे, परंपरा तो जयद्रथ वध के प्रसंग में, यह भी मानती है कि युद्धक्षेत्र में कृष्ण ने अपने हाथ की ओट से सूर्य को अदृश्य कर दिया था. इसी प्रकार परंपरा यह भी स्वीकारती है कि सूर्य धरती पर आया, उस ने कुंती से नियोग कर के कर्ण नामक पुत्र उत्पन्न किया और सूर्यलोक को लौट गया (आदि पर्व. अ. 110). इतना ही नहीं परंपरा यह भी कहती है कि अर्जुन स्वर्ग (?) में इंद्र देवता के पास शिक्षा ग्रहण करने गया था.

परंपराभक्त तो यह भी मानते हैं और कहते हैं (यद्यपि यह 'महाभारत' में भी नहीं है) कि भीमसेन ने हाथी उछाल कर आकाश में फेंके थे और वे आज तक आकाश में घूम रहे हैं. कई तो इस से भी ज्यादा बढ़चढ़ कर गप्प मारते हुए कहते हैं कि चंद्रयात्रियों ने राकेट में बैठे हुए उन्हें देखा भी है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी तरह परंपरा यह भी कहती है कि अश्वत्थामा पिछले 5000 वर्षों से मारामारा जंगलों में घूम रहा है. कई लोग इसे सत्यापित करने की गरज से किसी साधुसंत का नाम ले कर यह भी कह देते हैं कि अमुक महात्मा को अश्वत्थामा हरिद्वार के पास मिला था और अमुक को केदारनाथ के पास.

परंपरा यह भी कहती है और 'महाभारत' में भी लिखा है कि 'महाभारत' को लिखने के लिए पशु और मनुष्य के मिश्रित रूप गणेश देवता को बैठाया गया. गणेश का जीवन वृतांत अपने में बहुत बड़ी गप्प है. क्या इस तरह की बेबुनियाद और निरी बचकानी कल्पनाओं को डा. पांडेय इतिहास का स्रोत स्वीकारते हैं? यदि नहीं, तो फिर वह परंपरा की दुहाई दे कर 'महाभारत' को इतिहास स्वीकारने को क्यों कहते हैं?

कुछ लोगों ने महात्मा गांधी को उद्धृत करते हुए कहा है कि 'महाभारत' में सत्य और असत्य का, धर्म और अधर्म का संघर्ष चित्रित किया गया है. इस में असत्य पर सत्य की और अधर्म पर धर्म की विजय दिखाई गई है. अतः यह नैतिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है.

यह बात सही नहीं है, क्योंकि विजयी पांडवों को सत्य व धर्म का प्रतीक नहीं माना जा सकता. जो लोग जुए में दो बार हारने के बाद राज्य को हथियाने के लिए अपने पूज्य गुरुओं और संबंधियों को मार सकते हैं, जो लोग एक ही स्त्री को साझी संपत्ति की तरह प्रयोग करते हों, जिन्होंने कृष्ण की 'योगमाया' (?) और नीति के नाम पर विरोधी को मारने के लिए हर छल किया हो, उन्हें सत्य और धर्म के प्रतीक मानना सरासर गलत है. 'महाभारत' की तरह 'रामायण' की भी रूपक के तौर पर व्याख्या की जाती है, जो बिलकुल गलत है. राम को किसी भी प्रकार सत्य और धर्म तथा रावण को किसी भी प्रकार असत्य और अधर्म का प्रतीक सिद्ध नहीं किया जा सकता.

ऐसे में महात्मा गांधी की रूपक वाली बात भी मान्य नहीं हो सकती. कुछ लोगों का कहना है कि मैं ने अपने लेख में अयोध्या कांड (109/34) का जो श्लोक उद्धृत किया है उस का अर्थ सही नहीं. उस में 'बुद्धः' शब्द का अर्थ 'बुद्धि' है, 'महात्मा बुद्ध' नहीं, क्योंकि राम महात्मा बुद्ध से पहले हो चुके थे.

राम पहले या बुद्ध?

विवादास्पद श्लोक इस प्रकार है : 'यथा हि चोरः स तथा हि बुद्धस्तथागतं नास्तिकमत्र विद्धि'. इस का अर्थ मैं ने किया था— 'जैसे चोर है वैसे ही बुद्ध है. तथागत (बुद्ध) नास्तिक है.' अपने इस अर्थ को सही सिद्ध करने के लिए मैं पुराने और नए टीकाकारों के अर्थ यहां प्रस्तुत करता हूं.

(1) 15 वीं सदी की गोविंदराज कृत 'रामायणभूषण' नामक संस्कृत टीका में उक्त स्थल की व्याख्या करते हुए लिखा है: तथागतम् बुद्धतुल्यम् (तथागत का अर्थ है—बुद्ध जैसे).

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(2) 18वीं सदी के प्रथम चरण में हुए व्याकरण के महान विद्वान नागेश भट्ट ने 'रामायण तिलक' नामक संस्कृत टीका में लिखा है : 'बौद्धादयो राज्ञश्चोरवद् दंड्याः इत्याह यथा हीति बुद्धो बुद्ध मतानसारी यथा चोरवद दंड्यः इति हि प्रसिद्धम्.' (बौद्धमत को मानने वालों को राजा चोर की तरह दंड दें. बुद्ध का अर्थ है—बौद्ध को मानने वाला.)

(3) गीता प्रेस, गोरखपुर से हिंदी टीका सहित छपी 'वाल्मीकिरामायण' में उक्त श्लोक की टीका में लिखा है : 'जैसे चोर दंडनीय होता है, उसी प्रकार (वेद-विरोधी) बुद्ध (बौद्ध मत का अनुयायी) भी दंडनीय है. तथागत (नास्तिक विशेष) और नास्तिक (चार्वाक) को भी यहां इसी कोटि में समझो.' (श्रीमद्वाल्मीकिरामायण, संवत 2017, पृष्ठ 468-69).

इन प्राचीन और अर्वाचीन टीकाकारों के अतिरिक्त डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी और चंद्रशेखर पांडेय आदि विद्वानों ने अपनी कृतियों 'हिंदी साहित्य की भूमिका' और 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' में यही अर्थ लिया है.

ऐसे में यह कहना सरासर गलत है कि श्लोकार्थ मैं ने बदला है. जहां तक मैं जानता हूं इस श्लोक में 'बुद्ध' का अर्थ 'बुद्धि' किसी भी टीका में नहीं और न ही 'बुद्धि' अर्थ करने से कोई सिरपैर बनता है. आलोच्य श्लोक निस्संदेह महात्मा बुद्ध की ओर संकेत करता है. तथागत भी बुद्ध का ही नाम है. 'बुद्ध' का अर्थ 'बुद्धि' करने पर भी बात बनती नहीं. स्पष्ट है कि 'रामायण' बुद्ध के बाद की रचना है.

महाभारत की तिथि

कुछ लोगों को इस बात पर आपत्ति है कि मैं ने 'महाभारत' की तिथि 1100 ई. पू. से 900 ई. पू. के मध्य मानी है. उन का कहना है कि ज्योतिष से 'महाभारत' की सही तिथि काफी प्राचीन सिद्ध होती है.

यह बात सही नहीं कि ज्योतिष के द्वारा 'महाभारत' की सही तिथि निश्चित हो सकती है. क्योंकि ज्योतिष के अलगअलग ग्रंथों के आधार पर यह तिथि भी अलगअलग बनती है. आर्यभटीय के अनुसार यह 3102 ई. पू. सिद्ध होती है तो वराहमिहिर के अनुसार 2449 ई. पू. श्रीमोदक अपने ज्योतिष के अनुसार 5025 ई. पू. बताते हैं तो शंकर बालकृष्ण दीक्षित अपने ज्योतिष के अनुसार 1421 ई. पू. क्या इन में कहीं एकता है? क्या ऐसे में ज्योतिष की बैसाखी के सहारे 'महाभारत' की तिथि तक पहुंचा जा सकता है?

दूसरे 'महाभारत' एक काल की रचना नहीं है, इस में भिन्नभिन्न कालों के ग्रह संकेत मिलते हैं. ऐसे में किस ग्रह संकेत को प्रामाणिक माना जाए और क्यों?

शेष रहा मेरा प्राचीन तिथि को न मानने का प्रश्न. वर्तमान में उपलब्ध 'महाभारत' 600 ई. पू. की भी रचना सिद्ध नहीं होता. इस में लोहे के अस्त्रशस्त्रों का वर्णन है. पुरातत्ववेत्ता डा. हंसमुख धीरजलाल सांकलिया का कहना है कि भारत में लोहे के शस्त्रों का निर्माण 600 ई. पू. से प्राचीन नहीं. ऐसे में 'महाभारत' 900 ई. पू. की अपेक्षा 600 ई. पू. की रचना रह जाती है.

डा. वा. वि. मिराशी का कहना है कि लोहा भारत में प्राचीन काल से प्रचलित है. ऋग्वेद में 'अयस्' (लोहे) का वर्णन है. वहां नगरों की रक्षा व्यवस्था

के लिए इस का प्रयोग किया जाता था. अतः यह कहना कि 600 ई. पू. से पहले भारत के लोग लोहे से परिचित न थे सरासर गलत है.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डा. मिराशी संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान हैं, परंतु 'अयस्' का अर्थ करते हुए गलती खा गए हैं. 'अयस्' शब्द आजकल संस्कृत में लोहे के लिए प्रयुक्त होता है, लेकिन पहले इस के कई अर्थ रहे हैं—चलना, धातु, स्वर्ण (देखें: आप्टे कृत 'दि प्रैक्टिकल संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी' 1912, पृष्ठ 142) अतः वेदों में 'अयस्' शब्द की विद्यमानता इस बात को सिद्ध नहीं करती कि तब लोग लोहे से परिचित थे और लोहे के शस्त्रों का प्रयोग होता था. मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में भी तांबे और कांसे के ही हथियार मिले हैं, न कि लोहे के. पुरातात्त्विक साक्ष्य के अनुसार 'महाभारत' में वर्णित लोहे के शस्त्रास्त्र 'महाभारत' को 600 ई. पू. से ज्यादा पहले की रचना सिद्ध नहीं होने देते.

कुछ लोगों को 'महाभारत' को 'रामायण' का पूर्ववर्ती लिखने पर आपत्ति है. उन का कहना है कि 'महाभारत' में राम के विषय में उपाख्यान मिलता है, जबकि 'रामायण' में 'महाभारत' का कोई वर्णन नहीं. अतः 'महाभारत' परवर्ती काल की रचना है और 'रामायण' पूर्ववर्ती काल की.

यह बात मान्य नहीं हो सकती. इस तरह की बातें कहने वाले इस तथ्य से अपरिचित प्रतीत होते हैं कि 'रामायण' का और 'महाभारत' में दिए राम संबंधी उपाख्यान का आधार 'दशरथजातक' नामी बौद्ध ग्रंथ है. एशियाटिक सोसाइटी की बैठक में पढ़े अपने शोधपत्र में डा. सुनीतिकुमार चटर्जी ने इस तथ्य का सविस्तार वर्णन किया है. हिंदू इतिहास के इतिहासकार डा. रमेशचंद्र मजुमदार ने भी इस मत को स्वीकार किया है.

'दशरथजातक' का राम अपनी बहन सीता से विवाह करता है. 'महाभारत' के राम विषयक उपाख्यान में उस बौद्ध कथानक का हिंदूकरण हुआ वहीं से प्रेरणा ले कर वाल्मीकि ने अपना महाकाव्य रचा. अतः 'महाभारत' में राम उपाख्यान का होना इस बात का परिचायक नहीं है कि रामायण 'महाभारत' से पहले हुई थी.

एक महाशय (3/20) के 'कर्मणैव संसिद्धिमास्थिताः जनकादयः' (जनक आदि ने कर्म के द्वारा ही सिद्धि प्राप्त की) के आधार पर कहते हैं कि "जनक 'महाभारत' से पहले हो चुके थे. वह राम के ससुर थे, अतः उन का समकालीन राम भी पहले हो चुका था. स्पष्ट है, 'महाभारत' बाद में हुआ और 'रामायण' पहले."

मूल व प्रक्षेप में अंतर

यह बात भी सही नहीं है. 'महाभारत' में समयसमय पर प्रक्षेप जोड़े गए हैं. उस के तीन परिवर्धनों का तो स्पष्टतः पता चलता ही है. इस तरह के परिवर्धन 13वीं सदी तक बराबर होते रहे हैं. गीता भी 'महाभारत' में बाद में जोड़ी गई. गीता कृष्ण और अर्जुन के बीच युद्धभूमि में हुआ संवाद नहीं है. स्वयं गीता का यह श्लोक इस बात का प्रबल प्रमाण है अध्याय 18 के 70 वें श्लोक में कहा गया है: 'अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः' (और जो हमारे इस धार्मिक संवाद को पढ़ेगा). यहां प्रयुक्त हुआ 'अध्येष्यते' (पढ़ेगा) शब्द विशेष ध्यान देने योग्य है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

युद्ध में यदि कृष्ण और अर्जुन के बीच हुआ यह संवाद वास्तविक होता तो इस के लिए 'अध्येष्यते' (पढ़ेगा) शब्द प्रयुक्त नहीं हो सकता था, क्योंकि तब वे लिख कर अपनी बातें एकदूसरे को नहीं बता रहे थे. यहां 'अध्येष्यते' शब्द इस बात का सूचक है कि गीता की रचना किसी व्यक्ति ने बाद में कृष्णअर्जुन संवाद के रूप में की. फिर किसी समय 'महाभारत' के कथानक में इसे मिला दिया गया. इसी लिए 'महाभारत' की ऊबड़खाबड़ भाषा से गीता की सुललित एवं प्रफुल्ल भाषा का कोई मेल नहीं दीख पड़ता.

जिस ने गीता की रचना की उस ने 'अध्येष्यते' शब्द का प्रयोग इसी लिए किया क्योंकि वह लिखित रूप में पुस्तक रच रहा था.

विद्वानों ने तो यह सिद्ध भी कर दिया है कि गीता की रचना 467 ई. में पाटलिपुत्र के सिंहासन पर बैठने वाले सम्राट बालादित्य (नरसिंह गुप्त) के समय में अमात्य बादरायण या उस के किसी शिष्य ने की थी. (देखें: धर्मानंद कोसंबी कृत 'भारतीय संस्कृति और अहिंसा' पृष्ठ 156-7).

ऐसे में, गीता में आए जनक के उद्धरण के आधार पर 'महाभारत' 'रामायण' के बाद की रचना सिद्ध नहीं हो सकता.

विदेह राजा जनक का काल

वस्तुत: 'महाभारत' पहले हुआ और 'रामायण' बाद में हुई. उपनिषदों का वैदिक साहित्य में बहुत महत्त्व है. इन में मिलावट भी नहीं के बराबर है. इन के रचयिता दार्शनिक लोग थे. उन्होंने जो ऐतिहासिक संकेत जुटाए हैं वे काफी विश्वसनीय हैं. बृहदारण्यक उपनिषद (जिस की रचना बुद्ध से तीन पीढ़ी बाद हुई) में विदेह राजा जनक के दरबार में याज्ञवल्क्य ऋषि से अर्जुन के पौत्र परीक्षित के वंशजों के बारे में प्रश्न पूछा जाता है, जो इस बात का संकेत है कि जनक से पहले परीक्षित और 'महाभारत' हो चुका था. इस तरह जनक और 'रामायण' बुद्धोत्तरकालीन सिद्ध होते हैं.

बुद्ध से पूर्ववर्ती काल में परीक्षित के होने की बात एक अन्य प्रमाण से भी सिद्ध होती है. अथर्ववेद चारों वेदों में सब से बाद की रचना है. इस के अंतिम सूक्त तो बहुत ही बाद के हैं. इस के कांड 20, सूक्त 127 के 7वें से ले कर 10वें मंत्र तक कुरुवंश में हुए राजा परीक्षित के राज्य का वर्णन है. यहां यह ध्यान रहे कि कौरव और पांडव कुरुवंश के थे, इसी लिए अथर्ववेद ने परीक्षित को कुरुवंशी लिखा गया है.

'महाभारत' और अथर्ववेद की भाषा में भी काफी समता नजर आती है. 'महाभारत' में वैदिक छंद तथा शब्दावली, गद्यपद्य का मिश्रण, अपाणिनीय प्रयोग, आदि कई चीजें मिलती हैं जो इसे अथर्ववेद के अंतिम भाग की रचना के समय को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं 'महाभारत' के कई पात्रों के नाम वेदों में मिलने की बात स्वयं डा. पांडेय और डा. वा. वि. मिराशी भी स्वीकारते हैं

श्री हेमचंद्र राय चौधरी ने 'पोलिटिकल हिस्ट्री आफ एनशेंट इंडिया' (पृष्ठ 16-17) में लिखा है कि राजा परीक्षित का राज्यकाल ई. पू. 9वीं शताब्दी से पहले का नहीं हो सकता.

यह काल निर्धारण उसी स्थिति में स्वीकार किया जा सकता है जब या तो

यह स्वीकार कर लिया जाए कि महाभारत युद्ध में लोहे के शस्त्रों का वर्णन बाद की मिलावट है, अन्यथा 600 ई. पू. से पहले लोहे का अस्तित्व सिद्ध किया जाए.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कुछ लोगों का कहना है कि जनक और उस का दामाद राम बुद्ध से दो पीढ़ी पहले हुए थे. हेमचंद्र राय चौधरी ने जनक को बुद्ध से दो पीढ़ी पहले माना है.

यह मान्यता सही नहीं. जब 'रामायण' असंदिग्ध शब्दों में बुद्ध को पूर्ववर्ती के रूप में उद्धृत करती है तब उसे 'रामायण' के नायक के ससुर से दो पीढ़ी बाद का किस आधार पर कहा जाता है? अतः श्री हेमचंद्र की यह मान्यता गलत है.

पात्र ऐतिहासिकता की कसौटी नहीं

कुछ लोग 'महाभारत' की ऐतिहासिकता को प्रमाणित करने के लिए यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि 'महाभारत' में कुरुक्षेत्र तथा अन्य ऐतिहासिक स्थलों के साथ-साथ कृष्ण, कौरवों, पांडवों तथा उस समय के अन्य कई ऐतिहासिक व्यक्तियों का वर्णन आता है. अतः 'महाभारत' की ऐतिहासिकता स्वतः सिद्ध है.

यह तर्क सही नहीं, क्योंकि किसी पुस्तक में किसी ऐतिहासिक व्यक्तित्व व ऐतिहासिक स्थान का वर्णन मिलना इस बात का प्रमाण नहीं है कि वह पुस्तक इतिहास ग्रंथ है. 'पृथ्वीराजरासो' में पृथ्वीराज नामक ऐतिहासिक व्यक्तित्व का वर्णन मिलता है. उस में कई वास्तविक स्थानों का भी नामोल्लेख है. लेकिन इतना होने पर भी विद्वान उसे इतिहास ग्रंथ नहीं मानते, क्योंकि उस में वर्णित वृत्तांत अन्य साधनों से प्राप्त तथ्यों से मेल नहीं खाते. यही हाल 'महाभारत' का है. इस में यद्यपि भारत के मानचित्रों में विद्यमान कुरुक्षेत्र आदि स्थलों का वर्णन है, तथा कृष्ण आदि ऐतिहासिक व्यक्तियों की बात इस में मिलती है तथापि केवल इसी आधार पर इसे इतिहास ग्रंथ नहीं माना जा सकता, क्योंकि इस में वर्णित व्यक्तियों के इतिवृत्त बिलकुल असंभाव्य हैं. वे दैवी एवं अलौकिक हैं. इन्हें इतिवृत्त कहना इतिहास के साथ अन्याय करने के समान है, क्योंकि इतिहास तथ्यों का संकलन करता है और उन्हें एक समय तालिका में प्रस्तुत करता है.

महाभारत को इतिहास ग्रंथ कहना तो दूर रहा, इतिहास पर आधारित ग्रंथ कहना भी उचित नहीं.

मेरा ध्यान कुछ मठाधीशों और धर्म के स्वयंभू ठेकेदारों की अखबारों में प्रकाशित उन चुनौतियों की तरफ आकृष्ट किया गया है जिन में महाभारत को सोलह आने सच्चा इतिहास ग्रंथ न मानने वालों को ललकारा गया है.

मेरे विचार में ये ललकारें तब कोई अर्थ रखतीं जब ये मठाधीश महाभारत की ऐतिहासिकता पर लगाए अमिट प्रश्नचिह्नों को मिटाने के लिए कोई ठोस तर्क जुटाते. अन्यथा 'धार्मिक' मंचों पर से ललकारना क्या माने रखता है? बिना किसी तर्क के 'महाभारत' को दैवी प्रकाशन सत्य कह कर लोगों की भावनाएं भड़काना और सत्य के अन्वेषक विद्वानों को अपमानित करना 'धर्मगुरुओं' को शोभा नहीं देता. ●●●

83/2 विवि:83:877:4 दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप के परिवार के लिए श्रेष्ठ तीन पत्रिकाएं ...

आप की पत्नी
व आप के लिए

सरिता

जीवन की गुत्थियां सुलझाने वाली कहानियां, निर्भीक व निष्पक्ष लेख, समीक्षाएं, हास्य-व्यंग्य व भावभीनी कविताएं. संभ्रांत परिवारों के लिए विशेष रूप से संपादित. रु. 2

आप के युवा
बेटेबेटियों के लिए

मुक्ता

युवा वर्ग की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने वाली कहानियां, मार्गदर्शन करने वाले लेख और अन्य प्रेरक रचनाओं से भरपूर युवकयुवतियों की अपनी पत्रिका. रु. 2

आप के
नन्हेमुन्नों के लिए

चंपक

नन्हेमुन्नों को साहसी व चरित्रवान बनाने वाली पत्रिका, परियों और जादूटोनों की कहानियों से अलग नए युग की नई कहानियां, कविताएं व लेख—मोहक साज-सज्जा के साथ. रु. 1

दिल्ली प्रेस की सचेतक पत्रिकाएं आधुनिक परिवार का मनोरंजन तो करती ही हैं, उसे सुख, शांति व समृद्धि की राह भी दिखाती हैं.

आप भी आज से ही अपने परिवार के लिए खरीदना शुरू कर दीजिए.

तीनों पत्रिकाओं के नमूने का सेट मंगाने के लिए निम्न कूपन के साथ एक रुपए के डाक टिकट/पोस्टल आर्डर भेजिए :

दिल्ली प्रकाशन वितरण, नई दिल्ली-55.

मुझे नमूने का सेट भेजिए.

नाम ____________

पता ____________

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दहेज और हिंदू धर्म

• सुरेंद्रकुमार शर्मा अज्ञात

हिंदुओं के धर्मग्रंथ दहेज का मूल कारण

दहेज की समस्या ज्वलंत होने के साथसाथ देशव्यापी है. देश के इस या उस भाग में दहेज की बलिवेदी पर बलि चढ़ने वाली लड़कियों के रोंगटे खड़े कर देने वाले दुखद समाचार आए दिन प्रकाशित होते रहते हैं. बहुत सी घटनाएं समाचारपत्रों में छपने से रह भी जाती हैं.

इस समस्या को हल करने के लिए जो प्रयास किए जा रहे हैं, वे इस विषवृक्ष के सिर्फ पत्तों को काटने के समान हैं. इस की जड़ें बहुत गहरी पैठी हुई हैं, जिन्हें हिंदू धर्मग्रंथों से खाद और पानी मिल रहा है.

वेद दहेज के समर्थक

हिंदू धर्मग्रंथों में सब से प्राचीन वेद माने जाते हैं. उन में दहेज देने के वर्णन आते हैं. उदाहरण के लिए निम्नलिखित स्थल देखे जा सकते हैं :

(क) उपश्रवं हि भूरिदावत्तरा वां वा घा स्यालात. (ऋग्वेद 1-109-2)

अर्थात इंद्र और अग्नि, सुना है तुम साले (कन्या का भाई) की अपेक्षा भी अधिक और बहुविध धन देते हो,

(ख) एतं वां स्तोममश्विनवकर्मातक्षाम न्यमृक्षाम योषणां न मर्ये नित्यं न सूनुं तनयं दधानाः (ऋ. 10-39-14)

अर्थात हे अश्विकुमारो, दामाद को कन्या देने के समय जैसे लोग उसे वस्त्राभूषण से अलंकृत कर के देते हैं, वैसे ही हम ने इस स्तोत्र को अलंकृत किया है. हमारे पुत्रपौत्र सदा प्रतिष्ठित रहें.

(ग) सूर्याया वहतुः प्रागात्सविता यमवासृजत्। अघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्युह्यते. (10-85-13)

अर्थात पतिगृह को जाते समय सूर्य ने सूर्या को जो चादर दी थी, वह आगेआगे चली. मघा नक्षत्र के उदयकाल में चादर (उपढौकन) के अंग स्वरूप विदाई में दी गई गायों को डंडे से हांका जाता है और अर्जुनी अर्थात पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उस चादर को रथ से ले जाया जाता था.

(घ) सूर्याया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत्। मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते (अथर्व. 14-1-13)

अर्थात सविता ने सूर्या को दहेज दिया. फाल्गुनी नक्षत्र में वृषभों से रथ को खींचा जाता तथा मघा नक्षत्र में उन्हें चलाया जाता है. (आचार्य गोपालप्रसाद, अथर्ववेद, खंड दो, पृ. 182 तथा पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, अथर्ववेद (खंड दो), पृ. 716)

(ऋग्वेद प्रथम मंडल, सूक्त 125 में आता है कि राजा स्वनय ने अपनी पुत्री के विवाह के अवसर पर अपने दामाद कक्षीवत को आभूषणों से अलंकृत 10 कन्याएं, 10 रथ, चारचार के दल में चलने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले सुदृढ़ शरीर के घोड़े, [illegible] बरतन, बकरियां, भेड़ें, 100 निष्क (कंठाभूषण), 1,060 गौएं और एक सौ बैल दिए. (देखें, ऋग्वेद 1-125-1 और 1-126-2/3 पर सायणभाष्य, तथा शौनक ऋषि कृत बृहत् देवता 3/146-150)

दहेज कम व दोषपूर्ण होने पर उस की क्षतिपूर्ति करने का भी अथर्ववेद में उल्लेख आता है. अथर्ववेद (14.2.66) में लिख है कि कैसे एक विशेष प्रकार का कंबल दे कर क्षतिपूर्ति की गई :

यद् दुष्कृतं यच्छमलं विवाहे वहतौ च यत्।
तत् संभलस्य कम्बले मृज्महे दुरितं वयम्.
(अथर्व. 14-2-66)

अर्थात विवाह के समय या दहेज में जो दोष बना है, इसे हम मधुर बोलने वाले के कंबल में स्थित करते हैं. (आचार्य गोपाल प्रसाद, अथर्ववेद, खंड दो, पृ. 206 तथा पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, पृ. 735)

वैदिक काल से दहेज देने की यह परंपरा अक्षुण्ण चली आ रही है. बौद्ध साहित्य में भी इस के प्रचलित होने के प्रमाण मिलते हैं.

अपरिमित दहेज

वड्ढसूकर जातक (283) से पता चलता है कि जातक युग का गृहस्थ भी दहेज देता था. प्रसेनजित राजा के पिता महाकोसल ने बिंबसार राजा को दहेज में एक लाख की आय के गांव अपनी कन्या के विवाह के अवसर पर दिए थे.

धनंजय सेठ ने अपनी कन्या के विवाह में जो दहेज दिया था, वह अपरिमित था. इस दहेज की सूची इस प्रकार है: नौ करोड़ रुपए मूल्य के आभूषण, 5,400 गाड़ियों पर लदा धन, 500 गुलाम स्त्रियां और एक सौ सुंदर रथ. (देखें : बुद्धचर्या विशाखाचरित, चतुर्थ खंड, पृ. 325)

हिंदू धर्मशास्त्रों में दहेज 'स्त्रीधन' शब्द से अभिहित किया गया है. स्त्रीधन एक पारिभाषिक शब्द है. मनु ने इस की परिभाषा देते हुए लिखा है :

अध्यग्न्यध्यावाहनिकं दत्तं च प्रीतिकर्मणि।
भ्रातृमातृपितृ प्राप्तं षड्विधं स्त्रीधनं स्मृतम्॥
(मनु. 9/194)

अर्थात विवाह के समय अग्नि के समक्ष जो कुछ दिया जाए, पिता के घर से पति के घर लाई जा रही कन्या को जो कुछ दिया जाए, स्नेहवश जो कुछ दिया जाए तथा जो कुछ भ्राता, माता या पिता से उपहारस्वरूप प्राप्त हुआ हो, वह छः प्रकार का स्त्रीधन है.

यह 'स्त्रीधन' 'दहेज निषेध अधिनियम, 1961' की धारा दो में परिभाषित दहेज का लगभग पर्याय है. इस अधिनियम में "दहेज से तात्पर्य ऐसी किसी भी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति (सिक्योरिटी) से है जो :

(क) किसी विवाह में एक पक्ष द्वारा उस विवाह में दूसरे पक्ष को, या

(ख) किसी विवाह में एक पक्ष के मातापिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उस विवाह में दूसरे पक्ष को या अन्य को दी गई हो."

दहेज की ये वस्तुएं विवाह के प्रतिफल के रूप में उस विवाह के समय या उस से पूर्व या उस के पश्चात प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दी जाती हैं या उन के दिए जाने के लिए करार किया जाता है." (देखें : श्री मोहनजी लिखित 'हिंदू विधि,' पृ. 477)

चौथीपांचवीं सदी में हुए एक धर्मशास्त्रकार कात्यायन ने लिखा है कि माता, पिता, पति, भ्राता एवं दूसरे संबंधियों को चाहिए कि वे यथाशक्ति 2,000 पण (तत्कालीन सिक्का) तक स्त्री को स्त्रीधन दें. हां, अचल संपत्ति न दें :

पितृमातृपतिभ्रातृ ज्ञातिभिः स्त्रीधनं स्त्रियै। यथाशक्त्या द्विसहस्राद् दातव्यं स्थावरादृते. (कात्यायन).

कात्यायन के इस मत को 19वीं शताब्दी तक रचे जाते रहे धर्मशास्त्रों में उद्धृत किया गया है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देखें : दायभाग, 4/1/10 (1100-1150 ई.), स्मृति चंद्रिका 2, पृ. 281. (1200-1225 ई.), पराशर माधवीय 3, पृ. 548 (1300-1380 ई.), व्यवहार मयूख, पृ. 154 (1610-1645 ई.), बालम्भट्टी (1730-1820 ई.)

इस की व्याख्या करते हुए 'स्मृतिचंद्रिका' एवं 'व्यवहारमयूख' में कहा गया है कि दो हजार पणों की सीमा वार्षिक भेंट तक ही है. यदि भेंट एक ही बार दी जाए तो अधिक भी दिया जा सकता है और अचल संपत्ति भी दी जा सकती है.

शंख स्मृति (600 से 900 ई. के मध्य कहीं) का मत है कि धर्मशास्त्रों में कहे आठ प्रकार के विवाहों में से विवाह चाहे किसी भी प्रकार का किया गया हो, स्त्री को आभूषण और स्त्रीधन अवश्य देना चाहिए. (संस्कार प्रकाश, पृ. 851)

(एक ओर वेदों से चली आ रही दहेज देने की परंपरा है तो दूसरी ओर धर्मशास्त्रों के उपर्युक्त प्रकार के आदेश हैं.

इस से भी बढ़ कर वे 'धर्मग्रंथ' हैं जिन की कहानियां हिंदू प्रायः पढ़ते व सुनते हैं. 'सत्संगों' में उन की कथाएं होती हैं, वे धर्मग्रंथ हैं—महाभारत, वाल्मीकीय व तुलसी रामायण और भागवत पुराण. पांडव, राम और कृष्ण इन ग्रंथों के नायक हैं जो आम हिंदुओं के आदर्श हैं. इन के विवाहों के प्रसंगों में दहेज देने के अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन उक्त ग्रंथियों में आते हैं.

पांडवों और द्रौपदी के विवाह के प्रसंग में महाभारत में आता है कि द्रुपदराज ने बहुत सा धन और गुलाम स्त्रीपुरुष दहेज में दिए थे :

कृते विवाहे द्रुपदो धनं ददौ महारथेभ्यो बहुरूपमुत्तमम् ।
शतं रथानां वरहेममालिनां चतुर्युजां हेमखलीनमालिनाम् ॥ 15 ॥
शतं गजानामपि पद्मिनां तथा शतं गिरीणामिव हेमशृंगिणाम् ।
तथैव दासीशतमग्र्ययौवनं महार्हवेषाभरणाम्बरस्रजम् ॥ 16 ॥
पृथक् पृथक् दिव्यदृशां पुनर्ददौ तदा धनं सौ[illegible] ।
तथैव वस्त्राणि विभूषणानि प्रभावयुक्तानि महानुभावः ॥ 17 ॥
कृते विवाहे च ततस्तु पाण्डवाः प्रभूतरत्नामुपलभ्यतां श्रियम् ।
विजह्रुरिन्द्रप्रतिमा पुरे पांचालनृपस्य ॥ 18 ॥
(आदिपर्व, अ. 197)

अर्थात विवाह के अनंतर राजा द्रुपद ने दहेज में बहुत से रत्न, धन और श्रेष्ठ सामग्रियां दीं. रत्नों से जड़ी रासें, लगामें, उत्तम जाति के घोड़ों से जुते सौ रथ, सौ हाथी और वस्त्राभूषणों से विभूषित सौ गुलाम स्त्रियां प्रत्येक दामाद को दी गईं. इस के अतिरिक्त भी बहुत सा धन, रत्न और अलंकार पांडवों को दिए गए. इस प्रकार अपार संपत्ति और स्त्रीरत्न द्रौपदी को प्राप्त कर के पांचों पांडव राजा द्रुपद के पास ही सुख से रहने लगे.

महाभारत में दहेज

महाभारत मे ही पुनः अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु और राजा विराट की पुत्री उत्तरा के विवाह प्रसंग में आता है :

तस्मै सप्त सहस्राणि हयानां वातरंहसाम् ।
द्वे च नागशते मुख्ये प्रादाद् बहुधनं तदा ॥ 36 ॥
राज्यं बलं कोशं च सर्वमात्मानमेव च ॥ 37 ॥ (विराट् पर्व, अ. 72)

अर्थात राजा विराट ने दहेज में वायु के समान शीघ्र चलने वाले सात हजार घोड़े, दो सौ मतवाले हाथी और बहुत सा धन दिया. उस ने अपना राज, सेना, धन और अपना—आप भी दे दिया.

भगवान (?) कृष्ण और बलराम ने अपनी बहन सुभद्रा के दहेज में जो कुछ दिया, उस का वर्णन करते हुए महाभारत आदि पर्व, अ. 220) में लिखा है :

रथानां कांचनांगानां किंकणीजालमालिनाम् । चतुर्युजामुपेतानां सूतैः कुशलशिक्षितैः ॥ 45 ॥ सहस्रं प्रददौ कृष्णो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गवामयुतमेव च। श्रीमान् माथुरदेश्यानां दोग्ध्रीणां पुण्यवर्चसाम् ॥46॥ [illegible] शुद्धानां चन्द्रांशुसमवर्चसाम् । ददौ जनार्दनः प्रीत्या सहस्रं हेमभूषितम् ॥ 47 ॥ तथैवाश्वतरीणां च दान्तानां वातरंहसाम् । शतान्यंजनकेशीनां श्वेतानां पंच पंच च ॥48॥ स्नानपानोत्सवे चैव प्रयुक्तं वयसान्वितम् । स्त्रीणां सहस्रं गौरीणां सुवेषाणां सुवर्चसाम् ॥49॥ सुवर्णशतकण्ठीनामरोमाणां स्वलंकृताम् । परिचर्यासु दक्षाणां प्रददौ पुष्करेक्षणः ॥50॥ पृष्ठ्यानामपि चाश्वानां बाह्लिकानां जनार्दनः । ददौ शतसहस्राख्यं कन्याधनमुत्तमम् ॥51॥ कृताकृतस्य मुख्यस्य कनकस्याग्निवर्चसः । मनुष्यभारान् दाशार्हो ददौ दश जनार्दनः ॥52॥ गजानां तु प्रभिन्नानां त्रिधा प्रस्रवतां मदम् । गिरिकूटनिकाशानां समरेष्वनिवर्तिनाम् ॥53॥ क्लृप्तानां पटुघण्टानां चारूणां हेममालिनाम् । हस्त्यारोहैरुपेतानां सहस्रं साहसप्रियः ॥54॥ रामः पाणिग्रहणिकं ददौ पार्थाय लांगली ॥55॥

(आदिपर्व, अ. 220)

अर्थात कृष्ण ने सोने से मढ़े हुए और कुशल रथवानों से युक्त एक हजार रथ. माथुर देश की 10 हजार दुधारू गौएं, सोने से विभूषित और चांद की किरणों जैसी सफेद एक हजार घोड़ियां, पांच सौ खच्चरें, पांच सौ सधे हुए बैल, स्वर्ण आभूषणों से युक्त और सेवा में कुशल एक हजार गौरवर्ण गुलाम स्त्रियां, बाह्लीक देश के एक लाख घोड़े और 10 मनुष्यों के भार के बराबर सोना दहेज में दिया. बलराम ने युद्धकुशल, पर्वताकार तथा महावतों से युक्त और सोने की घंटियों वाले एक हजार हाथी दहेज में दिए.

राम के विवाह में दहेज

भगवान (?) राम व उस के भाइयों और सीता व उस की बहनों के विवाह में राजा जनक ने जो कुछ दहेज में दिया, उस का वर्णन करते हुए वाल्मीकि ने लिखा है:

अथ राजा विदेहानां ददौ कन्याधनं बहु।
गवां शतसहस्राणि बहूनि मिथिलेश्वरः ॥3॥
कम्बलानां च मुख्यानां क्षौमकोट्यम्बराणि च।
हस्त्यश्वरथपादातं दिव्यरूपं स्वलंकृतम् ॥4॥
ददौ कन्याशतं तासां दासीदासमनुत्तमम्।
हिरण्यस्य सुवर्णस्य मुक्तानां विद्रुमस्य च ॥5॥
ददौ राजा सुसंहृष्टः कन्या धनमनुत्तमम् ॥6॥ (वा. रा., बालकांड, सर्ग 74)

अर्थात उस समय विदेहराज जनक ने अपनी कन्याओं के निमित्त दहेज में बहुत अधिक धन दिया. मिथिला नरेश ने कई लाख गौएं, कितने ही अच्छेअच्छे कालीन तथा करोड़ों की संख्या में रेशमी और सूती वस्त्र दिए. उन्होंने भांतिभांति के गहनों से सजे हुए बहुत से दिव्य हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिक भी भेंट किए. उन्होंने सौसौ कन्याएं तथा उत्तम गुलाम स्त्रीपुरुष अर्पित किए. इन सब के अतिरिक्त राजा ने उन सब के लिए एक करोड़ स्वर्णमुद्रा, रजत (चांदी) मुद्रा, मोती तथा मूंगे भी दिए. इस प्रकार मिथिलापति राजा जनक ने बहुत हर्ष के साथ उत्तम से उत्तम कन्याधन (दहेज) दिया.

भागवत पुराण में भगवान (?) कृष्ण और सत्या के विवाह में दिए गए दहेज का इस प्रकार उल्लेख आता है:

दशधेनुसहस्राणि पारिबर्हमदात् विभुः। युवतीनां त्रिसाहस्रं निष्कग्रीवसुवाससाम् ॥50॥ नवनागसहस्राणि नागाच्छतगुणान् रथान्। रथाच्छतगुणानश्वानश्वाच्छतगुणान् नरान् ॥51॥

(श्रीमद्भागवत, स्क. 10, अ. 58)

अर्थात राजा ने कंठ में पदकों को धारण करने वाली और सुंदर वेषवाली तीन हजार सुंदरी युवा गुलाम स्त्रियां, भलीभांति सजी हुई 10 हजार गौएं, नौ हजार हाथी, नौ लाख रथ, नौ करोड़ घोड़े और घोड़ों से सौ गुना दास दहेज में दिए.

तुलसी रामायण यद्यपि बहुत अर्वाचीन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रचना है तथापि अब आम हिंदू के लिए यही सर्वोपरि धर्मग्रंथ बन गई है. इस की साप्ताहिक कथाएं प्रायः चलती रहती हैं. इस में रामसीता के विवाह के प्रसंग में तुलसी ने लिखा है :

जसि रघुबीर ब्याह बिधि बरनी, सकल कुंवर ब्याहे तेहिं करनी.
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी, रहा कनक मनि मंडपु पूरी.
कंबल बसन बिचित्र पटोरे, भांति भांति बहु मोल न थोरे.
गज रथ तुरग दास अरु दासी, धेनु अलंकृत कामदुहा सी.
बस्तु अनेक करिअ किमि लेखा, कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा.
लोकपाल अवलोकि सिहाने, लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने.
(रामचरितमानस—बालकांड, पृ. 302-3)

अर्थात जैसी रामचंद्र के विवाह की विधि कही गई है, वैसी ही विधि से सब राजकुमारों का विवाह हुआ. दहेज इतना अधिक था कि कुछ कहते नहीं बनता, सारा मंडप सोने और मणियों से भरा हुआ था. ऊनी कपड़े और तरहतरह के रेशमी कपड़े भी कम नहीं थे. हाथी, रथ, घोड़े, गुलाम स्त्रीपुरुष, खूब सजी हुई व कामधेनु के समान अच्छीअच्छी गौएं तथा और भी अनेक वस्तुएं थीं. कहां तक उन की गिनती करें. कुछ कहते नहीं बनता. जिन्होंने उन्हें देखा, वे ही उन्हें जानते हैं. दहेज देख कर तो लोकपाल भी सिहर गए. अवधराज दशरथ ने सुख मान कर, प्रसन्न मन से सारा दहेज ग्रहण किया.

जब बरात जनक के यहां से विदा हुई, तब फिर उस ने बहुत सा दहेज दिया :

भरि भरि बसहं अपार कहारा, पठईं जनक अनेक सुसारा ।।5।।
तुरग लाख रथ सहस पचीसा, सकल संवारे नख अरु सीसा ।।6।।
मत्त सहस दस सिंधुर साजे, जिन्हहिं देखि दिसि कुंजर लाजे ।।7।।
कनक बसन मनि भरि भरि जाना, महिषीं धेनु बस्तु बिधि नाना ।।8।।
दाइज अमित न कहि सकिअ दीन्ह बिदेहं बहोरि।
जो अवलोकत लोकपति, लोकसम्पदा थोरि ।।362।।
सबु समाज, एहि भांति बनाई, जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ।।
(रामचरितमानस, बालकांड, पृ. 310)

अर्थात अनगिनत बैलों और कहारों पर लादलाद कर खाने की सारी सामग्री भेजी गई. साथ ही जनक ने अनेक सुंदर शय्याएं (पलंग) भेजीं. एक लाख घोड़े, पूरी तरह सजे हुए 2,500 रथ और दिशाओं के हाथियों को भी लजाने वाले 10,000 मतवाले हाथी दिए. गाड़ियों में भरभर कर सोना, वस्त्र और हीरेजवाहरात एवं भैंसेंगौएं तथा नाना प्रकार की चीजें दी गईं. इस प्रकार जनक ने फिर से अपरिमित दहेज दिया. इस दहेज का वर्णन नहीं किया जा सकता. इसे देख कर लोकपालों की संपदा भी थोड़ी जान पड़ती है. इस तरह से सारा सामान सजा कर जनक ने उन्हें अयोध्यापुरी को विदा किया.

शिवपार्वती विवाह में दहेज

तुलसी की रामायण में शिव और पार्वती के विवाह का भी वर्णन है. ये दोनों लोकप्रिय देवता हैं. इन के विवाह में पार्वती के पिता ने बहुत दहेज दिया. फिर भी उसे दामाद के आगे दीनतापूर्वक गिड़गिड़ाना पड़ा. इस का वर्णन करते हुए तुलसी रामायण में लिखा है :

दासी दास तुरग रथ नाना, धेनु बसन मनि बस्तु बिभागा।
अन्न कनकभाजन भरि जाना, दाइज दीन्ह न जाइ बखाना ।।
दाइज दियो बहुभांति पुनि कर जोरि हिमभूधर कह्यो।
(रामचरितमानस, बालकांड, पृ. 121)

अर्थात गुलाम स्त्रीपुरुष, घोड़े, रथ, हाथी, गौएं, वस्त्र, मणि तथा और भी अनेक पदार्थ, छकड़ों में भर कर अन्न और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोने के पात्र—इतना दहेज दिया कि उस का वर्णन नहीं किया जा सकता. बहुभांति का दहेज दिया. फिर हाथ जोड़ कर पार्वती के पिता हिमवान ने कहा, "हे शंकर, आप पूर्णकाम हैं. मैं आप को क्या दे सकता हूं?" इस प्रकार कह कर उस ने अपने दामाद शिवजी के चरण पकड़ लिए.

इन अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनों से लोग बहुत प्रभावित होते हैं. वे सोचते हैं (और तर्क भी देते हैं) कि जब भगवान तक ने इतना दहेज दिया और लिया, तब हमें भी अधिकाधिक दहेज देना व लेना चाहिए. उस में बुराई ही क्या है? यह तो भारतीय संस्कृति का व्यावहारिक पहलू है. क्या हमारे पूर्वज मूर्ख थे? उन्होंने कुछ सोच-समझ कर ही दहेज की प्रथा शुरू की होगी. यही कारण है कि जब कई बार लड़के बिना दहेज लिए विवाह करने को तैयार हो जाते हैं, तब उन की धार्मिक माताएं इसी प्रकार के कथाप्रसंगों का उल्लेख करती हैं और बिना दहेज के विवाह को अपूर्ण व धार्मिक दृष्टि से दोषपूर्ण बताती हैं.

स्त्रियां अधिक पुराणपंथी

लड़की को जब दहेज देने की बात आती है, तब भी बात यहीं पहुंचती है: जनक ने सीता को दहेज दिया, कृष्ण ने अपनी बहन सुभद्रा को दहेज दिया, हिमवान ने पार्वती को दहेज दिया आदि. प्रायः स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा धर्मग्रंथों का पारायण ज्यादा करती हैं व उन से ज्यादा धार्मिक होने का दम भरती हैं. अतः वे इस मामले में ज्यादा हठी और पुराणपंथी हैं.

हमारी विवाह पद्धतियां (विवाह की विधि बताने वाली पुस्तकें) खुद दहेज की उमर बढ़ाती हैं. वे वर और उस की माता आदि के लिए गृहस्थी का सामान, गाय, सोना आदि देने को विवाह का अविभाज्य व अटूट अंग बताती हैं.

हमारे सामने पांच पुस्तकें पड़ी हैं. एक है स्वामी दयानंद कृत 'संस्कार विधि' रामगोपाल विद्यालंकार के भाष्य सहित, दूसरी है—दयानंद के भूतपूर्व शिष्य पं. भीमसेन शर्मा, वेद व्याख्याता कृत 'षोडश संस्कार विधि,' तीसरी है—पं. रामनाथ वौद्धेय लिखित 'विवाह पद्धतिः' (संस्कृत-हिंदी व्याख्या सहित), चौथी है—चतुर्थी-लाल शर्मा कृत 'विवाह पद्धति.' (हिंदी टीका सहित) और पांचवीं है—'विवाह पद्धतिः' भाषा टीका सहित, पं. देवीदयालु ज्योतिषी एंड संस द्वारा प्रकाशित.

स्वामी दयानंद ने लिखा है:

'ओं गौर्गौर्गौः प्रतिगृह्यताम्' (यह गाय है, लीजिए, गाय लीजिए). इस वाक्य से वर की विनति कर के अपनी शक्ति के योग्य वर को गोदानादि द्रव्य, जो कि वर के योग्य हों, अर्पण करे और वर—'ओं प्रतिगृह्णामि.' पार. कां. 1/कं 3 (लाओ लेता हूं) इस वाक्य से उस को ग्रहण करे.

(संस्कार प्रकाश अर्थात संस्कार विधि, दयानंद सरस्वती रचित, पृ. 128)

यहां साफ तौर पर 'वर के योग्य' गाय आदि पदार्थ वर को देने को विवाह-संस्कार के अंग के तौर पर प्रस्तुत किया गया है.

पं. भीमसेन रचित 'षोडश संस्कार विधिः' में विवाह संस्कार के प्रारंभ में ही कन्यादान करने वाले पिता व भाई से जो वाक्य संकल्प के समय कहलवाए गए हैं, उन में कहा गया है: (क) 'यथाशक्त्य-लंकृतामुपकल्पितोपस्कारसहितामिमां कन्यां ...पत्नीत्वेन तुभ्यमहं संप्रददे.' (पृष्ठ 260)

अर्थात मैं यथाशक्ति आभूषणों से सजाई हुई और अन्य गृहोपयोगी द्रव्यों के साथ अपनी कन्या को आप (वर) को पत्नी के रूप में देता हूं.

लगभग यही बात देवीदयालु की 'विवाहपद्धतिः' के पृष्ठ 74 और 76 पर लिखी हुई है.

(ख) ततः कन्याप्रदः—ओं अद्य कृतैतत्कन्यादानप्रतिष्ठार्थमिदं यथाशक्ति सुवर्णमग्निदैवतममुकगोत्राय वराय दक्षिणां

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुभ्यमहं संप्रददे इति दक्षिणां दद्यात. ओं स्वस्तीति प्रतिवचनम्. गोमिथुनं वा दद्यात्. ओं कोदात्. इति वरः पठेत्.
(वही, पृ. 260-61)

अर्थात तदनंतर कन्यादाता संकल्पपूर्वक यथाशक्ति सुवर्ण व एक गौ, एक बैल वर को कन्यादान की दक्षिणा में दे और वर (ओं कोदात्.) इत्यादि मंत्र पढ़ के स्वीकार करे. (वही, पृ. 260-61).

यही बात रामनाथ बौद्धेय ने अपनी 'विवाह पद्धति' के पृ. 111 और 112 पर, चतुर्थीलाल शर्मा ने अपनी 'विवाह पद्धति' के पृ. 44 पर और पं. देवीदयालु ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 82 पर लिखी है.

'षोडश संस्कार विधि' के पृ. 262 पर तथा देवीदयालु ज्योतिषी की 'विवाह पद्धति' के पृष्ठ 7 पर बताया गया है कि कन्यादान के समय क्याक्या वस्तु दानदक्षिणा के रूप में दहेज में वर को दी जानी चाहिए :

कन्यार्थे कनकं धेनुर्दासीरथमहीगृहाः ।
महिष्यश्वगजाः शय्या महादानानि वै दश ॥

अर्थात कन्यादान के समय वर को सोना, गाय, गुलाम स्त्री, रथ, पृथ्वी, गृह, भैंस, घोड़ा, हाथी और शय्या (पलंग आदि) देनी चाहिए.

लगभग ऐसा ही चतुर्थीलाल शर्मा ने 'विवाह पद्धति' में पृ. 44-45 पर लिखा है.

'षोडश संस्कार विधि' में पृ. 264 पर लिखा है कि तांबा, चांदी, कांसा, तांबूल (पान) और दीप भी दान दिए जाने चाहिए. प्रत्येक वस्तु के दान के लिए अलग-अलग मंत्र भी लिखे गए हैं. (देखें, षोडश संस्कार विधि, पृ. 264, विवाह पद्धति (देवीदयालु की) पृ. 79-82.)

वर को दी जाने वाली चीजों की सूची यहीं समाप्त नहीं होती. वर की मां के लिए भी बहुमूल्य वस्तुएं देने का धार्मिक विधान है, जिसे वैवाहिक शब्दावली में 'सौभाग्य पिटक' (सुहाग पिटारी) कहा जाता है. इसे अनिवार्य बनाए रखने के लिए सौभाग्य पिटक संबंधी श्लोकों में, जिन्हें पं. भीमसेन शर्मा ने उद्धृत किया है, कहा गया है कि इस के देने से शिव और पार्वती प्रसन्न होते हैं. कौन धर्मभीरु हिंदू इन की प्रसन्नता प्राप्त न करना चाहेगा?

पं. भीमसेन शर्मा ने जिन श्लोकों को उद्धृत किया है, वे इस प्रकार हैं :

वंशपात्रमिहैकं च शूर्पैः षोडशभिर्युतम् ।
करकैः रुद्रसंख्याकैः सुवर्णपरिपूरितैः ॥
शतछिद्रीं शुभामेकां गोधूमेन प्रपूरिताम् ।
सवस्त्रं च सदीपं च सौभाग्यद्रव्यसंयुतम् ॥
नानापक्वान्नसंयुक्तं फलताम्बूलसंयुतम् ।
एतावदैरिणीरूपं कर्त्तव्यं प्रीतिवर्धनम् ॥
उमाशंकरयोः प्रीत्यै ऐरिणीदानमुत्तमम् ।
वरमात्रे प्रदास्यामि कन्यादानस्य सिद्धये ॥
(षोडश संस्कार विधि, पृ. 295-96)

अर्थात ऐरिणी देवतावाली बांस की एक पिटारी, 16 सूप, 11 करवे, सुवर्ण, गेहूं, वस्त्र, दीप, सौभाग्यचिह्न, सिंदूरादि, अनेक पक्वान्न, फल, तांबूल इत्यादि सामान से भर कर शिव और पार्वती की प्रसन्नता के लिए वर की माता के लिए मैं (कन्या का पिता) देता हूं.

वर की माता के लिए भी

हिंदू विवाहों में वर को दिए जाने वाले सामान के अतिरिक्त उस की माता के लिए यह सुहागपिटारी भी दी जाती है.

इन सूचियों के पदार्थों में समय के मुताबिक कुछ हेरफेर हुआ है; लेकिन कुछ नगण्य अपवादों को छोड़ कर इन की उपेक्षा करने को कोई तैयार नहीं. शहरों में अब गाय, भैंस, घोड़े, रथ आदि का स्थान स्कूटर, मोटर साइकिल, कार, फ्रिज और टेलीविजन आदि ने ले लिया है. यद्यपि कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में गायभैंस अभी भी दिए जाते हैं. मकान के लिए प्लाट आदि आज भी दहेज के अंग रूप में खरीद कर दिए जाते हैं. गुलाम स्त्रीपुरुषों का स्थान चैकों ने ले लिया है. शेष गृहोपयोगी चीजें भी आधुनिक उपयोग और स्तर की दृष्टि से ही चुनी जाती हैं और चुननी पड़ती हैं.

हमारी विवाह पद्धतियां दहेज मिलने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को विवाह का खास तत्व बताती हैं. विवाह में सात भांवरें ली जाती हैं, जिन्हें 'सप्तपदी' कहते हैं. इन में तीसरे पद के लिए कहा गया है: "ओं रायस्पोषाय त्रिपदी भव. (पति कहता है) कि तू तीसरा पग धन की वृद्धि व पुष्टि के लिए रख." (संस्कार प्रकाश, स्वामी, दयानंद कृत 'संस्कार विधि' का भाष्य, पृ. 147)

सनातन धर्मियों की विवाह पद्धति में भी वही बात कही गई है: 'मूल–ओं त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वानयतु।' अर्थात वर का तीसरा कथन—"त्रीणि-रायस्पोषाय विष्णुस्त्वानयतु" इस मंत्र को पढ़ कर तीसरे मंडल में कन्या का पग रखे.

मंत्रार्थ–तृतीय पद तुझे विष्णु रूप में धन की वृद्धि के लिए ले जाता हूं. (विवाह पद्धति, ले. रामनाथ बौद्धेय, 1926 ई., पृ. 207).

दहेज समाप्ति का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

यही बात पं. देवीदयालु ने अपनी 'विवाह पद्धति' (वि. सं. 2027, सन 1970) के पृष्ठ 31 पर लिखी है. स्पष्ट है कि इस तीसरी भांवर का उद्देश्य वर को यह बताना है कि पत्नी मिलने के साथसाथ धन भी मिलेगा.

धर्मग्रंथों द्वारा समर्थित और उन में रची हुई प्रथाएं तब तक पीछा नहीं छोड़तीं जब तक आदमी इस योग्य न हो जाए कि वह उन ग्रंथों का बुद्धिवादी विश्लेषण कर सके. जब तक लोगों को धर्मग्रंथों की मानसिक दासता से छुटकारा नहीं दिलाया जाता, तब तक दहेज निरोधी कानून इसे जड़ से उखाड़ नहीं सकेंगे. अतः आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक व्यक्ति भारतीय संविधान में प्रतिपादित मूल कर्त्तव्यों अनुच्छेद (51 क) का पालन करते हुए खुद वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाए और दूसरों को इसे अपनाने में मदद दे. इस प्रक्रिया में जो भी धर्मवचन, धार्मिक प्रथा, पुरानी चीज और धर्मग्रंथ कसौटी पर पूरा न उतरे, उसे निर्ममता-पूर्वक सदा के लिए तिलांजलि दे दी जाए. यदि सचमुच हम दहेज की लानत से पिंड छुड़ाना चाहते हैं तो हमें यह सब अवश्य करना होगा ताकि इस का धार्मिक और परंपरागत दृढ़ आधारस्तंभ गिर जाए, जो प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों तरह से हिंदुओं को दहेज देने और लेने के लिए प्रेरित करता है. इस के गिरने के बाद ही उन की विचार-धारा को कोई नया धनात्मक मोड़ दे पा सकना संभव होगा. ●

●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप की लड़की प्रेम करती है?

तो बुरा क्या है? संकीर्णता को छोड़ कर आप उस की समस्याओं का हल क्यों नहीं ढूंढ़तीं!

● कांता 'निशा'

परसों ही मिसेज खन्ना और उन की लड़की नीरा जब मेरे यहां पहुंचीं तो मैं ने खुशी से मिसेज खन्ना से कहा, "बधाई हो, बहन, नीरा की सगाई के लिए. कहो, चुपकेचुपके ही सगाई कर दी! हमें तो बुलाया तक नहीं."

मिसेज खन्ना ने झूठी हंसी हंसते हुए कहा, "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता था कि तुम्हें न बुलाया जाता, पर सगाई कुछ ऐसे अचानक हुई कि हम किसी को सूचना तक न दे सके."

"अरे, ऐसी क्या जल्दी पड़ी थी, अभी तो नीरा थर्ड इयर ही कर रही है. फोर्थ इयर तो पूरा कर लेने देतीं."

"क्या बताऊं, बस बात ही कुछ ऐसी थी," कह कर मिसेज खन्ना ने निगाहें नीची कर लीं.

खुशी की खबर में उदासी क्यों?

मैं ने खुशी से नीरा की ओर देखा तो उस के चेहरे पर खुशी के स्थान पर एक गहरी उदासी की छाया थी और अपनी सगाई के विषय में सुन कर उस ने अपनी निगाहें दूसरी ओर फेरे ली थीं.

उस समय मैं ने कुछकुछ समझा और कुछ टालते हुए विषय बदल दिया. चाय पीते समय मैं ने अनुभव किया कि नीरा उदास और खोईखोई सी थी.

रात को जब मैं बिस्तर पर लेटी तो नीरा का उदास चेहरा मेरी आंखों के आगे घूमता रहा और मैं उस की उदासी का कारण सोचती रही. अनेक बातें मेरे मस्तिष्क में चक्कर काट गईं. हो सकता है कि नीरा की इच्छा अभी आगे पढ़ने की हो, वह डाक्टर, इंजीनियर या आई. ए.एस. बनना चाह रही हो. हो सकता है, लड़के की शक्लसूरत उसे पसंद न आई हो, या फिर लड़का जिस लाइन में है, वह नीरा को पसंद न हो. हो सकता है, नीरा किसी अन्य लड़के को चाहती हो और लज्जावश अपनी मम्मी से बता न पाई हो. और यदि बता भी सकी हो तो संभव है कि मिस्टर और मिसेज खन्ना उस लड़के से शादी करना न चाहते हों. इसी कारण उन्होंने नीरा की सगाई में जल्दी की हो.

अंतिम विचार बिजली की भांति मेरे मस्तिष्क में कौंध गया और मैं सोचती रही, 'हो सकता है, नीरा ही गलत रास्ते पर हो! या फिर उस के पापामम्मी ही उसे गलत समझ रहे हों.'

मिस्टर और मिसेज खन्ना से हमारा अपनों जैसा व्यवहार रहा है. नीरा को तो मैं अपनी छोटी बहन जितना प्यार करती हूं. वह मुझे बेहद पसंद है. जानती हूं कि उसे पा कर कोई भी पति अपनेआप को धन्य मानेगा इसी लिए उसे भी अपने मनोनुकूल पति मिलना ही चाहिए. यही मैं चाहती हूं. इसी कारण मैं ने अगले ही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दिन नीरा को अपने यहां बुलाया. वह भी मुझे बड़ी बहन की तरह मानती है और मुझ पर उसे पूरापूरा विश्वास भी है. मैं ने उस से जो कुछ भी पूछा उस ने मुझे साफसाफ बता दिया.

आधारहीन अविश्वास

मुझे पता चला कि दो वर्षों से उस का अपने एक प्रोफेसर राजेश से प्रेम चल रहा है जिस के विषय में उस ने अपने मम्मीपापा को बता भी दिया था और वे राजेश से नीरा का विवाह करने को तैयार भी थे. लेकिन अचानक ही राजेश को तीन वर्ष के लिए विदेश चले जाना पड़ा.

उस के जाते समय मिस्टर व मिसेज खन्ना ने इच्छा प्रकट की कि वह नीरा से शादी कर के उसे भी साथ लेता जाए क्योंकि तीन वर्ष के लंबे अरसे तक वे नीरा की शादी का इंतजार न कर सकेंगे. पारिवारिक परिस्थिति के कारण राजेश ऐसा न कर सका और लौट कर आने पर नीरा से शादी करने का बारबार विश्वास दिलाता रहा. पर इस का मिस्टर खन्ना ने यही निष्कर्ष निकाला कि राजेश उन लोगों को टालना चाह रहा है. इसी एक छोटी सी गलत धारणा के कारण मिस्टर खन्ना ने क्रोध में आ कर नीरा की सगाई कहीं और कर दी.

दूसरी ओर नीरा को राजेश पर पूर्ण विश्वास था. उस की चिट्ठियां नीरा के पास आतीं जिन से प्रतीत होता कि राजेश अब भी वही है, पहले जैसा. एक भारी समस्या थी नीरा के सामने. कैसे बताए राजेश को कि उस की सगाई उस के पिता ने दूसरी जगह कर दी है? वह कायर, डरपोक और न जाने क्याक्या कहेगा उसे. और नीरा विद्रोह करे तो कैसे करे अपने मम्मीपापा से? मेरे सम्मुख उस के आंसुओं का बांध टूट गया और मैं भी देखती रही, सोचती रही कि क्या किया जाए!

मामला काफी टेढ़ा था. उधर दो दिलों के संबंध का प्रश्न था. इधर मांबाप ने सगाई भी पक्की कर दी थी. काफी असमंजस में पड़ गई मैं भी, पर मामले को किसी प्रकार सुलझाना ही था. अगले ही दिन नीरा के घर पहुंची. मिसेज खन्ना से भी दिल खोल कर बातें हुईं. उन की बातों से भी यही पता चला कि वह भी राजेश को अविश्वासी और धोखेबाज समझती थीं. यही कारण था कि वह तीन-तीन व्यक्तियों का जीवन नरक की आग में झोंकने को तैयार थीं. न जाने कितने उदाहरण उन्होंने मेरे सम्मुख पेश किए. फलां लड़के ने फलां लड़की को धोखा दिया, फलां व्यक्ति ने पहली पत्नी रहते हुए फलां लड़की को प्रेमजाल में फंसाया.

स्पष्ट था कि राजेश के प्रति अविश्वास की भावना ही सारे रोग की जड़ थी और इस भावना को मिस्टर व मिसेज खन्ना के दिल से दूर करना ही सारे रोग का निदान था. मैं ने उन दोनों को समझाया कि न तो सभी लड़के राजेश होते हैं और न ही राजेश अन्य लड़कों की भांति है.

उन दोनों के हृदयों से राजेश के प्रति अविश्वास की भावना को दूर करने के लिए राजेश के सभी पत्र, जो कि नीरा के पास थे, निकलवाने पड़े. इन पत्रों में जो सरलता, निष्कपटता और दृढ़ता भरी थी उस से मिस्टर और मिसेज खन्ना राजेश के व्यक्तित्व को पूरी तरह से जान गए और उन्होंने अनुभव किया कि वास्तव में राजेश ही उन की नीरा के लिए उपयुक्त वर है और वह नीरा को सच्चे दिल से चाहता भी है.

अनुदारता के लिए पश्चात्ताप

अब वे दोनों नीरा और राजेश के प्रति की गई अपनी अनुदारता के लिए पश्चाताप करने लगे. अपनी गलती का अनुभव कर के भी वे कुछ करने के लिए विवश थे क्योंकि नीरा की सगाई की सब रस्म अदा हो चुकी थी, जो कि अब तोड़ी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न जा सकती थी और यदि टूटती तो खानदान की 'नाक' का सवाल था. यदि रिश्ता तोड़ा भी जाए तो क्या कह कर? नीरा किसी अन्य लड़के को चाहती है, यह लड़के वालों से कैसे कह सकते थे?

लेकिन कुछ करना तो था ही. यह भार मुझे अपने सिर पर लेना पड़ा. लड़के वालों के यहां पहुंच कर मैं ने सूचित किया कि मुझे मिस्टर और मिसेज खन्ना द्वारा भेजा गया है, यह बताने के लिए कि सगाई तोड़ दी जाए क्योंकि लड़की किसी अन्य लड़के को चाहती है. मामले को बिगड़ने से बचाने के लिए मैं ने यह कह दिया कि लड़की के मातापिता को भी इस बारे में कुछ पता नहीं था क्योंकि लड़की ने कभी लज्जावश बताया ही नहीं. अब जब उस ने अपनी सगाई होने पर उदासी प्रकट की तभी लड़की के मातापिता को पता चला.

इस बात के स्पष्ट हो जाने पर, मेरी आशा के विरुद्ध, वे लोग रुष्ट होने की बजाए खुश ही हुए. उन्होंने तो अनेकानेक धन्यवाद दे कर जैसे मुझे दबा ही दिया क्योंकि अपने लड़के का जीवन बरबाद होने से बचाने का भागी वे मुझे ही समझ रहे थे.

शोरशराबे के बिना काम बन गया

बिना किसी शोरशराबे के काम बन गया. मिस्टर खन्ना के घर में जो गहन उदासी छाई हुई थी वह दूर हो गई और पतिपत्नी ने सुख की सांस ली. नीरा तो मुझ से लिपट ही गई, "दीदी, तुम ने मुझे दूसरा जीवन दे दिया है."

इस उदाहरण से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे मामलों में कितनी सावधानी दूरदर्शिता और सहनशीलता बरतने तथा परस्पर विचारविनिमय करने की आवश्यकता है. किसी भी विषय को पुरानी परिपाटी में बांधना कहां की बुद्धिमत्ता है? आज संसार आगे बढ़ रहा है हमारे कदम भी संसार के साथ हैं. शिक्षा की दिन प्रति दिन उन्नति हो रही है और इस के साथसाथ हमारे पुरातन बंधन खुद ही खुलते जा रहे हैं. आज के मातापिता को प्राचीन मातापिता की भांति अपनी लड़की के मुंह से यह सुन कर कि वह अपने मनपसंद लड़के से विवाह करना चाहती है, चौंकना नहीं चाहिए, बल्कि उस की बात ध्यान से सुन कर विचारविमर्श कर के अपना फैसला देना चाहिए और जहां तक हो सके, प्रेमविवाहों को उत्साहित करना चाहिए.

इस में संदेह नहीं कि यदि मांबाप ऐसी लड़कियों का साथ दें, जो कि अपने लिए खुद लड़का चुन चुकी हैं, तो उन की लड़कियां बहुत सफल वैवाहिक जीवन व्यतीत कर सकती हैं. हम देखते हैं कि मांबाप द्वारा किए गए विवाहों में लड़कालड़की एकदूसरे को शक्लसूरत से केवल देख भर लेते हैं, न तो उन्हें एकदूसरे के विचारों का पता होता है, न ही वे एकदूसरे की रुचि से परिचित होते हैं. परिणाम यह होता है कि यदि एक पूरब को चलता है तो दूसरा पश्चिम को.

'श्रवणकुमारों' से बचिए

मांबाप तो इतना ही देखते हैं कि लड़का अच्छा कमाऊ हो और लड़की को पूर्ण आराम मिले. वे न तो लड़के के मस्तिष्क में ही पैठ सकते हैं, न उस के दिल के एक कोने भर में ही झांक पाते हैं. यही कारण है कि वरवधू द्वारा एकदूसरे के जाननेपहचानने में, अपनेआप को एकदूसरे के अनुकूल ढालने में वर्षों लग जाते हैं. इसलिए वैवाहिक जीवन के वे आरंभिक दिन, जो कि हंसीखुशी में व्यतीत होने चाहिए, लड़तेझगड़ते ही बीत जाते हैं. यदि दोनों में से एक भी जिद्दी स्वभाव का हुआ तो तलाक तक की नौबत आ सकती है.

आज के युग को देखते हुए मातापिता का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लड़की का कहीं भी रिश्ता पक्का करने से पहले यह जान लें कि कहीं उन की लड़की किसी को चाहती तो नहीं. यदि चाहती है तो दूरदर्शिता से विचार किया जाए और लड़के तथा उस के संबंधियों से भी मिल कर लड़के के चरित्र व परिवार का पता लगा लेना चाहिए. यदि लड़की ने वास्तव में अपने लिए योग्य वर ढूंढ़ रखा है तो यह आप के लिए प्रसन्नता की बात है क्योंकि आजकल, जब कि विवाह को भी एक अच्छाखासा व्यापार समझा जाता है, लड़कों का मिलना आसान नहीं है, आप समझिए आप ने बाजी मार ली है.

हां, कुछ अड़चनें अवश्य आप के सामने आ सकती हैं. हो सकता है कि लड़के के मांबाप दहेज, जाति, गोत्र, असुंदरता आदि के कारण आप की लड़की से विवाह न करना चाहते हों लेकिन आप घबराइए नहीं. यदि लड़का ठीक है, अपने पैरों पर खड़ा है और हर हालत में आप की लड़की से विवाह करने को तैयार है तो लड़की के हाथ पीले करने में देर न लगाइए. चाहे लड़के के सभी संबंधी रुष्ट हो जाएं और आप को भी अपने संबंधियों से कन्नी काटनी पड़े. ऐसा लड़का साहसी और निडर निकलेगा. उस के साथ रह कर आप की लड़की को लड़के के परिवार वालों के सामने नीचा न देखना पड़ेगा.

दूसरी ओर यदि आप की लड़की द्वारा पसंद किया गया लड़का अपने मांबाप की अनुमति का हवाला दे कर शादी को टाल रहा है तो भूल कर भी लड़की का हाथ उसे न सौंपें (चाहे उस के घर वाले अनुमति दे ही दें). ऐसा लड़का निस्संदेह ही भीरु निकलेगा और उस के घर वालों की अनुचित बातों पर भी आप की लड़की को झुकना पड़ेगा, वह कभी स्वतंत्रता का अनुभव न कर पाएगी. आप की लड़की भी ऐसे लड़के से प्रेम करने की गलती अनुभव करेगी. इसलिए शादी से पहले आप के समझाने पर खुद ही वह उस लड़के से घृणा करने लगेगी और आप दूसरी जगह उस का रिश्ता कर सकेंगे.

बढ़ती स्वतंत्रता : बढ़ती समस्याएं

इस के अतिरिक्त हम देखते हैं कि नारी की बढ़ती स्वतंत्रता के साथसाथ समस्याएं दिन प्रति दिन बढ़ती ही जाती हैं. हम आए दिन किसी विवाहित पुरुष का किसी अविवाहित लड़की के साथ, किसी विवाहित स्त्री का परपुरुष के साथ और किसी विधवा का किसी अविवाहित लड़के के साथ प्रेम संबंध होने की बात सुनते हैं. निस्संदेह इन में से अधिकतर संबंध स्त्री-पुरुष की निकटता से उत्पन्न होने वाले क्षणिक आकर्षण पर ही निर्भर होते हैं, जिन का कोई भी उद्देश्य नहीं होता.

इन में से प्रायः सभी व्यक्ति क्षणिक सुख और कामलिप्सा के लिए ही प्रेम का ढोंग रचते हैं और भोलीभाली लड़कियों को उकसाने और उन का पीछा करने में जरा भी नहीं हिचकते. नारी में क्योंकि भावुकता अधिक होती है, इसलिए वह भुलावे में आ जाती है.

हो सकता है, ऐसी लड़कियों में आप की पुत्री भी हो. निस्संदेह आप को बहुत बुरा लगेगा जब आप ऐसा सुनेंगे. पर आवेश में आ कर मारपीट करना और लड़की पर बंधन लगाना लड़की को अपने से विमुख करना है. उसे जब घर में सहानुभूति व प्यार नहीं मिलेगा तो वह उसी पुरुष के पास अपना दुख रोने पहुंचेगी जिस की कि छाया भी आप की लड़की पर नहीं पड़नी चाहिए.

आप ऐसी परिस्थिति में अपनी लड़की को इस रास्ते पर चलने की बुराइयां समझाइए, उस के सच्चे हमदर्द के रूप में उस से पेश आइए और जो व्यक्ति उसे धोखा दे रहा है उस की एकएक बुराई खोजखोज कर लड़की के सम्मुख रखिए. आप को पूर्ण सफलता मिलेगी और आप शीघ्र ही लड़की को सही रास्ते पर ले जाएंगे. हां, लड़की विधवा है और लड़का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योग्य सिद्ध होता है तो आप दोनों को विवाह करने के लिए उत्साहित कर के अपना, लड़की का और समाज का भारी हित करेंगे.

परिस्थितियों को सावधानी से संभालें

दूसरी ओर यदि आप देखते हैं कि आप की लड़की, जो कि अभी कालिज में ही पढ़ रही है, अपने कालिज के किसी ऐसे लेक्चरार के चक्कर में फंसी है जो कि चारपांच बच्चों का बाप भी है, तो परिस्थितियां बड़ी सावधानी से संभालिए. अवश्य ही इस मामले में कालिज के लेक्चरार का ही अधिक हाथ होगा. उस ने लड़की की झूठी प्रशंसा की होगी, उसे मुफ्त के नंबर दिए होंगे और उस की बुद्धि की भरी कक्षा में सराहना की होगी. ऐसी स्थिति में आप कालिज के प्रिंसिपल से सलाह कीजिए और कालिज में उस की अन्य सहेलियों की मदद से भी लड़की को ठीक रास्ते पर लाने का प्रयत्न कीजिए.

अकसर यह देखा जाता है कि कुछ दिन के बाद लड़की खुद भी गलती अनुभव करती है और अपनेआप को सुधारना भी चाहती है. लेकिन यदि उस ने धोखे में आ कर दोचार पत्र ऐसे व्यक्ति को लिख दिए हैं तो उस के चाहते हुए भी वह व्यक्ति उसे मार्ग पर नहीं आने देगा और उस के भावी पति को वह पत्र दिखाने की धमकी दे कर लड़की को अपने पंजे से कभी भी नहीं निकलने देगा. ऐसे में लड़की बेचारी अपने भविष्य के बारे में सशंकित हो जाती है और उस की बेबसी का फायदा वह पुरुष उठाता रहता है.

ऐसी स्थिति में मांबाप को मैदान में आना चाहिए और जिस तरह से भी हो लड़की के पत्र उस व्यक्ति से निकलवा कर नष्ट कर देने चाहिए. लड़की का विवाह किसी योग्य वर से कर देने में भी मांबाप को देर नहीं करनी चाहिए, नहीं तो वह नरपशु सदैव तलाश में रहेगा कि आप की लड़की को अकेला पा कर उस की कमजोरी का फायदा उठाए.

पूर्ण विश्वास पैदा करना चाहिए

शादी से पहले ही यह बात अपने होने वाले दामाद के सम्मुख खोल देनी होगी और आप की लड़की को भी अपने होने वाले पति के सम्मुख अपनी गलती को स्वीकार कर के उस के हृदय में अपने प्रति पूर्ण विश्वास पैदा करना होगा. इस में कोई शक नहीं कि इतना बड़ा दिल रखने वाले लड़कों की भी अभी कमी ही है लेकिन यदि लड़की वालों की ओर से बात को स्पष्ट करने का साहस कर लिया जाता है तो आगे बढ़ने वाले लड़कों की भी कमी नहीं रहेगी. हां, मामले को गुपचुप रखना लड़की के भविष्य को अवश्य ही संकट में डालना है. विवाह के बाद जरा सा भी मनमुटाव और चरित्र पर संदेह आप की लड़की के जीवन का सारा सुख छीन सकता है.

अतः हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि यह प्रेम और मुहब्बत का मामला अत्यंत नाजुक है और बहुत सावधानी की अपेक्षा रखता है. इस की कोई सीमा नहीं, इस में कुछ अच्छा या बुरा नहीं. जो एक के लिए अच्छा है, वही दूसरे के लिए बुरा हो सकता है. प्रत्येक व्यक्ति की अपनी भिन्न परिस्थितियां हैं और भिन्न सीमाएं हैं. लिहाजा प्रत्येक मांबाप को चाहिए कि अपनी सीमाओं, परिस्थितियों और मान्यताओं को देखते हुए इस विषय पर ठीकठीक विचार करें. प्रेम का नाम सुनते ही चौंकिए नहीं, बल्कि इस से पैदा होने वाली समस्या को सुलझाने की कोशिश कीजिए. लकीर के फकीर न बनें. भूलिए नहीं कि आप का जमाना कुछ और था अब का जमाना कुछ और है. आप भी किसी के लड़केलड़की ही थे, शायद कोई भूल आप से भी हुई हो. तो फिर अपनी लड़की की भूल के बारे में भी सोच लीजिए न! ●

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूंजीपति बनिए

आज पूंजी, पूंजीपति, पूंजीवाद-- घृणा के प्रतीक हैं. किसी को गाली देनी हो या किसी समाज की भर्त्सना करनी हो तो उसे पूंजीवादी करार दे दीजिए, मानो पूंजी ही सारी मुसीबतों की जड़ हो.

धर्म के धंधेबाजों ने भी सर्वत्र पूंजी यानी धन की बुराई की है, पर किसी धर्म के सौदागर ने इस को पाने की इच्छा नहीं त्यागी.

इस जीवन में, खूनपसीना बहा कर प्राप्त किए गए धन का (बेईमानी, जोर-जबरदस्ती द्वारा प्राप्त धन के लिए यहां भी खूनपसीना बहाना पड़ता है) क्या करें? धर्म के धंधेबाजों को बांट दो. क्यों? भगवान खुश होंगे. तो क्या धन कमाने वाले के पास धन देख कर भगवान नाराज होंगे, और जो व्यक्ति धन कमाने वाले को बेवकूफ बना कर उस का धन छीन ले उस के पास देख कर खुश होंगे?

फिर भगवान व धर्म के धंधेबाजों एवं राजनीतिबाजों के चेलेचमचों में क्या अंतर हुआ?

उधर राजनीतिबाज कहते हैं, "धन तो ठीक है, पर जब वह पूंजी बन जाता है तो घृणायोग्य बन जाता है." पर क्या बिना पूंजी इस संसार का कोई भी काम चल सकता है?

जब मानव और आगे बढ़ता है तो उसे उद्योगों के लिए पूंजी चाहिए. बिना पूंजी कौन सा उद्योग चल सकता है? आज स्थिति यह है कि एक व्यक्ति को रोजगार में लगाने के लिए कम से कम 10,000 रुपए की पूंजी चाहिए. बिना पूंजी मानव न कभी जिंदा रहा है, न रह सकता है. रोजगार बिना पूंजी के नहीं हो सकता. बिना रोजगार गरीबी नहीं मिटती. मानसिक व शारीरिक सुख बिना पूंजी नहीं मिल सकता.

पूंजी धन संचय किए बिना नहीं बनती. धन बिना मेहनत किए नहीं आता. और आमदनी से कम खर्च किए बिना धन पूंजी नहीं बन सकता. व्यक्ति ही पूंजी बनाता है, वह ऊपर से नहीं टपकती. सरकार (यानी राजनीतिबाज) उसे जब्त कर सकती है, नष्ट कर सकती है, पर बना नहीं सकती.

पूंजी तो व्यक्ति ही बनाता है. जब तक उसे पूंजी बनाने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाएगा, तब तक न देश में रोजगार बढ़ेंगे, न बेकारी कम होगी और न ही समृद्धि आएगी.

जिस देश में करोड़ों लोगों को भरपेट भोजन न मिलता हो, वहां पूंजी और पूंजीपतियों को गालियां दे कर राजनीतिबाज उन्हें बेवकूफ तो बना सकते हैं पर उन का पेट नहीं भर सकते. उन का पेट तो तभी भरेगा, जब देश में पर्याप्त कलकारखाने और उद्योगधंधे होंगे. और वे तब होंगे जब देश में पर्याप्त पूंजी होगी. याद रखिए, पूंजी और गरीबी का आपस में बैर है. पर राजनीतिबाजों ने उसे गरीब और पूंजीपति का बैर बना दिया है.

पूंजी बनाइए, पूंजीपति बनिए. पूंजी व्यापारउद्योग में लगाइए, स्वयं काम में लगिए. दूसरों को रोजगार दीजिए. यदि व्यक्तिगत पूंजीवाद से आप को चिढ़ है तो सरकार को ही उधार दीजिए--बैंक में धन जमा कर के, सरकारी बांड, सेविंग सर्टिफिकेट खरीद कर. वैसे समाजवाद यानी सरकारी पूंजीवाद से कोई समृद्ध नहीं बन सकता. इस से केवल राजनीतिबाज ही समृद्ध और शक्तिशाली बनता है.●

पूंजी बनाइए, नए रोजगार पैदा कीजिए, देश को समृद्ध कीजिए.

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यूनियन

जहीर नियाजी

मजदूरों को और भी समस्याओं में उलझाने का एक घृणित षड्यंत्र.

सरकारी संस्थानों में बेलगाम अधिकारी तो सामान्य मजदूरों को लूटते और उन्हें शोषित तथा प्रताड़ित करते ही हैं, मजदूर यूनियनें भी उन्हें दोनों हाथों से लूटती हैं और जिस तरह खून करने के आदी अपराधियों को एक साथ दसदस प्राणियों का खून कर डालने पर भी अफसोस नहीं होता, उसी तरह इन यूनियन वालों को भी मजदूरों के हक पर डाका डालने पर कोई अफसोस नहीं होता. इस के विपरीत अकसर इन्हें अपने इन काले कारनामों पर खुशी ही होती है.

अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए एक मिसाल देना उचित होगा.

दिसंबर का महीना था. कड़ाके की सर्दी थी. एक सरकारी कारखाने के कार्यकारी अभियंता के कार्यालय के बाहर एक बहुत बड़ा अलाव जल रहा था. काम करने वाले इस अलाव के इर्दगिर्द सो रहे थे, क्यों न सोते जब सुपरवाइजर खुद घोड़े बेच कर खर्राटे भर रहा था. घोड़े बेचने वाली बात पुरानी पड़ गई है और यहां मशीनी माहौल में फिट भी नहीं बैठती. अतः सीधेसादे शब्दों में कहा जाए तो वह कुछ छोटी मशीनें और कुछ बड़ी मशीनों के पुर्जे बेच कर और उस से मोटा मुनाफा कमा कर सुख की नींद सो रहा था. चोरीचकारी को रोकने की खातिर रात की पारी पर जो पहरेदार थे वे भी पहरा देने के बजाए सो रहे थे. इस अलाव के इर्दगिर्द ही लुढ़के पड़े थे.

मजदूर की पत्नी की व्यथा

अभी सूर्योदय में कुछ देर थी, पर हर रोज की तरह वह लड़की उस दिन भी भोर में ही चली आई थी. आते ही टोकरा किनारे रख अलाव की आग से उन जले हुए टुकड़ों को बटोरने लगी जिन में फिर जलने की क्षमता थी. काफी देर तक जलते रहने से कोयले के इन टुकड़ों का जहरीला धुआं बड़ी हद तक खत्म हो गया था. वह लड़की उन कोयलों को टोकरे में डालने लगी और जिन में अभी आग थी उन्हें लोहे की एक छड़ से कुरेदकुरेद कर अलाव से अलग जमीन पर फैलाने लगी ताकि वे ठंडे हो जाएं. उस दिन भी उस के बदन पर कपड़े के नाम पर एक गमछानुमा मैलीकुचैली और फटी सी साड़ी थी और कुछ नहीं. मुझ से रहा नहीं गया और मैं ने उस से कहा--

"पिछले दो मास से मैं तुम्हें बस इसी एक फटी साड़ी में देख रहा हूं. क्या तुम्हारे पास और कोई कपड़ा नहीं है?"

मेरी बात सुन कर उस की दशा अजीब सी हो गई. फिर भी वह चुप ही रही. मैं ने अपने प्रश्न को फिर दोहराया, "क्या तुम्हारे पास और कोई कपड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नही है?"

"कपड़ा कहां से रहे, बाबू, पेट ही मुश्किल से भरता है. एक टोकरे के पचास पैसा ही तो देता है होटल वाला सेठ." उस की आंखें छलछला पड़ी थीं, यह कहते-कहते.

"तुम्हारा आदमी नहीं?"

"है बाबू, पर मैनेजर की हत्या में फंसा दिया था उसे यूनियन वालों ने."

इस आदिवासी लड़की का नाम लाली था. इस के पति को यूनियन वालों ने हत्या के मामले में फंसा दिया था, हालांकि असल हत्यारा स्वयं यूनियन का लीडर था. पर फंसा दिए गए थे करीब 100 मजदूर. हत्या जिस की हुई थी वह एक मैनेजर था. हड़ताल काफी दिनों से जारी थी. मजदूरों की सहनशक्ति जब जवाब देने लगी और वे लीडर पर समझौता कराने और हड़ताल खत्म कराने के लिए जोर डालने लगे तो लीडर साहब मैनेजर साहब से बोले, "हड़ताल खत्म कराने का रास्ता निकालो."

मैनेजर ने मजदूरों के सामने ही कहा, "हमें क्या कहते हैं, नेताजी, शुरू आप ने कराई है, खत्म भी आप ही कराइए."

हंगामे से हम

बात भी सही थी. मजदूर हड़ताल के पक्ष में नहीं थे. उन की मांगें भी कुछ ऐसी न थीं जिन को ले कर हड़ताल की नौबत आती. हड़ताल तो नेताजी ने अपने तथा अपनी लीडरशिप की खातिर कराई थी. इन का जिस पार्टी से संबंध था उस का सिद्धांत ही यही था—'हंगामे से हम!' यानी हंगामा है तभी हम भी हैं, हंगामा नहीं तो हम भी नहीं. इधर काफी समय से इस इलाके में कोई हंगामा, कोई हलचल, कोई शोरशराबा, कोई खूनखराबा नहीं हुआ था. हंगामे के बूते पर जिंदा रहने वाली पार्टी को अपना वजूद खतरे में घिरा नजर आ रहा था. सो उस ने यहां यह हंगामा खड़ा कर हड़ताल करा दी थी.

मैनेजर की बात बिलकुल सच थी और सच हमेशा ढोंगी और झूठे लोगों के लिए कड़ुवा हुआ करता है. सो नेताजी एकदम से क्षुब्ध हो उठे, आंखें लालपीली करते और गुर्राते हुए मैनेजर से बोले, "तो यह हड़ताल हम ने कराई है?"

"सच तो यही है, नेताजी." मैनेजर ने सच को दोहराने की हिम्मत कर डाली.

फिर क्या था. नेताजी एकदम से बिफर उठे. उन्होंने लाली के पति ललुवा मलकट्टा (कोल कटर) का गैंता अपने हाथ में लिया और झट से मैनेजर के सिर पर वार कर डाला. बेचारा मैनेजर 'उफ' भी न कर सका. उस का भेजा तक छितरा गया. यह दृश्य देख कर मजदूर घबरा गए. उन में से कुछ मैनेजर के शरीर को संभालने के लिए झुके. कुछ भाग खड़े हुए. नेता ने डांटाललकारा, "भागोगे तो मरोगे. जीना है तो इसे मारो. इस के बदन के टुकड़ेटुकड़े कर दो. सब मिल कर मारेंगे तो गिरफ्तारी आसान न होगी. तब पुलिस के लिए यह साबित करना मुश्किल होगा कि किस की मार से यह मरा. पर अगर तुम भाग जाओगे तो आसानी से मारे जाओगे, जेल में डाल दिए जाओगे."

पार्टी की साख

मजदूरों को नेता की यह बात समझ में नहीं आई. फिर भी उन में से कुछ ने नेता द्वारा मार डाले गए मैनेजर के मुर्दा शरीर को छलनी कर डालने की हिम्मत कर ही डाली. नतीजा यह हुआ कि घटनास्थल पर जो 100 के करीब मजदूर थे वे सब के सब पकड़ कर जेल में ठूंस दिए गए. नेताजी भी गिरफ्तार कर लिए गए, पर उन की पार्टी के प्रमुख लीडर ने उन्हें इस आधार पर छुड़वा लिया कि मजदूरों के हिंसक हो जाने पर नेताजी तो उन्हें शांत करा रहे थे.

इस तरह नेताजी साफ बच निकले और इस राज पर भी परदा ही पड़ा रह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गया कि नेताजी ने प्रबंधकों से कितनी मोटी रिश्वत ली थी. वह मैनेजर जिंदा रहता तो नेताजी का यह राज जरूर फाश कर देता, अतः नेताजी की नजर में उस का मार दिया जाना ही जरूरी था. मैनेजर की हत्या से एक बड़ा 'सियासी फायदा' भी हुआ था. अब नेताजी की पार्टी इस इलाके की दूसरी पार्टी पर अपनी धाक जमा सकती थी, "देखो, हमारी पार्टी में इतनी शक्ति है कि हम ने एक मैनेजर तक को खत्म कर दिया, फिर भी हमारा बाल बांका तक न हुआ. इस इलाके में अगर किसी पार्टी को जिंदा रहने का हक है तो वह सिर्फ हमारी पार्टी को है."

गोया इस पार्टी और इस के नेता लोगों ने अपने को जिंदा रखने की खातिर ही यह सब हंगामा किया था. कितने ही बेकसूर मजदूर इस के कारण जेलों में ठूंस दिए गए, उन की नौकरियां गईं, उन की औरतें--मां, बीवी और बेटियां--ललुवा मजदूर की पत्नी लाली की तरह गमछानुमा साड़ी से अपने शरीर की लाज को ढांपने की नाकाम कोशिश करती हुई कहीं तो बुझा हुआ कोयला बेचने लगीं, कहीं एकदो रुपए के लिए अपना शरीर ही बेचने पर मजबूर हो गईं. यह तो सिर्फ एक मिसाल है, एक इलाके की. ऐसी न जाने कितनी मिसालें इस देश की मशीनी जिंदगी में होंगी.

नेताओं द्वारा शोषण

आश्चर्य तो यह देख कर होता है कि ये भ्रष्ट नेता इतने बेशर्म क्यों हैं. मैनेजर का असल हत्यारा जब कुछ वर्षों बाद पार्टी से इस आरोप में निकाल दिया गया कि 'यह घूसखोर है' तब कुछ लोगों ने हिम्मत कर के उस की पार्टी वालों को टोका, "आप लोग तो कहते थे कि यह नेता सच्चा राष्ट्रभक्त और मजदूरों का हितैषी है, फिर यह अचानक बेईमान और घूसखोर कैसे हो गया?"

तभी एक जानकार ने धीरे से कहा, "आजकल यह नेता ऊपर वाले नेताओं को हिस्सा नहीं दे रहा था." इस पर किसी ने कहा, "असल में ऊपर वाले नेता नीचे वाले नेताओं से कहीं ज्यादा बेशर्म हैं."

यूनियन के लीडरों के शोषण का शिकार आम मजदूर ही होते हैं, अधिकतर चौथी श्रेणी में आने वाले सामान्य मजदूर ही. पर कभीकभी ऊंची श्रेणी का मजदूर भी कुछ विशेष कारणों से इन का शिकार हो जाता है. एक कारखाने में एक बहुत बड़ी ड्रिलिंग मशीन (कोई 30 लाख रुपए लागत की) बिगड़ी पड़ी थी. सभी सीनियर मैकेनिकों ने जवाब दे दिया था. सहदेवन नामक एक जूनियर मैकेनिक ने उस मशीन को ठीक करने का बीड़ा उठाया.

जब सहदेवन मशीन को ठीक करने में जुटा हुआ था तो एक ईमानदार सुपरवाइजर ने कुछ कर्त्तव्यनिष्ठ फिटरों से कहा, "एक सहदेवन है जो इस बिगड़ी मशीन को ठीक करने में जीजान से जुटा हुआ है और एक वे सीनियर मैकेनिक हैं जो काम के घंटों में भी कैंटीन में बैठ कर यूनियन की बातें करते हैं या अपने साइड बिजनेस की."

"साहब, यही तो धांधली है सरकारी क्षेत्र के कारखानों में," एक फिटर बोला, "सरकारी अफसर यूनियन के लीडरों से डरते हैं. वे हाजिरी करा कर घूमते रहें, उन्हें टोकने की हिम्मत किस में है? वे सीनियर मैकेनिक भी महज इसलिए बना दिए गए हैं कि यूनियन के लीडर हैं. जो काम जानते हैं उन की तरक्की भले न हो, पर यूनियन के नकारा लीडरों की हर साल तरक्की जरूर होनी चाहिए."

आपसी षड्यंत्र

इस तरह की बातों के बीच जब सहदेवन की कुछ ज्यादा ही प्रशंसा होने लगी तो यूनियन से संबंध रखने वाले सीनियर मैकेनिक उस से बुरी तरह जलने लगे और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वे ऐसे मौके की ताक में रहने लगे जिस से वे सहदेवन को नीचा दिखा सकें. संयोग से उन्हें यह मौका जल्दी ही मिल गया. सहदेवन ने मशीन ठीक कर दी थी. टैस्ट भी कर लिया गया था, अतः स्थानीय अधिकारियों ने मुख्य कार्यालय के अफसरों से सहदेवन को तरक्की व पुरस्कार दोनों दिए जाने की भरपूर सिफारिश की.

जिस दिन पुरस्कार दिया जाना था, उस दिन यूनियन के कुछ षड्यंत्रकारी नुमाइंदों ने सहदेवन के खिलाफ षड्यंत्र रचने की तैयारी कर ली थी. इन नुमाइंदों में निर्मल नाम का एक सीनियर मैकेनिक सहदेवन की दोस्ती का दम भरता था. पर यह सब ऊपरऊपर से था, अंदर से उस के दिल में सहदेवन के लिए जलन व ईर्ष्या की आग सुलगती रहती थी.

चीफ इंजीनियर की इच्छा थी कि पुरस्कार समारोह में उपस्थित लोगों के सामने ड्रिलिंग मशीन को चालू कर के दिखाया जाए. इंजीनियर महोदय की एक आंख जरा टेढ़ी थी और एक कान से कुछ कम सुनाई देता था. अतः वह बगडेरे और बहरे मशहूर थे. काम शुरू हुआ तो इंजीनियर साहब बीट की ओर इशारा कर के बोले, "ऐंगल जरा टेढ़ा लगता है."

सहदेवन हैरान था, क्योंकि टेढ़ावेढ़ा कहीं नहीं था. निर्मल ने सहदेवन के कान में कहा, "साहब से बोलो न कि वह जरा चश्मा उतार कर देखें."

सहदेवन चुप रहा, मगर निर्मल ने बारबार ऐसा कहने को कहा. इस पर उस के मुंह से निकल ही गया, "साहब, जरा चश्मा उतार कर..."

साहब उस का मुंह ताकने लगे तो निर्मल ने फिर उस के कान में कहा, "अरे, साहब तो ठहरे बहरे. तुम खुद उन की नाक से चश्मा उतारने के लिए हाथ बढ़ाओ."

सहदेवन इस पर झिझका पर निर्मल बोला, "इस में झिझकने की क्या बात है? साहब कह रहे हैं तो उन्हें सही बात तो बतलानी ही होगी."

सहदेवन ने झिझकतेझिझकते साहब की ऐनक की ओर हाथ बढ़ाया, "साहब, यह चश्मा..."

अभी वह पूरी बात भी न कह पाया था कि साहब बिफरे शेर की तरह गरज पड़े, "यू इडियट, नानसेंस. यह मेरा घोर अपमान," और पैर पटकते हुए वह आफिस की तरफ लपके. वहां कुछ खिचड़ी पकी और फिर कुछ ही देर में सहदेवन का नौकरी से मुअत्तल किए जाने का पत्र टाइप हो गया.

यहां बात साफ कर दी जाए कि यह चीफ इंजीनियर साहब चूंकि खुद ऐबदार थे अतः अपनी कुरसी बचाने की खातिर निर्मल वाली यूनियन के पोषक थे. सहदेवन को पहले तो मुअत्तल किया गया, फिर बर्खास्त. कसूर मढ़ा गया, "सहदेवन ने चीफ इंजीनियर का न सिर्फ चश्मा उतारा बल्कि उन पर कातिलाना हमला भी किया." इस केस में बतौर चश्मदीद गवाह के जिन लोगों ने दस्तखत किए उन में सब से पहले दस्तखत निर्मल के थे.

इस तरह एक कर्मठ, योग्य और कुशल मैकेनिक को तरक्की व प्रोत्साहन देने की जगह नौकरी से हटा दिया गया. जाहिर है कि इस खुल्लमखुल्ला धांधली, जुल्म और घोर अत्याचार का अन्य ईमानदार कर्मचारियों पर कितना बुरा असर पड़ा होगा.

इस तरह की कई मिसालें हैं और अपनी 20 वर्ष की लंबी नौकरी में मैं खुद इन का गवाह हूं. इन 20 वर्षों में बीसियों ऐसे तजरबे हुए जिन्हें प्रकाशित करना अपनी मौत को दावत देना है.

जब मैं जनरल मजदूर की हैसियत से एक अर्ध सरकारी उद्योग में नियुक्त हुआ तो मेरे आचारविचार से परिचित होने के बाद कुछ तजरबेकार लोगों ने कहा, "तुम्हारे जैसे लोग इस गंदे माहौल में कभी खुश नहीं रह सकते. वैसे खुद को खुश रखना है तो यूनियन वालों को खुश रखो."

तजरबेकार मजदूर का सुझाव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तजरबे की भट्ठी में तप उस वरिष्ठ मजदूर ने यह भी राज उगला था, "जिस यूनियन का बोलबाला है, उस के लीडरों की चमचागीरी करोगे तो जूनियर हो कर भी सीनियर से पहले तरक्की पाओगे और अगर इन से टकराओगे, इन के गलत कामों की आलोचना करोगे तो सीनियर हो कर भी सड़ते रह जाओगे. अरे भैया, इन का तो यह नारा ही है 'जो हम से टकराएगा, चूरचूर हो जाएगा,' सो, भैया, चूरचूर होना है तभी इन से टकराओ."

उस तजरबेकार मजदूर की बात सवा सोलह आने सच साबित हुई. जो मजदूर कतई बेबस और बेजान थे वे तो पिसते रहने के बाद भी आवाज नहीं उठा पाते थे. जो जरा साहस वाले थे, आवाज उठाने की हिम्मत रखते थे, उन का बड़ी आसानी से तबादला कर दिया जाता या ऐसे 'बर्फ यार्ड' में लगा दिया जाता, जहां वे जिंदा कब्र में दफन हो कर रह जाते. शोषण की यह स्थिति पहले के मुकाबले आजकल कुछ ज्यादा ही भयंकर रूप धारण कर गई है. अफसरों द्वारा मजदूरों का शोषण किया जाना इतना विचित्र नहीं, जितना कि मजदूरों द्वारा मजदूरों का शोषण किया जाना. यह कितनी शर्म की बात है कि यूनियन में शामिल कुछ मुट्ठी भर मजदूर अपने ही साथी मजदूरों को लीडरों के हाथों न सिर्फ लुटते हुए देखते हैं बल्कि खुद भी उन्हें लूटते हैं.

कहा जाता है कि मजदूरों के लिए अपनी मांगों को मनवाने के लिए सब से कारगर हथियार है हड़ताल. पर सच्ची बात इस के बिलकुल विपरीत है. हड़ताल मजदूरों के लिए नहीं, यूनियन वालों के लिए सब से बड़ा हथियार है. स्वयं को जिंदा रखने का हथियार. आज भारत का 95 प्रतिशत मजदूर तबका हड़ताल नहीं चाहता. वह इस राष्ट्रीय फलसफे को नहीं समझता है कि इस से हमारे राष्ट्र का नुकसान होता है. तब भी इस फलसफे को जरूर समझता है कि जब एक दिन का खाना जुटाना ही हमारे लिए मुश्किल होता है, तब हड़ताल करने पर कैसे होगा? हम और हमारे बीवीबच्चे क्या खाएंगे?"

हड़तालें कैसे होती हैं?

अब प्रश्न उठता है कि आम मजदूरों के न चाहने के बावजूद हड़तालें कैसे होती हैं?

इस प्रश्न के उत्तर में ही आम मजदूरों की बेबसी और मजबूरी छिपी हुई है. 95 प्रतिशत आम मजदूरों के चाहने न चाहने से क्या होगा? होगा वही जो पांच प्रतिशत मजदूर चाहेंगे, क्योंकि मजदूर-दुनिया की हलचल भरी गाड़ी इन पांच पहियों पर ही चलती है. ये पांच पहिए ही इंजन का काम करते हैं. जब इंजन चलेगा तो उस के साथ जुड़े डब्बे तो चलेंगे ही. हां, इन 95 प्रतिशत मजदूरों की हैसियत इंजन के साथ जुड़े हुए डब्बों से अधिक कुछ नहीं. डब्बों में माल होता है, मुसाफिर होते हैं, फिर भी उन में क्षमता नहीं होती कि अपनी इच्छा से चल सकें. यह क्षमता तो इंजन में ही होती है कि वह इन्हें पूर्व की ओर ले जाए या पश्चिम की ओर, उत्तर की ओर ले जाए या दक्षिण की ओर.

अब अगर जयचंद की सिफत वाले ये पांच प्रतिशत मजदूर हड़तालें कराते भी हैं तो इन का क्या बिगड़ता है? इन के तो पौ बारह हैं, इन के अपने साइड बिजनेस हैं. इन में से कितने ही ऐसे हैं जो मजदूर वर्ग में शामिल हो कर भी अच्छेखासे साहूकार हैं. सूदखोरी इन का महाजनी धंधा है और ये जोंक की तरह अपने ही मजदूर भाइयों का खून पीते हैं. ये तो मनाते हैं कि हड़तालें हों ताकि भूख से बिलखतड़प रहे मजदूर इन से भारी सूद पर, मनमानी शरह पर कर्ज लें.

इन पांच प्रतिशत यूनियनपरस्त मजदूरों के और भी कई धंधे हैं, हेराफेरी के पचासों धंधे. इसलिए हड़ताल से, घेराव

से, तोड़फोड़ से इन्हें क्या नुकसान? देश का नुकसान होता है तो होता रहे. राष्ट्रहित और मजदूरहित जहन्नुम में जाता है तो जाता रहे. गाजियाबाद जले या अहमदाबाद, दिल्ली को आग लगे या बंबई को या पूरे देश को. इन की बला से.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नेहरू व इंदिरा की कांग्रेसी सरकार में भी हड़तालें हुईं, तोड़फोड़ हुए. इन में से किसी एक में भी हड़तालें कराने वाले ये यूनियनिस्ट मजदूरों का फायदा नहीं करा सके. हमेशा नुकसान ही हुआ.

अब मोरारजी की जनता सरकार में भी ये लोग वही करा रहे हैं. लोग तो वही हैं सिर्फ चोले बदल लिए हैं. इंदिराभक्ति के नशे में कल तक यही लोग जयप्रकाश नारायण को गद्दार कहते थे. अब जब सत्ताधारी पार्टी की यूनियन टूटी तो झूठ से चोले बदल कर जनता पार्टी समर्थित यूनियन में शामिल हो कर उसी जबान से जे. पी. की वफादारी और ईमानदारी का गुणगान करने लगे और इस गुणगान के बावजूद अपनेआप को जिंदा रखने के लिए इन की तोड़फोड़ की राजनीति जारी है. और शायद उस वक्त तक जारी रहेगी जब तक कोई सच्चा नेता, सच्चा यूनियनिस्ट पैदा न होगा.

पर सिर्फ कल्पना कर लेने से व सपना देख लेने से तो कोई सच्चा नेता पैदा नहीं हो जाता. हमारे ये 'डालडा मेड' पेशावर नेता तो खरे नेता बनने से रहे. तब क्या हो? तब यह हो कि ये 95 प्रतिशत आम मजदूर ही अपनेआप को संगठित करें. पेशावर लीडरों का बिलकुल बाइकाट करें. वे उन पेशावर लीडरों का भय दिल से निकाल दें और अपनी सारी समस्याओं को सीधे प्रबंधकों के सामने रखें और स्वस्थ, सुखद और रचनात्मक माहौल में उन का हल निकालें.

इधर प्रबंधकों पर भी यह राष्ट्रीय, नैतिक व मानवीय जिम्मेदारी आयद होती है कि वे इन्हीं लोगों से सीधा संपर्क स्थापित करें.

इन के नाम पर बने हुए यूनियन के पेशावर लीडरों को मुंह भी न लगाएं. हंगामा और हड़ताल से नफरत करने वाले ये 95 प्रतिशत मजदूर अगर पेशावर यूनियनबाजों के शिकंजे से मुक्त हो गए तो उसी दिन देश भर के कलकारखानों और उद्योगधंधों में एक सुखद, स्वस्थ और सुनहरा इनकलाब आ जाएगा. ●

सरिता-मुक्ता के महत्त्वपूर्ण रिप्रिंट

पहला सैट	**दर**
लगभग 25 रिप्रिंट	3.00
दूसरा सैट	
लगभग 32 रिप्रिंट	5.00
तीसरा सैट	
लगभग 24 रिप्रिंट	3.00

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

85:4078

मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सौंदर्य प्रतियोगिताएं

कृष्णा चोपड़ा

अर्थात हुस्नबाजी का एक धंधा

"तुम्हारी छातियों का उभार कितना है? दिखाओ!"

"तुम्हारे नितंबों में कितना तनाव है? जरा घूमो तो!"

"तुम्हारी कमर में लोच कितनी है? चल के दिखाओ!"

"तुम्हारी टांगों के खम कैसे हैं? देखें जरा!"

"मांस ढीला तो नहीं?"

"जांघों पर रोम तो नहीं?"

"कूल्हे पुष्ट हैं न?" वगैरा, वगैरा...

इस तरह के सवाल करती हुई निगाहें किन की हैं? पहचानते हैं? क्या इन सवालों ने आप को किताबों में पढ़े वे सौदागर लोग याद दिला दिए जो गुलाम औरतें खरीदने के लिए मंडियों में बोली देने जाया करते थे? लेकिन ये तो नजरें आज के उन सभ्य और सुशिक्षित जजों की हैं जो सौंदर्य प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाली जवान लड़कियों के जिस्मों पर 'मिस शिमला,' 'मिस मसूरी,' 'मिस इंडिया,' या 'भारत किशोरी' यानी 'टीन प्रिंसेस' और फिर 'मिस यूनीवर्स' यानी 'विश्व सुंदरी' आदि लेबल चिपकाया करते हैं.

सौंदर्य मापन या धंधा

गुलामों की मंडियों में बिकने के लिए जाने वाली जवानियों के सामने बेशुमार मजबूरियां हुआ करती होंगी, यह बात साफसाफ समझ में आ सकती है. इसलिए उन्हें अपना अंगअंग उघाड़ कर दिखाना पड़ता था. खरीददारों को भी क्योंकि रकम लगानी पड़ती थी और फिर बाद में खरीदी हुई गुलाम औरतों को आजीवन पालना पड़ता था, लिहाजा वे अगर औरत को भी घड़े या सुराही की तरह ठोकबजा कर खरीदते थे, तो बेजा कुछ नहीं करते थे. तिस पर यह व्यापार तत्कालीन समाज में नैतिक माना जाता था, अतः जायज था और इस धंधे को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त थी. खुले आम और बाकायदा मंडियां लगा कर यह कारोबार किया जाता था, जहां देशविदेश की जवान और तंदुरुस्त लड़कियां तथा औरतें और मर्द बिकने के लिए जुटाए जाते थे.

लेकिन आजकल की सौंदर्य प्रतियोगिताओं में ऐसा क्यों होता है? इन में न तो भाग लेने वाली जवानियों के सामने कोई मजबूरी होती है (बल्कि मजबूर तबकों की लड़कियां इस तरह की नुमाइश से हमेशा दूर रहती हैं!) और न ही परखने वालों की गांठ से कुछ जा रहा होता है, तो फिर ऐसा होता क्यों है?

तो क्या सिर्फ शौक के लिए यह सब होता है? आए दिन संसार के किसी न किसी भाग में सौंदर्य प्रतियोगिता का समाचार पढ़ने को मिलता है, पहले सिर्फ पश्चिमी देशों से ही इस तरह की खबरें आया करती थीं, लेकिन अब दुनिया का शायद ही कोई देश बच रहा हो. (यहां तक कि भारत जैसे नैतिक और अफ्रीका के हबशियों के मुल्क में भी यह महामारी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खूबसूरती के इस नकली मापदंड की आड़ में चलने वाली अनैतिक व अभारतीय व्यापारिक चालबाजी का सामाजिक तौर पर बहिष्कार क्यों नहीं किया जा रहा है?

फैल गई है.)

इस काम के लिए कोई मौसम भी निश्चित नहीं है. सर्दी हो या गरमी, बरसात हो या पतझड़, हर वक्त इस का सीजन ही सीजन है. लेकिन हर मुल्क में इस तरह के कारोबार के लिए कुछ खास अड्डे तय हैं. और अगर आप गौर करें तो साफ पता चलेगा कि ये अड्डे वही हैं जहां दुनिया के ऐयाश रईस सेहत सुधारने, छुट्टियां मनाने, तफरीह करने या मनोरंजन का मजा लूटने जुटते हैं. उन्हें क्योंकि चंद दिन लुत्फ ले कर अपनेअपने कामधंधों पर वापस लौट जाना होता है इसलिए ये लोग बड़ी आसानी के साथ उन कुछ निहित स्वार्थों के चंगुल में आ जाते हैं जिन के लिए इस तरह की हुस्न की नुमाइशें लगाना एकमात्र धंधा है और जो इस प्रक्रिया से खूबसूरत लड़कियां चुनचुन कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना गुप्त व्यापार चलाते हैं तथा इन सुंदरियों के माध्यम से बड़ेबड़े सौदे तय कराते हैं.

मगर इस घृणित उद्देश्य पर सांस्कृतिक परदे डाल कर या फैशन की टट्टी लगा कर अपने दामन बेदाग रखने की साजिश की जाती है.

चाहे कोई वस्त्रों या आभूषणों की कंपनी हो या गोल्फ खिलाने वाला क्लब अथवा महिलाओं की फैशनी पत्रिका, पर जब ये सौंदर्य प्रतियोगिताएं आयोजित करती हैं तो आड़ के रूप में ही करती हैं, असली उद्देश्य कुछ और ही होता है.

इस लेख की लेखिका को भी एक बार एक सौंदर्य प्रतियोगिता का पूरा तमाशा देखने का अवसर मिला था. छुट्टियां बिताने शिमला गई हुई थी कि सुना अमुक क्लब में 'मिस शिमला' का चुनाव होने वाला है. महज वक्त काटने या शाम बिताने के खयाल से नहीं, बल्कि इस ढोल की पोल जानने के विचार से निश्चित समय पर क्लब में जा पहुंची. नगर भर में जुटे उत्तर भारतीय ऐयाश रईसों और बड़ेबड़े पदाधिकारियों तथा सैनिक अफसरों की भीड़ जमा थी, शराब के दौर और पश्चिमी साजों की उत्तेजक धुनें अपने चरमोत्कर्ष पर थीं. ज्योंज्यों रात घिरती आ रही थी, वातावरण में गरमी आती जा रही थी, हालांकि बाहर बर्फ गिर रही थी.

लेकिन प्रतियोगिता में भाग लेने वाली युवतियां केवल जांघिया और अंगिया पहने हुए इसउस के संग डोलनाच रही थीं. यह बेमालूम सी शरीर के रंग की लिबास बहुत नजदीक से देखने पर ही दिखाई पड़ सकती थी.

संक्षेप में उस रात का अनुभव यह रहा कि जो लड़की सब से अधिक बेबाकी के साथ हर किसी के संग बगलगीर हो रही थी और हर संभव प्रयास कर के अपने कामुक हावभाव से दूसरों को मोहित करने की कोशिश कर रही थी तथा रात के दो बजे तक जिस की हालत यह हो गई थी कि बेतरह नशे में चूर थी और अपने शरीर की सुधबुध भूल चुकी थी, वही 'मिस शिमला' घोषित कर दी गई-

यह ठीक है कि उस के कूल्हों, कमर और कुचों के घेर संतुलित थे तथा सौंदर्य के सामान्य मापदंडों पर खरे उतरते थे, लेकिन यह माप तो लगभग सभी महिला प्रतियोगियों का ठीकठाक ही था. हर किसी के शरीर के अंगों की माप बाकायदा इंचटेप से नापनाप कर जांच ली गई थी.

क्या यह अनैतिक नहीं?

यहीं पर एक प्रश्न उठता है कि सौंदर्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का यह मापदंड क्या भारतीय मानकों के अनुरूप है? यदि नहीं, तो क्या ये सौंदर्य प्रतियोगिताएं भारतीय दृष्टि से अनैतिक नहीं? और क्या ऐसे में यह नहीं कहा जा सकता कि इन में भाग लेना भारतीय युवतियों के लिए अनुचित है?

हम फतवे देने के विरुद्ध हैं. अतः ठोस तर्कों के आधार पर ही इस बात का औचित्यअनौचित्य सिद्ध करेंगे.

केवल भारतीय ही नहीं, सौंदर्य की विश्वव्यापी वास्तविक परिभाषा यह है कि असली सुंदरता वह है जो भीतरबाहर से यानी समग्र रूप में आकर्षक हो तथा देखने वाले की दृष्टि के साथसाथ मन को भी मोह ले. शायद इसी लिए हमारे यहां सूरत से ज्यादा सीरत को खूबसूरती का पैमाना माना गया है. और नारी के शील को तथा उस के संकोची स्वभाव को उस की सीरत की सब से बड़ी कसौटियों के रूप में स्वीकार किया जाता है. शील और संकोच को दब्बूपन या कायरता से बिलकुल अलग, बल्कि विरोधी प्रवृत्ति भी माना जाता है. इस बात का प्रमाण हमारे यहां की नारियों के चरित्र हैं जो मौका पड़ने पर अपने सारे शील, संकोच के बावजूद सीना तान कर हर मुसीबत का मुकाबला करने को उद्यत हो जाती हैं.

भारतीय सौंदर्य का प्रतिमान नारी के शारीरिक अनुपात के अतिरिक्त भीतरी सौंदर्य में निहित है. यहां की नारी में कामकाजी होते हुए भी एक घरेलूपन है. घरेलूपन का मतलब फूहड़पन या पिछड़ापन नहीं, बल्कि वह अपनापन है जो पुरुष को परिपूर्णता प्रदान करने वाला सब से बड़ा तत्त्व है.

सिर्फ 36 इंच छाती, 24 इंच कमर और 36 इंच कूल्हे होना भी भारतीय सुंदरी कहलाने के लिए काफी नहीं है.

सौंदर्य की यह पश्चिमी नापतोल की रीति आज हमारे देश का बहुत बड़ा अहित करती नजर आ रही है. स्कूलोंकालिजों की लड़कियां यास्मीन दाजी और रीता फरिया या 'टीन प्रिंसेस' अथवा 'मिस इंडिया' और 'मिस वर्ल्ड' बनने के चक्कर में एक अजनबी किस्म का छिछोरपना विकसित करने लगी हैं. इसी छिछोरपने के कारण वे अकसर गलत लोगों के जाल में फंस कर अपना जीवन नष्ट कर डालती हैं.

पत्रिकाएं ही रोक सकती हैं

खूबसूरती के इस नकली मापदंड की वजह से भारतीय नारी अपना शील खो कर, घरपरिवार से टूट कर मात्र एक मादा बन कर न रह जाए, इस खतरे को टालने के लिए यह बहुत जरूरी है कि इन तथाकथित सौंदर्य प्रतियोगिताओं की आड़ में चल रहे अनैतिक तथा अभारतीय व्यापार का सामाजिक बहिष्कार किया जाए. इन प्रतियोगिताओं के विरुद्ध जनमत तैयार करने की दिशा में भारतीय पत्रपत्रिकाएं एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं.

इस प्रकार की प्रतियोगिताएं आयोजित करने वाली संस्थाओं का विरोध करना तथा इन के काले कारनामों का रहस्योद्घाटन करना भी उतना ही जरूरी है ताकि जनता के सामने इन अनैतिक अड्डों की पोल खुल सके.

भारत में इस तरह के विदेशी संस्थानों को अपना जाल फैलाने से रोकने के लिए सरकारी तौर पर कदम उठाए जाने चाहिए.

'इफ्यूना' नामक एक संयुक्त राष्ट्रीय संस्था ने हाल ही में दिल्ली के समाचारपत्रों में एक घोषणा की है कि 18 से 30 वर्ष तक की उमर वाली स्त्रियों और पुरुषों में से 'संयुक्तराष्ट्र सम्राट' तथा 'संयुक्तराष्ट्र सम्राज्ञी' का चुनाव किया जाएगा. इस सिलसिले में विज्ञापन का स्थान बुक करने वाली कानपुर की एक व्यापारिक कंपनी है. चुनावस्थल अशोका होटल रहेगा. चुनाव की रात को बालरूम डांस का आयोजन है.

इस प्रकार की गतिविधियां सांस्कृतिक गतिविधियां नहीं हो सकतीं---कम से कम भारत के लिए तो बिलकुल नहीं.

87:4078

मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वैज्ञानिक ज्ञान बनाम अध्यात्म ज्ञान

सुदर्शन चोपड़ा

मस्तिष्क की स्थिरता के बाद अणुबम क्यों?

वैज्ञानिक ज्ञान से परिचित हर व्यक्ति आज बड़ी आसानी से इतना तो कह सकता है कि धर्मग्रंथों में सृष्टि की रचना और मनुष्य की उत्पत्ति की जो अटकलें भरी पड़ी हैं उन में से किसी एक को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता. न तो पृथ्वी शेषनाग के फन पर टिकी हुई है, न बैल के सींग पर और न किसी दैवी पुरुष ने मनुष्य को अपनी पसली से पैदा किया. यह भी सत्य नहीं है कि छः दिन में ऊपर-नीचे सात आसमान और सात जमीनें बना डाली गईं और मनुष्य को धरती पर उतार दिया गया. धरती और मानव की कहानी तो संक्षेप में इस प्रकार है कि किसी समय पृथ्वी दहकते हुए गैस का गोला थी, जिस में अणु बिखरे हुए थे. अणु धीरेधीरे निकट आने लगे और गुच्छा जैसा बनते गए. फिर विरस और बैक्टीरिया अस्तित्व में आए. उस के बाद बिना हड्डी के जंतु, अमीबा आदि पैदा हुए. फिर सीधे प्रकृति से आहार ग्रहण करने वाले स्थावर वनस्पति और दूसरों पर निर्भर रहनेवाले जंगम प्राणियों, मछलियों का युग आया. फिर जलस्थल प्राणी बन गए जिन में से कुछ ने हवा का तथा कुछ ने स्थल का मार्ग अपनाया. इस के बाद उन के मुंह से वाणी निकली. स्तनधारी वानर, और वनमानुष, फिर वनमानुष से आगे आधे वनमानुष दोपाए झाड़ियों में किलकिलाने लगे. इन्हीं में से कुछ जोड़े विकास की उस अवस्था में पहुंच गए जहां पहुंच कर जाति परिवर्तन होने लगा. इसी तरह से हमारे मानव वंश के आदिम पूर्वज बने.

आदिमानव मनुष्य कैसे?

वह समय लगभग बीस लाख वर्ष पूर्व का आंका जाता है. आज से दस लाख वर्ष पूर्व मानव हथियारधारी बनता दिखाई पड़ता है तथा पांच लाख वर्ष और बीतने पर तो उसे अपने पूर्वज 'सिपियन मानव' के रूप में दीखते हैं. मानव का आरंभिक विकास बहुत ही धीमा था पर उस काल की परिस्थितियों में वही विकास बहुत महत्त्व रखता है. जीने के लिए चेष्टा मानव के विकास में बड़ी ही सहायक सिद्ध हुई है. यह बात एक जबरदस्त तथ्य के रूप में स्थापित हो चुकी है और मानव का पूरा इतिहास इस बात का गवाह है, जब कि इसी चेष्टा को जबतब मंद करने की कोशिश हर युग में कुछ लोग अध्यात्म तथा धर्म के नाम पर करते आए हैं.

जो हो, उस काल को बीते लाखों वर्ष हो गए जिसे भूगर्भशास्त्री तृतीय काल कहते हैं. उसी युग के अंतिम काल में वनमनुष्यों की एक अत्यंत विकसित जाति पृथ्वी के किसी महाद्वीप—शायद वह अब हिंद महासागर में लुप्त हो चुका है—में रहती थी. वही लोग मानव जाति के सीधे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूर्वज थे. वे यूथ बना कर वृक्षों पर रहा करते थे. डालियों को पकड़ने, फल तोड़ने व अन्य कामों में लगातार इस्तेमाल में लाते हुए उन्होंने अपने हाथों को पैरों के काम से मुक्त कर लिया. आज भी वनमानुष सीधा खड़ा हो सकता है. चिंपेंजी (वनमानुष) धूपवर्षा से बचने के लिए वृक्षों की डालियों पर छत सी तैयार करता है, अपने हाथों में डंडा पकड़ कर शत्रुओं का सामना करता है और हाथ से ही फल या पत्थर वगैरा मारना भी जानता है.

वनमानुष के मुकाबले मनुष्य के हाथों में जो अधिक कुशलता पैदा हो गई है, वह हजारों वर्षों के अभ्यास और परिश्रम का ही फल है. परिश्रम का महत्त्व भी मनुष्य ने अपने लंबे अनुभव के बाद ही जाना, वरना तो वनमानुष में विकसित होने के समय से ले कर लगभग एक लाख वर्ष तक प्रगति की रफ्तार बहुत ही मंद रही. जितने समय में मानव ने चकमक पत्थर का पहला हथियार तैयार किया होगा, वह हमारे पूरे ऐतिहासिक समय से भी कई गुना अधिक रहा होगा. लेकिन एक बार जब हाथ मुक्त हो गए, रास्ता खुल गया. अब वह हथियार बना सकता था, रहने की जगह बना सकता था, तन ढकने को भी कुछ जुटा सकता था.

"सीधे खड़े हो सकने ने ही उस के हाथों को मुक्त कराया और बुद्धि ने उसे अनुभव बढ़ाने के योग्य बनाया. धीरेधीरे इन्हीं दोनों विलक्षणताओं ने उसे बाकी प्राणियों की अपेक्षा उच्चता प्रदान की." ब्रिटिश दार्शनिक बर्ट्रेंड रसल ने भी यही माना है. राहुल सांकृत्यायन के अनुसार भी यही स्थापित होता है कि 'हाथों के नएनए उपयोगों से नईनई नसनाड़ियों का भी विकास होता गया और उस के द्वारा हड्डियों पर भी प्रभाव पड़ा. फिर इन का आनुवंशिक--एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाना--तथा आगे चल कर इन आनुवंशिक साधनों का और भी बढ़ना, इस प्रकार क्रमशः मनुष्य का हाथ आज हर तरह काम ठीक तरह से करने के योग्य बन सका है.'

लेकिन हाथ शरीर से अलग नहीं है इसलिए शरीर का एक अंग दूसरे अंगों को भी प्रभावित करता ही है. इस प्रकार मानव के मस्तिष्क का आकार भी परिवर्तित होता गया और आज तक निरंतर हो रहा है. हालांकि बर्ट्रेंड रसल के अनुसार "आज से कई हजार वर्ष पूर्व मस्तिष्क का वह आकार स्थिर हो चुका था जो आज है और तब से ठहरा हुआ है."

मानव का बढ़ता प्रभुत्व

लेकिन यह स्थापना कई तरह से अमान्य सिद्ध की जा सकती है. एक तो यह कि कोई भी पदार्थ स्थिर नहीं हो सकता, दूसरा यह कि स्थिर वस्तु विकास में सहायक नहीं हो सकती, और तीसरा यह कि हाथ के नएनए उपयोगों द्वारा नईनई नसनाड़ियों के विकसित होने को अगर आधार मान कर चलते हैं तो इस बीच तथा हाल में और भी अधिक नएनए हस्तप्रयोग के जो ढंग मानव ने अपनाए हैं, क्या उन से मस्तिष्क की नसों में विकास और आकार का परिवर्तन न हुआ होगा?

सीधे खड़े हो सकने के फलस्वरूप हाथों के मुक्त होने तथा बुद्धि को अनुभव प्रसारित करने योग्य बनाने की बात स्वयं रसल ने भी स्वीकार की है. इसलिए यही मानना संगत होगा कि मस्तिष्क के आकारप्रकार की बराबर विकसित होती हुई स्थितियां ही आज मानव को उन्नति की इस अवस्था तक ले आई हैं. इसी के कारण उस की परिश्रम की शक्ति भी विकसित होती गई जिस के फलस्वरूप प्रकृति पर मानव का प्रभुत्व बढ़ता गया. परिश्रम के विकास का एक पहलू यह भी था कि वस्तुओं को अधिक से अधिक मात्रा में अर्जित किया जाए ताकि उन का अधिक से अधिक उपयोग किया जा सके और इस काम के लिए अधिक से अधिक व्यक्तियों के आपसी सहयोग की जरूरत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वैज्ञानिक अभी तक शरीर की नसों व कीटाणुओं की भी निश्चित रूप से खोज नहीं कर पाए, फिर अध्यात्मवादियों ने शरीर के भीतर 'आत्मा' नाम की अदृश्य वस्तु को कौन सी 'एक्स रे' मशीन से देख लिया?

थी. सहयोग के लाभ को देख कर और भी आगे बढ़ कर मनुष्य सहयोगशील होने की दिशा में आगे बढ़ा.

इस प्रकार सिद्ध हुआ कि मनुष्य को अस्तित्व में आते ही कोई बनाबनाया समाज नहीं मिल गया. प्रकृति को वश में कर के वह भोग उत्पादन के लिए सहयोगी परिश्रम और आत्मरक्षा के लिए बराबर मिलजुल कर रहने की कोशिश करता रहा, जिस की वजह से आगे चल कर उसे समाज बनाने की प्रेरणा मिली. फिर धीरे-धीरे समाज बढ़ते गए.

साथ ही शोकहर्ष आदि कितने ही भाव मनुष्य के मन में आते जिन्हें वह अपने सहयोगियोंसहचरों को सुनाता. इस तरह उस की ध्वनियों की संख्या बढ़ने लगी और ध्वनियंत्र में भी परिवर्तन होने लगे. वायु नाड़ी का शब्द बक्स पेचीदा छल्लों वाला बनने लगा, मुंह खुलने के ढंग और जबान में भी तब्दीलियां होने लगीं और वह धीरेधीरे ध्वनि ही नहीं वर्ण के उच्चारण भी करने लगा. इन्हीं सब कारणों से उस में चेतनाशक्ति और निश्चय की क्षमता का विकास हुआ और कल्पना शक्ति भी पैदा हुई. फिर इसी विकासक्रम ने आगे चल कर अभिव्यक्ति की सर्वोत्तम विधा, साहित्य को जन्म दिया.

पहले के मानव का लगभग सारा समय आहार की खोज में बीत जाता था. क्योंकि खाने योग्य फलफूल हर जगह और हर वक्त काफी तादाद में नहीं मिलते थे. इसी लिए वह इधरउधर भटका करता था. यही भटकन उसे पृथ्वी के अलग-अलग भागों में फैलाती गई. जब वह ठंडे स्थानों पर पहुंचा तो उस ने सर्दी से अपनी रक्षा के लिए तन ढकने और बंद जगह पर रहना जरूरी समझा.

फिर अन्य जीवजंतुओं से अपनी रक्षा के लिए जब उस ने हथियार बनाया और जानवर मारने शुरू किए तो फलाहारी मानव मांसाहारी बन गया. उस के बाद आहार के एक निश्चित साधन स्वरूप पशुपालन शुरू कर दिया, क्योंकि शिकार में सफलता कोई निश्चित नहीं रहती थी और समय व शक्ति बेकार जाती थी. पशुपालन से उसे मांस के अलावा दूध आदि भी प्राप्त हो गया.

धर्म व अध्यात्म का भंडाफोड़

इस प्रकार यूथों का मनुष्य अब कबीलों में आ बसा. फिर वह राष्ट्र और राज्य बना बैठा तथा आज विश्वराष्ट्र की कल्पना करने लगा है जिस से उस की सुरक्षा की समस्या सदा के लिए समाप्त हो सके.

मिल कर रहने के अनुभव ने जब यह सिद्ध कर दिया कि इस प्रकार जीवन को अधिक सुचारु रूप से चलाया जा सकता है, तब उस ने मिल कर रहने के नियम और नीतियां गढ़ लीं. इन्हीं नीतियों को आगे चल कर कुछ काहिल और कामचोर लोगों ने साजिश कर के धर्मों का रूप दे डाला ताकि उन की नेतागिरी भी बन जाए और वे कामधंधा करने की जहमत से भी बचे रहें.

बहरहाल, मिल कर रहने की आवश्यकता ही धीरेधीरे अभ्यास बन गई थी. प्रकृति तथा जीवजंतुओं के साथ संघर्ष ने मानव को सम्मिलित शक्ति की अनिवार्यता का बोध करा दिया था. अब अलगाव का अर्थ होता असुरक्षा को फिर से न्योता दे देना. साथ ही भविष्य की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुरक्षा का विचार भी मनुष्य में आ चुका था जिस का अंकुर बाद में चल कर सदाचार के रूप में फूटा. शुरूशुरू में तो किसी खास स्थिति और खास मकसद के लिए ही सामाजिक सदाचार के नियम निभाए जाते थे पर बाद में जैसेजैसे स्थितियां और प्रयोजन बदलते गए, सदाचार के नियम भी बदलते चले गए और आखिर सदाचार सामान्य दिनचर्या में भी जीवन का एक आवश्यक अंग बन गया.

मानव मस्तिष्क की बनावट ही कुछ इस तरह की है कि वह आने वाले कल की चिंता से मुक्त नहीं हो पाता. इसी चिंता की वजह से जहां एक ओर उसे अपनी सुरक्षा के लिए मिल कर रहने को मजबूर होना पड़ा, वहीं भविष्य को और भी अधिक निश्चित, सुरक्षित और सुखी बनाने के लिए उस ने तरहतरह के आविष्कार किए. पत्थर, लकड़ी और हड्डी के हथियारों से ले कर आज उद्‌जन बमों तथा राकेट और स्पूतनिक तक के आविष्कार इसी एक चिंता के प्रतिफल हैं.

पारस्परिक सहयोग ने आपसी प्रभाव भी छोड़े. इन प्रभावों से सोचने के ढंग तक प्रभावित हुए. शिष्ट व्यवहार, रीतिरिवाज, नीति और विज्ञान, कला और दर्शन आदि सब इन्हीं प्रभावों के परिणाम हैं.

हम अपनी हर हरकत से एकदूसरे पर एक खास किस्म का असर डालते हैं. अस्तित्व को बनाए रखने के लिए इन प्रभावों को बनाए रखना भी जरूरी है. और अच्छी तरह बनाए रखने के लिए अच्छे प्रभावों की जरूरत है. अच्छे प्रभावों के लिए अच्छे संबंध जरूरी हैं. इन्हीं अच्छे संबंधों के लिए नैतिक विधान की जरूरत पड़ती है, लेकिन जब ये विधान रूढ हो कर किसी कट्टर धर्म में बदल जाते हैं तो निश्चय ही मनुष्य की प्रगति में बाधक सिद्ध होते हैं. दरअसल यह बाधा सिर्फ इस कारण आती है कि हम वैज्ञानिक ज्ञान के साथ अपने धर्म का तालमेल बैठा कर नहीं चलते.

यदि हम उदाहरणार्थ, वैज्ञानिक ज्ञान के संदर्भ में मनोविज्ञान को लें तो इस का यानी नैतिक प्रवृत्तियों का [illegible] भी आज के लड़खड़ाते हुए सामाजिक ढांचे को गिरने से बचाने के लिए बहुत जरूरी है, जब कि स्थिति यह है कि अंधी धार्मिकता से ग्रस्त लोग मनोविज्ञान को मान्यता देने में ही संकोच करते दिखाई पड़ते हैं और इस विज्ञान पर यहां तक आरोप लगाते हुए पाए जाते हैं कि यह नीति और धर्म के क्षेत्र में घुसपैठ कर रहा है. मनोविज्ञान को अविकसित ज्ञान कह कर इस की अवहेलना करने का भी षड्‌यंत्र रचा जा रहा है. लेकिन इस विरोधी प्रचार का असल कारण यह भय है कि मनोविज्ञान कहीं इन धार्मिक महंतों की पूरी तरह पोल न खोल दे.

ब्रह्मचर्य महज एक रोग

किसी भी विषय पर धार्मिक दृष्टिकोण के स्थान पर मनोवैज्ञानिक दृष्टि की बात करने का अर्थ यह भी होता है कि मानसिक अवस्था में कोई अंतर आया है यानी भावनात्मक स्थितियां अपेक्षाकृत बौद्धिक हो गई हैं. जादूमंतर, टोनेटोटके, बलियां, कर्मकांड आदि बातें तभी तक हमारा भय कम कर सकती हैं जब तक हम अज्ञान के अंधेरे में भटक रहे होते हैं. ज्ञान की रोशनी पाते ही हम यह सब त्याग देते हैं और ऐसी नई चीज अपना लेते हैं जो हमें निश्चित रूप से सीधे तौर पर हमारे लक्ष्य की ओर ले जाने वाली होती है और साथ ही स्पष्ट रूप से बुद्धि की पकड़ में आने वाली और तर्कसंगत होती है.

इस में कोई संदेह नहीं कि मनोविज्ञान ने परंपरागत नैतिकता और धर्म का महत्त्व कम कर दिया है, क्योंकि इस ने मानव की नैतिक नियंत्रण संबंधी धारणाओं के पीछे छिपी कई गलतफहमियों की तरफ उंगली उठा दी है. मनोविज्ञान कहता है कि व्यक्ति की वांछाओं का ज्यादा दमन करने से उस में एक खास किस्म का स्नायविक रोग पैदा हो जाता है जो उसे पागल भी बना सकता है. मनोविज्ञान के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस फैसले ने भी धर्म और अध्यात्म के हठयोगियों को झिझोड़ कर रख दिया, क्योंकि वे तो अभी तक यही मानते चले आए थे कि मनुष्य के संवेगों पर चाहे जिस तरह का नियंत्रण लगाया जाए, उस का कोई बुरा फल नहीं निकल सकता, बल्कि अच्छा ही फल निकलता है.

आज तो मनोविज्ञान ने यहां तक सिद्ध कर दिया है कि ब्रह्मचर्य जैसी चीज भी एक मनोरोग है. बाहरी दुनिया की निराशाजनक स्थितियां किसी एक व्यक्ति में एक खास किस्म की पलायनवादी प्रतिक्रिया जगा देती हैं जो कि बाद में आक्रामक हो कर स्वयं उसी व्यक्ति के विरुद्ध प्रहार करने लगती हैं. वास्तव में हुआ यह होता है कि ब्रह्मचारी होने से पहले उस व्यक्ति ने कुछ इच्छाएं की होती हैं जो पूरी नहीं हो पातीं तो वह अपमानित महसूस कर के भीतर ही भीतर क्रोध में घुमड़ने लगता है. यही क्रोध आक्रामक रूप प्राप्त कर लेता है. लेकिन जब वह किसी और के खिलाफ आक्रांता हो नहीं पाता या अपनी इच्छापूर्ति के रास्ते की रुकावटों को दूर नहीं कर सकता तो अपनेआप को ही दंड देने लगता है कि तुम ने इच्छा ही क्यों की?

मनोवैज्ञानिकों ने तो यहां तक सिद्ध कर दिया है कि कुछ आत्महत्याओं के पीछे भी यही तत्त्व काम करते हैं. आत्महत्या करने वाला व्यक्ति वास्तव में किसी ऐसे की हत्या करना चाहता था जिस के हाथों वह बुरी तरह अपमानित हो रहा हो, लेकिन कमजोर होने के कारण वह अपनी इस इच्छा को पूरी न कर सका और उलटे अपनी ही जान पर खेल गया. इस तरह की हर हरकत के पीछे भावना यही रहती है कि चाहे जैसे हो उस व्यक्ति को भी कष्ट पहुंचाया जाए जिस ने हमें सताया है. आत्महत्या करने वाला भी यही सोच कर और आश्वस्त हो कर मर जाता है कि अब तो उसे पश्चात्ताप होगा ही.

यही आक्रांता प्रवृत्ति जब समाजगत अथवा संस्थागत रूप लेती है तो अजब ही वेश बदल कर उजागर होती है. महीनों तक धरना देने वाले कारखानों के मजदूर और ब्रह्मचर्य का व्रत धारण करने वाले धार्मिक लोग आदि सब के सब प्रकारांतर से इसी कोटि में आते हैं. यह एक तरह का स्वयं को दिया गया दंड होता है.

ब्रह्मचर्य नामक मनोरोग का विश्लेषण करते हुए मनोवैज्ञानिकों ने यहां तक निष्कर्ष निकाला है कि धर्मानुशासन के नाम पर अपनी आत्मपीड़क प्रवृत्ति को इंद्रिय निग्रह में लगाना एकदम अनुपयोगी और असामाजिक कृत्य है. इस तरह का आदमी एक प्रकार के आत्मभोग में पड़ा रह कर सिर्फ यह आत्मसंतोष पाए रहता है कि उस ने अपने शरीर की शक्तियों को वश में कर लिया है. अन्य कोई आध्यात्मिक लक्ष्य उस के सामने नहीं होता और ऐसा व्यक्ति समाज का एक बिलकुल निकम्मा हिस्सा साबित होता है. कई ऐसी कुंठाएं उस में पैदा हो जाती हैं जिन का दूषित प्रभाव उस वातावरण पर भी पड़ता है जिस में वह रह रहा होता है.

धर्म से विवेक का ह्रास

वास्तव में शरीर से अलग किसी 'आत्मा' नाम के तत्त्व की कल्पना ही सारी मुसीबतों की जड़ है. जीवविज्ञान (बायोलाजी) की शोधों से पहले तक तो हमें यह भी पता नहीं था कि हमारे शरीर में कितनी नसनाड़ियां हैं और उन में कितने-कितने और किसकिस तरह के कीटाणु हर समय रेंगते रहते हैं. तो फिर 'आत्मा' नाम की अदृश्य चीज को इन अध्यात्मवादियों ने शरीर के भीतर कौन सी 'एक्स रे' मशीन से देख लिया था?

पदार्थ की स्वतःसंचालित प्रक्रिया को न समझ पाने के कारण ही आत्मा की कल्पना कर ली गई थी और इसी को किसी मायावी ताकत (भगवान) के साथ जोड़ डाला गया था. इस प्रकार लोगों ने अपनी तरफ से संपूर्ण ज्ञान का एक शार्टकट ढूंढ़ निकाला था.

असल में होता यह है कि क्योंकि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वतःसंचालन करने की बजाए आज्ञापालन ज्यादा आसान लगता है. इसलिए हम अपने से बाहर का कोई ऐसा नियंता तलाश कर लेते हैं जो हमारा व्यवहार निर्दिष्ट करता रहे तथा ऐसा नायक या हीरो भी खोज लेते हैं जो हमारे आदर्शों को अमल में लाता रहे. ताकि हम उस सारी जहमत और वकालत से बचे रहें और अपने आदर्शों को खुद ही अमल में लाने की मेहनत न करनी पड़े. नायक पूजा (हीरो वरशिप) के पीछे यही मनोवैज्ञानिक कमजोरी काम करती है और यह मानव की आदिम अवस्था की परिचायक है.

इसी कमजोरी के कारण व्यक्ति अपने विवेक द्वारा निज को संचालित कर के चलने का जोखिम आमतौर पर टालता आया है और विकल्प के तौर पर कभी तो वह अपने संचालन की बागडोर किसी धर्मगुरु के हाथों में सौंप देता है और कभी किसी डिक्टेटर के हाथों में. फ्लूगल नामक मनोवैज्ञानिक ने अपनी पुस्तक 'मैन, मारल एंड सोसाइटी' में विकल्पों के रूप में और अधिक बारीकी तक जा कर चर्चा की है और निष्कर्षस्वरूप यह सिद्ध कर दिया है कि इस प्रकार अपने विवेक का प्रलंबन कर के व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत समीक्षण शक्ति खो देता है, व्यक्तिगत दायित्वबोध का भी लोप हो जाता है और व्यक्ति एक ऐसे आदिम व्यवहार की कोटि में भी पहुंच सकता है जिसे यदि विवेक की कसौटी पर कसा जाए तो मानव का सिर शर्म से झुक जाए.

किसी ठोस प्रतीक में भी विवेक का प्रलंबन हो जाता है. वह प्रतीक चाहे झंडा हो, चाहे कोई रंग हो, चाहे कोई लिखित आदर्श वाक्य हो, या फिर पत्थर का कोई टुकड़ा हो. इसी मनोवैज्ञानिक कमजोरी का अनुचित लाभ एकतंत्रीय राज्यों में भी उठाया जाता है और आध्यात्मिक गुरु भी इसी के जरिए अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं. पर किसी राजा या आध्यात्मिक नेता से भी ऊपर किसी पारलौकिक काल्पनिक आकृति का स्थान आ जाता है, क्योंकि सांसारिक या लौकिक चीजों की तो फिर भी सीमाएं होती हैं जिन्हें किसी न किसी दिन जान कर हम निराश हो सकते हैं. इसलिए आखिरी आसरे के तौर पर हम भगवान की शरण में जा पहुंचते हैं और वहां जा कर सुरक्षित महसूस करने का वहम ओढ़ लेते हैं.

इस प्रकार भगवान के हाथों अपने विवेक की बागडोर सौंप कर धार्मिक व्यक्ति अपने नैतिक कर्तव्यों से भी छुट्टी पा जाता है और अपने को जिम्मेदारियों से भी बरी कर लेता है.

क्या विवेक पदार्थगत तत्व है?

इसलिए अगर हमें कोई ऐसी नैतिकता चाहिए, जिस में हम अपनी यानी मनुष्य की शक्ति को सर्वोपरि बना सकें, तो हमें ये सारी आध्यात्मिक अटकलें एकदम त्याग देनी होंगी. इन्हें त्यागने से पहले हमें इस भ्रम से भी मुक्त होना होगा कि मनुष्यों से परे कोई और रहस्यमयी सत्ता है और इस वहम से मुक्ति के लिए यह जान लेना अनिवार्य है कि हम जो कुछ भी देख रहे हैं, महसूस कर रहे हैं, सब का सब सिर्फ पदार्थ है, अन्य कुछ नहीं. और पदार्थ स्वयं ही गतिमान है तथा अपनी विशेषताएं और रूप आकार बदलता रहता है. पदार्थ की यही स्वतःगतिमान परिवर्तनशीलता और इस के आंतरिक अणुओं के परस्पर विरोधी तत्त्व ही वह वैज्ञानिक रहस्य है जिसे अज्ञानवश हम किसी बाहरी रहस्यमयी शक्ति के रूप में मान कर अकारण ही अभी तक डरते आए थे.

यह भी अनिवार्य हो जाता है कि हम अपने विवेक की पुरानी परिभाषा छोड़ कर यह जान लें कि विवेक भी एक पदार्थगत तत्त्व ही है जिसे हम सिर्फ इसलिए भगवान पर प्रलंबित करते आ रहे थे ताकि हम स्वयं कर्म करने से पलायन किए रह सकें और स्वयं कुछ करने की बजाए या अपने कर्मों के लिए स्वयं उत्तरदायी बनने की अपेक्षा किसी दूसरे को जिम्मेदार ठहरा सकें.

4079 मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-55

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पूंजीपति

बसंत चटर्जी

समझदार व्यक्ति को इस नाम से चिढ़ क्यों?

'पूंजीपति' शब्द के साथ आज प्रायः सारी दुनिया में कुछ ऐसे अर्थों का समावेश हो गया है कि अच्छे से अच्छा और ईमानदार पूंजीपति भी अब अपने को इस नाम से पुकारा जाना पसंद नहीं करता. अब उस ने अपने लिए कुछ अन्य नाम ईजाद कर लिए हैं, जैसे व्यापारी, उद्यमी (एंटरप्रेन्योर), उद्योगपति आदि. लेकिन क्या वास्तव में 'पूंजीपति' शब्द में ऐसी प्रतिध्वनि है जिस के कारण किसी शरीफ आदमी को इस नाम में अपने लिए किसी प्रकार की निंदा व अपमान की झलक मिले? आखिर 'पूंजीपति' कहलाने में ऐसी क्या बुराई है कि अच्छाभला समझदार व्यक्ति भी इस नाम से कुछ चिढ़ सा जाता है?

शायद इस में उन तथाकथित सोशलिस्टों व कम्युनिस्टों के निरंतर प्रचार का अधिक हाथ है जो एकदो अपवादों के आधार पर सभी पूंजीपतियों को कुछ इस तरह चित्रित करते हैं मानो वे मनुष्य न हो कर किसी अज्ञात जाति के रक्तपिपासु जंतु हों, जो अपने श्रमिकों का खून चूसचूस कर गुब्बारे की तरह फूल गए हैं. कुछ ऐसा कार्टून ये लोग पूंजीपति का बनाते हैं.

कहना न होगा कि हर कार्टून की तरह पूंजीपति के इस बहुप्रचलित कार्टून में भी सत्य का एक अंश है. वह यह है कि पूंजीपति सचमुच 'छोटे' से 'बड़ा' हुआ है. अब आप इसे गुब्बारे की तरह फूलना कह लीजिए या वास्तविक हाड़मांस की वृद्धि से बलवान होना. लेकिन इस में संदेह नहीं कि इस वृद्धि या बड़ेपन का जो कार्टून बनाया जाता है, वह यदि घृणा व दुश्मनी पर आधारित नहीं तो फिर उस का मूल केवल अज्ञानता है. पूंजीपति की वास्तविक प्रकृति व समाज में उस के रचनात्मक योगदान के बारे में अज्ञानता.

पूंजीपति ही कार्य करवा सकता है!

एक बात साफ है कि हम अपनी अर्थव्यवस्था व उद्योगों के संचालन के लिए चाहे कैसी भी प्रणाली अपनाएं, पर हमें उस के विभिन्न स्तरों पर कुछ लोगों को नियंत्रक व निर्देशक के रूप में कार्य सौंपना ही होगा. इन्हें आप उच्च अधिकारी कह लीजिए या मालिक, लेकिन इन के बिना कोई व्यवस्था चल जाए, यह असंभव है. ऐसी हालत में क्या यह अधिक हितकर नहीं कि जो भी व्यक्ति हमारे ऊपर बैठा हो, वह हम सब लोगों से ज्यादा जिम्मेवार हो, जिसे अन्य सब लोगों की अपेक्षा अपने काम की ज्यादा चिंता हो और जो इन कारणों से अन्य सब लोगों के मुकाबले ज्यादा योग्यता व ज्यादा निर्णयशक्ति वाला हो?

ऐसी गारंटी सिर्फ पूंजीवाद ही दे सकता है. यदि पूंजीपति योग्य नहीं है तो वह अधिक दिनों तक पूंजीपति भी नहीं बना रह सकता. वह कंगाल भले ही न बने, लेकिन पूंजीपति बने रहने के लिए उसे अन्य लोगों की अपेक्षा कुछ ज्यादा योग्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तो होना ही होगा. यदि वह ऐसा नहीं होगा तो उसे अपना कारोबार किसी अन्य व्यक्ति के हाथों में सौंप कर स्वयं घर पर बैठ जाना होगा या फिर सारी संस्था अथवा कारखाने का दिवाला निकाल देना होगा.

पूंजीवाद में योग्यता ही है

पूंजीपति को अकसर एक 'ऊपर वाले व्यक्ति' (बास) या मालिक के रूप में चित्रित किया जाता है. लेकिन पूंजीपति के लिए बास के अर्थ में मालिक होना जरूरी नहीं है और न उस अर्थ में मालिक (बास) के लिए पूंजीपति होना ही जरूरी है. वैसे तो हम सभी अपनेअपने लिए पूंजीपति होते हैं, अर्थात अपनी योग्यता व मेहनत की पूंजी लगा कर लाभ अर्जित करते हैं, लेकिन पूंजीवाद में सारी बात सिर्फ योग्यता की होती है. जो भी व्यक्ति योग्य होगा वही असली बास होगा. पूंजीवाद सिर्फ इतनी गारंटी देता है कि पूंजीपति यदि मालिक है तो वह अन्य लोगों से कुछ अधिक योग्य भी है. यह बात किसी अन्य व्यवसाय पर लागू नहीं होती. अन्य हर व्यवसाय में अपेक्षित योग्यता के बिना भी व्यक्ति टिका रह सकता है, लेकिन व्यावहारिक पूंजीपतित्व में नहीं.

इस के बावजूद यदि सफल से सफल पूंजीपति भी पूंजीपति कहलाने में संकोच करता है तो इस के लिए केवल तथाकथित समाजवादियों का विरोधी प्रचार ही काफी कारण नहीं हो सकता. स्वयं हमारे समाज के गठन में भी कुछ ऐसे तत्त्व या कारण होंगे जो इस संकोच को प्रेरित करते हैं.

हम देखते हैं कि कई अन्य तथाकथित पूंजीवादी देशों की तरह हमारे यहां भी पूंजीवाद को तीन अलगअलग अर्थों में संदेह की दृष्टि से देखा जाता है. पहला दृष्टिकोण धार्मिक या दार्शनिक है, दूसरा सामंतवादी है और तीसरा बुद्धिवादी. अंतिम तत्त्व में समाजवादियों के प्रचार को भी— जहां तक वह केवल शत्रुता पर आधारित न हो कर खुले वादविवाद के दायरे में आता है—शामिल किया जा सकता है.

हमारी धर्मपुस्तकों ने तो नहीं पर हमारे धार्मिक दृष्टिकोण ने सांसारिक धनसंपत्ति की हमेशा ही निंदा की है. कई अन्य धर्मों की भांति हमारे यहां भी तथाकथित त्यागी संतमहात्माओं की महिमा बहुत ज्यादा है. और उन के कारण लोकधर्म का ज्यादा जोर भी इस दुनिया के सुखऐश्वर्य के त्याग तथा अगली दुनिया या अगले जन्म की चिंता करने पर रहा है. हमारी धर्मपुस्तकों में ईसा के इस कथित वाक्य जैसा कोई वाक्य नहीं है, "ऊंट के लिए सूई के छेद में से निकलना संभव है पर धनवान के लिए स्वर्ग में प्रवेश पाना असंभव," लेकिन हमारी लोकसंस्कृति ठीक ऐसी ही विचारधारा पर आधारित जरूर रही है. साथ ही क्योंकि धनवान के धन के बिना स्वयं धर्म का अपना काम भी नहीं चल सकता, इसलिए अन्य धर्मों की भांति प्रचलित हिंदू धर्म में भी इस विषय में एक दोहरी नीति अपना ली गई अर्थात 'हाथी के दांत खाने के और, दिखाने के और' का अनुसरण किया गया. धर्म ने सिद्धांत में तो धनसंपत्ति, सूद, मुनाफा और धनसंग्रह की भर्त्सना जारी रखी, पर व्यवहार में उसी संग्रह में से एक मोटा हिस्सा खुद अपने लिए सुरक्षित रखने की अनेक तिकड़में भी कर लीं.

धर्म भी पूंजीपति को दबाता है

संदेह नहीं कि धनसंग्रह संबंधी धर्म के इस झूठे दृष्टिकोण से समाज में व्यापक झूठ व कपटाचार को बढ़ावा मिला और उसी का एक रूप वह दिखावे का संकोच है. जो पूंजीपति अपने को पूंजीपति कहलाने में अनुभव करता है, या दर्शाता है. धर्म द्वारा प्रस्तुत झूठे मानदंडों पर पूरा उतरने के चाव में बड़े से बड़ा पूंजीपति भी खुले आम यह कहना या सुनना पसंद नहीं करता कि वह पूंजीपति है, पूंजी लगा कर मुनाफा कमाता है और धनसंग्रह करता है, फिर उस संग्रह किए गए धन से और अधिक मुनाफा कमाता है. धर्म के डर से बेचारा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह कह नहीं पाता कि उस का तो काम ही मुनाफा कमाना और धनसंग्रह करना है.

इस सीधीसच्ची बात को स्वीकार करने की बजाए वह अकसर सिद्ध यह करने की कोशिश करता है कि धन कमाने और संग्रह करने से उसे वास्तव में कोई मोह नहीं है, वह तो यह काम केवल पुण्य रूप में, धन से निर्लिप्त रह कर, कर रहा है. इस दावे की पुष्टि के लिए वह धर्माचार्यों को कुछ देदिला कर उन का मुंह तो खैर बंद करता ही है, साथ ही कोई मठमंदिर या धर्मशाला (और कुछ नहीं तो एक प्याऊ ही) बनवा कर अपनी दानवीरता व उदारता का प्रदर्शन भी करता है.

संकोच का दूसरा कारण हमारे समाज में प्रचलित यह सामंतवादी मान्यता है कि व्यक्ति अच्छाबुरा, योग्यअयोग्य या श्रेष्ठ व हीन जन्म व पूर्वसंस्कारों से होता है, इस में शिक्षा या धनसंपत्ति के साधनों से कुछ अधिक परिवर्तन नहीं लाया जा सकता. हमारे यहां यह धारणा जातपांत के रूप में विशेष प्रकट हुई है. इस के कारण हमारे समाज में व्यक्ति को केवल अपने धन के आधार पर उतना सम्मान नहीं मिल पाता जितना कि जाति, वंश या कुल के आधार पर मिलता है.

हमारे यहां आज भी राजवंशी, राजवंशी ही हैं और मोची, मोची ही है. कहने को चाहे कुछ भी कह लिया जाए और कोई मोची धनपति जेब से पैसा खर्च कर के अपने गले में चाहे कितने ही हार डलवा ले, लेकिन उसे समाज में उस प्रकार का वास्तविक सम्मान प्राप्त नहीं हो सकता, जैसा कि एक तथाकथित उच्चवंशीय व्यक्ति को प्राप्त होता है.

जाति का गर्व अधिक!

यही कारण है कि हमारे यहां का पूंजीपति केवल धनवान होने का उतना गर्व नहीं करता जितना कि इस बात का करता है कि वह अमुक तथाकथित ऊंची जाति या कुल का है और इसी पूर्वग्रह के कारण वह अपने को केवल पूंजीपति कहलाने में संकोच करता है. उसे यह डर लगा रहता है कि कहीं वह उस मोची पूंजीपति से भी हेठा न समझ लिया जाए जिस के पास उस के मुकाबले में शायद चार पैसे ज्यादा ही हैं.

संकोच का तीसरा कारण आधुनिक युग की यह बौद्धिक उपलब्धि है कि उद्योग व्यापार में मुनाफा, अतिरिक्त श्रम से पैदा होता है, अर्थात समाज जितना खाता है, उस से अधिक जब वह अपनी मेहनत से पैदा करे, तभी मुनाफा हो सकता है. और पूंजीपति क्योंकि अपनी पूंजी लगा कर उस पर दूसरों से मेहनत लेता है इसलिए उसे जो मुनाफा होता है, उस में उन दूसरों का, यानी मजदूरों का, अतिरिक्त श्रम भी शामिल होता है.

मुनाफा क्या शोषण है?

जब से आधुनिक कम्युनिज्म के प्रवर्तक मार्क्स ने इस तथ्य की खोज की है, तभी से दो अलगअलग प्रक्रियाएं घटी हैं. एक ओर मजदूरों के नेताओं के हाथ में यह कहने का एक तर्कसम्मत आधार आ गया कि मुनाफा क्योंकि मजदूरों का अतिरिक्त श्रम है, अर्थात वह मेहनत है जिस का मुआवजा उन्हें नहीं मिला (वे अपनी सुविधा के लिए पूंजी के रोल को बिलकुल नजरअंदाज कर जाते हैं, इसलिए जब पूंजीपति उस सारे मुनाफे को अपने घर ले जाता है अथवा अपनी अनुत्पादक संपत्ति बढ़ाने पर लगा देता है तो वह साफ तौर पर मजदूरों का शोषण करता है. इस शोषण के विरुद्ध खड़े होने, आंदोलन करने और इस सारी व्यवस्था में क्रांति लाने का पूरा अधिकार मजदूरों को है, आदिआदि.) दूसरी तरफ, क्योंकि बहुत से पूंजीपति मुनाफे से बड़े हिस्से को वास्तव में अपने निजी ऐश्वर्य और भोगविलास पर खर्च करते रहे हैं और आज भी कर रहे हैं अथवा उस के द्वारा अपनी अनुत्पादक संपत्ति में वृद्धि करते हैं, इसलिए वे प्रायः ही इस आरोप का समुचित उत्तर देने की नैतिक क्षमता से वंचित रहे हैं कि वे (पूंजीपति)

शोषण करते हैं.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आगे चल कर एक विकल्प के रूप में पूंजीपतियों ने यह नीति अपनाई कि एक तरफ तो इस सारे विषय में लगभग चुप्पी साध ली और दूसरी तरफ अपने लिए 'पूंजीपति' शब्द के प्रयोग पर अरुचि व्यक्त कर के एक प्रकार से यह स्वीकार कर लिया कि 'पूंजीपति' और 'शोषक' पर्यायवाची शब्द ही हैं.

किसी पूंजीपति ने आज तक किसी तथाकथित श्रमिक नेता या समाजवादी क्रांतिकारी से यह नहीं पूछा कि मुनाफे के रूप में मजदूरों का भी शोषण होता है, उसे कैसे रोका जा सकता है? क्या कोई समाजवादी वह विलक्षण युक्ति बता सकता है जिस से इस प्रकार का कोई भी शोषण न हो? जाहिर है कि इस शोषण को रोकने का एक ही तरीका है और वह यह कि तमाम उद्योगव्यापार 'न लाभ, न घाटे' (क्योंकि घाटे की सूरत में बेचारे पूंजीपति का भी तो शोषण होता है) के आधार पर चलाए जाएं अर्थात जितनी भी आमदनी हो, उसे सब मिल कर खापी कर बरबाद कर दें! क्या कोई भी अर्थव्यवस्था, प्रशासन व्यवस्था या सुरक्षा व्यवस्था इस आधार पर दो दिन भी चल सकती है?

क्या समाजवादी क्रांतिकारी अपनी देखरेख में जो व्यवस्था लाना चाहते हैं, वह इसी आधार पर चलेगी? क्या रूस, चीन व अन्य समाजवादी देशों में उद्योगव्यापारों का यही आधार है? लेकिन यदि समाजवादी व्यवस्था भी मुनाफा पैदा करने पर आधारित है तो फिर समाजवाद में भी कमकरों का शोषण होता है. और अगर वह शोषण नहीं होता तो फिर सिर्फ पूंजीवाद में ही मुनाफा पैदा करने को शोषण क्यों कहा जाए? और सिर्फ मुनाफा पैदा करने के कारण पूंजीपति को निंदनीय क्यों समझा जाए? इस के विपरीत देखना तो सिर्फ यह चाहिए कि किस व्यवस्था में ज्यादा मुनाफा पैदा हो सकता है और वह किनकिन कामों में लगता है?

पूंजीवाद समृद्धि का प्रतीक

जब पूंजीवाद यह सिद्ध कर सका है कि वह मुनाफा पैदा करने और पूरे समाज को समृद्ध बनाने का एक बेहतर तरीका है तो फिर पूंजीपति को अपने सही नाम से पुकारे जाने पर आपत्ति या संकोच क्यों हो? कम से कम उसे अपनी व्यवस्था और विचारधारा का समर्थन व प्रचार उतनी ही स्पष्टता व आत्मविश्वास के साथ करना चाहिए, जितनी स्पष्टता और आत्मविश्वास का परिचय कोई कट्टर समाजवादी या मार्क्सवादी क्रांतिकारी देता है. कोई भी युद्ध केवल प्रतिरक्षात्मक कारवाइयों से नहीं जीता जा सकता. ●

सरिता-मुक्ता के महत्त्वपूर्ण रिप्रिंट

	दर
पहला सैट	
लगभग 25 रिप्रिंट	3.00
दूसरा सैट	
लगभग 32 रिप्रिंट	5.00
तीसरा सैट	
लगभग 24 रिप्रिंट	3.00

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

89:4078

मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नियोग

गंगासहाय 'प्रेमी'

प्राचीन भारतीय संस्कृति का एक चौंकाने वाला पहलू

नियोग प्रथा का प्राचीन भारत में पर्याप्त प्रचलन था. पुत्र की आवश्यकता अनेक कार्यों के लिए होती है. बिना पुत्र के स्वर्ग नहीं मिलता, अगर मिल भी जाए तो श्राद्ध व जलदान के अभाव में शांति नहीं मिलती. पुत्र के बिना संपत्ति के उत्तराधिकार की भी चिंता रहती है. कठिन श्रम से कमाई हुई हमारी संपत्ति को दूसरा भोगे, इस से अधिक असंतोष की बात और क्या हो सकती है? पुत्र को हम अपना ही रूप समझते हैं, अतः उस के द्वारा संपत्ति भोगने की कल्पना मात्र से पुलकित हो उठते हैं : 'आत्मा वै जायते पुत्रः' आत्मीयता से प्रेरित हो कर लोग अपनी सात पीढ़ियों का प्रबंध कर जाते हैं. पुत्र की आवश्यकता वृद्धावस्था में सहारा देने व सेवा करने के लिए भी पड़ती है.

नियोग या व्यभिचार

'पुत्रहीन की गति नहीं होती'—ऐसा विश्वास प्राचीन भारत में पाया जाता था. आज भी बहुत से लोग इस प्रकार का अंधविश्वास पालते हैं. जिन के स्त्री की अयोग्यता के कारण संतान नहीं होती थी व तो दूसरा, तीसरा या चौथा विवाह करने के लिए स्वतंत्र थे. जहां संतान न होने में पुरुष की अयोग्यता कारण होती थी, उस परिस्थिति का सामना करने के लिए नियोग प्रथा बनाई गई थी.

स्मृतियों में नियोग के विषय में स्पष्ट संकेत मिलते हैं. नियोग की व्यवस्था में इस बात का पूरा ध्यान रखा गया था कि लोग इस का सहारा ले कर व्यभिचार न करने लगें :

'अपुत्रां गुर्वनुज्ञातो
देवरः पुत्रकाम्यया,
सपिंडो वा सगोत्रो वा
घृतां पृक्तरितावियात्.६८
आगर्भ संभवाद् गच्छेद्
पतितस्त्वन्यथा भवेत्,
अनेनविधिना जातः
क्षेत्रजोऽस्य भवेत् सुतः.' ६९

(याज्ञवल्क्य स्मृति, आचाराध्याय, विवाह प्रकरण)

(देवर गुरुजनों की आज्ञा ले कर पुत्र की कामना से पुत्रहीना (भाभी) से समागम करे. देवर के अभाव में सपिंड तथा सपिंड के अभाव में सगोत्र नियुक्त किया जाए. संभोग के समय पुरुष शरीर पर घी लगा ले. वह गर्भधारण तक समागम करे, अन्यथा पतित हो जाएगा. इस प्रकार उत्पन्न पुत्र इस का क्षेत्रज होता है.)

संभोग के समय यदि पुरुष शरीर पर घी लगा लेगा तो आलिंगनजन्य सुख से वंचित रहेगा. मनु ने इसी बात को और भी स्पष्ट रूप में कहा है :

'देवराद् वा सपिंडाद् वा
स्त्रिया सम्यङ्नियुक्तया,
प्रजेप्सिताधिगंतव्या
संतानस्य परिक्षये. ५९
विधवायां नियुक्तस्तु
घृताक्तो वाग्यतो निशि,

एकमुत्पादयेत् पुत्रं
न द्वितीयं कथंचन. ६०
द्वितीयमेके प्रजनं
मन्यन्ते स्त्रीषु तद्विदः,
अनिर्वृत्तं नियोगार्थं
पश्यंतो धर्मतस्तयोः. ६१
विधवायां नियोगार्थे
निर्वृत्ते तु यथाविधि,
गुरुवच्च स्नुषावच्च
वर्तेयातां परस्परम्.६२
नियुक्तौ यौ विधिं हित्वा
वर्तेयातां तु कामतः,
तावुभौ पतितौ स्यातां
स्नुषागगुरुतल्पगौ.६३
नान्यस्मिन् विधवा नारी
नियोक्तव्या द्विजातिभिः,
अन्यस्मिन् हि नियुंजाना
धर्मं हन्युः सनातनम्.६४
नोद्वाहिकेषु मंत्रेषु नियोगः
कीर्त्यते क्वचित्...'६५
(मनुस्मृति, नवां अध्याय)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संतान का नाश होने पर (गुरुजनों द्वारा) ठीक से नियुक्त स्त्री को देवर या सपिंड व्यक्ति से मनचाही संतान प्राप्त करनी चाहिए. विधवा में नियुक्त व्यक्ति शरीर पर घी लगा कर तथा मौन रह कर रात में समागम करे. केवल एक पुत्र उत्पन्न करे, दूसरा कभी नहीं. कुछ विद्वान लोग नियोग का तात्पर्य पूरा न होने पर द्वितीय पुत्र की भी आज्ञा देते हैं.

क्या ब्राह्मण स्वार्थ नहीं?

विधवा में यदि नियोग का तात्पर्य पूरा हो जाए तो उन्हें परस्पर गुरुवत् और पुत्रवधू के समान रहना चाहिए. जो नियुक्त स्त्रीपुरुष विधि छोड़ कर इच्छानुकूल कार्य करते हैं, वे दोनों पुत्रवधूगमन तथा गुरुगमन पाप के भागी होते हैं. अगर विधवा नारी का अन्य जाति के पुरुष से नियोग करना हो तो द्विजाति से ही करें. यदि द्विजाति के अतिरिक्त नियोग किया जाएगा तो सनातन धर्म नष्ट हो जाएगा. वैवाहिक मंत्रों में नियोग की चर्चा नहीं है.

यहां मनु ने केवल विधवा के साथ नियोग में शरीर में घी लगाने का वर्णन किया है. विवाह संबंधी मंत्रों में नियोग का उल्लेख नहीं है, इस से सिद्ध है कि नियोग का प्रचलन मंत्रनिर्माण काल के बाद हुआ है.

नियोग के लिए सब से पहले देवर का विधान है. देवर के अभाव में जेठ भी लिया जा सकता है. इन के अभाव में सपिंड और सगोत्र व्यक्तियों का क्रम है.

यदि नियोग के लिए जाति से बाहर का पुरुष लेना हो तो द्विजाति लेना चाहिए. यहां द्विजाति शब्द का तात्पर्य हमें ब्राह्मण जान पड़ता है. क्षत्रिय और वैश्य जब विवाह रूप में ब्राह्मण को कन्या दे कर स्वयं को धन्य मानते थे तो नियोग के लिए भी ब्राह्मण को ही प्राथमिकता देना स्वाभाविक है. द्विजातियों में वैश्य का नाम आता अवश्य है, पर प्राचीन काल में उस का विवरण नहीं के बराबर है. जो कुछ व्यवस्था है, वह सब ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीच है. ऐसी दशा में स्वाभाविक है कि क्षत्रिय नियोग के लिए ब्राह्मण को रखे.

संसार में किसी भी व्यक्ति के सगोत्र या सपिंड लोगों का न मिलना संभव नहीं है. फिर इस जाति से बाहर वाली चर्चा का क्या औचित्य? हमारे विचार से तो 'अन्यस्मिन् विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः' का अर्थ यह है कि यदि विधवा नारी का परिवार से बाहर नियोग करना हो, ब्राह्मण को चुनना चाहिए.

हमारे इस विचार के अनेक आधार हैं. जिस प्रकार समाज और धर्म के नियम बनाने वाले ब्राह्मणों ने सभी क्षेत्रों में अपनी सुविधा का ध्यान रखा है, उसी प्रकार वे नियोग में भी नहीं चूके होंगे. ब्राह्मण समाज ने इस प्रकार की मान्यता फैला रखी थी कि राजा लोग भी ब्राह्मण को कन्या देने में अहोभाग्य समझते थे. पांचाल राजा द्रुपद द्रौपदी के स्वयंवर के बाद अपने पुत्र धृष्टद्युम्न से पूछ रहे हैं :

'कच्चित् सवर्ण प्रवरो मनुष्यः

पुरोहित वर्ग सिर्फ यजमान के धन ही से संतुष्ट नहीं होता था—उसे यजमान की स्त्रियों में भी हिस्सा चाहिए था

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उद्रिक्त वर्णोऽप्युत एव कच्चित्,
कच्चिन् न वामो मम मूर्ध्निपादः
कृष्णाभिमर्शेन कृतोऽद्य पुन्नः.'
(महा० आदि पर्व, अध्याय १९१/१६)

(क्या द्रौपदी को पाने वाला कोई अपना ही समान वर्ण (क्षत्रिय) श्रेष्ठ पुरुष है या अपने से भी श्रेष्ठ ब्राह्मण कुल का है. मेरी कृष्णा का स्पर्श कर किसी नीच वर्ण वाले ने मेरे सिर पर बायां पैर तो नहीं रख दिया.)

ब्राह्मण लोग नियोग के लिए बुलाए जाते और साथ ही उन्हें इस कार्य के लिए धन भी दिया जाता था. विचित्रवीर्य के मरने पर सत्यवती ने भीष्म से कहा कि नियोग द्वारा भाई की पत्नी से संतान उत्पन्न करो. भीष्म ने उत्तर दिया :

'पुनर्भरतवंशस्य
हेतुं संतानवृद्धये,
वक्ष्यामि नियतं मात-
स्तन् मे निगदतः शृणु. १
ब्राह्मणो गुणवान् कश्चिद्
धनेनोप निमंत्र्यताम्,
विचित्रवीर्य क्षेत्रेषु
यः समुत्पादयेत् प्रजाः.' २
(महा० आदि पर्व, अध्याय १०४)

(हे मातः, भरत वंश की संतान परंपरा को बढ़ाने और सुरक्षित रखने के लिए जो नियम उपाय है, उसे मैं बताता हूं. किसी गुणवान ब्राह्मण को धन दे कर बुलाओ जो विचित्रवीर्य की स्त्रियों से संतान उत्पन्न कर सके.)

क्या शांतनु के सपिंड या सगोत्र व्यक्ति थे ही नहीं जो ब्राह्मण को बुलाने की आवश्यकता पड़ी! हमारे विचार से स्मृति. ग्रंथों में सपिंड या सगोत्र का विधान होने पर भी घर से बाहर का ब्राह्मण नियुक्त करने की परंपरा रही होगी. इस प्रकार ब्राह्मणों ने अपने लिए दक्षिणा और आनंद दोनों ही सुरक्षित कर लिए थे.

सत्यवती ने बाहर का कोई ब्राह्मण बुलाने की अपेक्षा अपने अवैध पुत्र व्यास को यह लाभ देना उचित समझा. व्यासजी इस नियोग में लगे और शांतनु वंश में धृतराष्ट्र, पांडु तथा विदुर का जन्म हुआ. जिस प्रकार भीष्म ने अपनी प्रतिज्ञा के सामने शास्त्र की व्यवस्था और माता की आज्ञा को कोई महत्त्व नहीं दिया, उसी प्रकार क्या व्यास भी इस से बचने के लिए स्मृतियों का वचन उद्धृत नहीं कर सकते थे? वह सत्यवती को सगोत्र या सपिंड से नियोग कराने की सलाह दे सकते थे. पर व्यासजी ने सत्यवती का यह प्रस्ताव बिना किसी हीलहुज्जत के स्वीकार कर लिया :

'वेत्थ धर्मं सत्यवति
परं चापरमेव च. ३९
तथा तव महाप्राज्ञे
धर्मे प्रणिहिता मतिः,
तस्मादहं त्वन्नियोगाद्
धर्ममुद्दिश्य कारणम्. ४०
ईप्सितं ते करिष्यामि
दृष्टं ह्येतत् सनातनम्,
भ्रातुः पुत्रान् प्रदास्यामि
मित्रावरुणयोः समान्.' ४१
(महा० आदि पर्व, अध्याय १०४)

(माता सत्यवती! आप पर और अपर दोनों प्रकार के धर्मों को जानती हैं. आप की बुद्धि सदा धर्म में लगी रहती है. मैं आप की आज्ञा से धर्म को दृष्टि में रख कर आप की इच्छा के अनुकूल कार्य करूंगा. यह सनातन धर्मशास्त्रों में देखा गया है. मैं अपने भाई के लिए मित्र और वरुण के समान तेजस्वी पुत्र उत्पन्न करूंगा.)

व्यासजी ने जैसे पुत्र उत्पन्न किए उसे सभी जानते हैं—एक अंधा था और दूसरा पीलिया रोग से ग्रसित. व्यासजी इस प्रस्ताव को मना कर के क्यों ब्राह्मण समाज के हित में बाधक होते.

व्यासजी के संबंध में एक और बात

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कह कर हम दूसरी चर्चा छेड़ें. सत्यवती ने व्यासजी से नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न करने का अनुरोध पांडुवंश की सुरक्षा के लिए किया था. पहला पुत्र अंधा होने की संभावना थी तो सत्यवती ने कहा, 'अंधा बालक कुरुवंश का राजा नहीं हो सकता. ऐसा दूसरा पुत्र दो, जो जाति तथा वंश की रक्षा करे.' व्यासजी ने माता की बात मान ली :

'किं तु मातुः स वैगुण्यात्
अंध एवं भविष्यति,
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा
माता पुत्रमथाब्रवीत्. १०
नांधः कुरूणां नृपतिरनुरूपस्तपोधन,
ज्ञाति वंशस्य गोप्तारे
पितृणां वंशवर्द्धनम्. ११
द्वितीयं कुरुवंशस्य
राजानं दातुमर्हसि,
स तथेति प्रतिज्ञाय
निश्चक्राम महायशाः.' १२
(महा० आदि पर्व, अध्याय १०५)

दूसरी बार नियोग कर के जब व्यास जी निकले तो सत्यवती ने होने वाले बच्चे के विषय में पूछा. व्यासजी ने उसे 'पांडु' रंग का बताया तो माता ने एक और बच्चे के लिए कहा और व्यासजी मान गए:

'ततोनिष्क्रांतमालोक्य
सत्या पुत्रमथाब्रवीत्,
शशंस स पुनर्मात्रे
तस्य बालस्य पांडुताम्. १९
तं माता पुनरेवान्यमेकं पुत्रमयाचत,
तथेति च महर्षिस्तां
मातरं प्रत्यभाषत.' २०
(महा० आदि पर्व, अध्याय १०५)

तीसरी बार गर्भाधान की आज्ञा देने के लिए सत्यवती के पास क्या तर्क था? यदि व्यासजी की आसक्ति इधर नहीं थी तो क्या वह मना नहीं कर सकते थे? माता की आज्ञा दो बार मान कर तो झंझट पाल ही चुके थे.

तीसरी बार जब व्यासजी गए तो अंबालिका ने स्वयं न जा कर व्यासजी के पास अपनी दासी भेज दी. व्यासजी ने उसे दासी जान कर भी उस से सहवास किया तथा प्रसन्न हो कर उसे दासीपन से मुक्त कर दिया :

'सा तु रूपं गंधं च
महर्षेः प्रविचित्यतम्,
नाकरोद् वचनं देव्या
भयात् सुरसुतोपमा. २३
ततः स्वैर्भूषणैर्दासीं
भूषयित्वाप्सरोपमाम्,
प्रेषयामास कृष्णाय
ततः काशिपतेः सुता. २४
सा तमृषिमनुप्राप्तं
प्रत्युद्गम्याभिवाद्य च
संविवेशाभ्यनुज्ञाता
सत्कृत्योपचचार. २५
कामोपगेन रहस्तस्यां तुष्टिमगादृषिः,
तया सरोषितो राजन्
महर्षिः संशितव्रतः. २६
उत्तिष्ठन्नब्रवीदेनाम-
भुजिष्या भविष्यसि.' २७
(महा० आदि पर्व, अध्याय १०५)

व्यासजी की आज्ञा ले कर दासी ने उन का स्वागत किया. क्या वह दासी को मना नहीं कर सकते थे? फिर उन्हें नियोग करना था कुरुवंश की रक्षा के लिए. भला एक दासी का पुत्र कुरुवंशी कैसे हो जाता? उस की माता या पिता कोई भी उस वंश का नहीं था. व्यासजी ने उसे स्वीकार किया, उस के साथ सहवास से तुष्ट हुए और दासीपन से मुक्त होने की घोषणा कर दी. क्या यह सब सिद्ध करता है कि इस नियोग में व्यासजी को, आकर्षण अनुभव नहीं हुआ.

इंद्रियसुख के साथ धन भी

जब व्यासजी जैसे वृद्ध और विद्वान व्यक्ति भी नियोग के समय इंद्रियसुख से अछूते नहीं रहे तो ऐसा कौन ब्राह्मण हो सकता है जो इंद्रियों पर संयम कर के कर्तव्य रूप में इधर लगे. फिर यह मानने में क्या बुराई है कि ब्राह्मणों ने यह नियम इंद्रियसुख और दक्षिणा के लालच में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चलाया.

नियोग के लिए विधान चाहे देवर, सपिंड आदि का रहा हो, लेकिन प्रचलन ब्राह्मणों को ही नियुक्त करने का था. इस विषय में हम दूसरा प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं. ऋषि के शाप के कारण जब पांडु संतान उत्पन्न करने में अशक्त हो गए तो उन्होंने अपनी पत्नी कुंती से कहा :

'धर्ममेवं जना संतः पुराणं परिचक्षते,
भर्ता भार्यां राजपुत्रि
धर्म्यं वा धर्म्यमेव वा.४
यद् ब्रूयात तत्तथाकार्य
मिति वेदविदो विदुः,
विशेषतः पुत्रगृध्नी
हीनः प्रजननात् स्वयम्. ५
यथाहमनवद्यांगि पुत्र दर्शन लालसः,
तथा रक्तांगुलितलः
पद्मपत्रनिभः शुभे. ६
प्रसादार्थं मया तेऽयं
शिरस्युभ्युद्यतोऽजलिः,
मन्नियोगात् सुकेशांते
द्विजातेस्तपसाधिकात्. ७
पुत्रान् गुण समायुक्ता-
नुत्पादयितुमर्हसि,
त्वत्कृतेऽहं पृथुश्रोणि
गच्छेयं पुत्रिणां गतिम्.' ८

(महा० आदि पर्व, अध्याय १२१)

(सज्जन लोग इसी को प्राचीन धर्म कहते हैं. पति अपनी पत्नी से जो बात कहे उसे अवश्य पूर्ण करना चाहिए, वह बात धर्म के अनुकूल हो चाहे प्रतिकूल. विशेषतः ऐसे पति की बात अवश्य माननी चाहिए जो पुत्र की लालसा रखता हो और स्वयं पुत्र उत्पन्न करने में असमर्थ हो. मैं पुत्र का मुख देखने को उत्सुक हूं. अतः लाललाल उंगलियों से युक्त तथा कमल दल के समान अंजलि मस्तक के पास धारण कर के तुम्हें प्रसन्न करता हूं. सुंदर केशों वाली प्रिये! तुम मेरी आज्ञा से तपस्या में बढ़ेचढ़े किसी ब्राह्मण के साथ समागम कर के गुणवान पुत्र उत्पन्न करो. इस प्रकार मैं तुम्हारी कृपा से पुत्रवानों की गति पा जाऊंगा.)

पांडु ने तपस्वी ब्राह्मण का नाम क्यों लिया? उन के तो बड़ा भाई भी था और छोटा भाई भी. यह उद्धरण सिद्ध करता है कि क्षत्रिय लोग नियोग के लिए ब्राह्मणों को ही बुलाते थे.

धर्मशास्त्र में नियोग के लिए ब्राह्मण की अनिवार्यता न रहने पर भी व्यापार और परंपरा में यही आ गया था कि अन्य विकल्प रहते हुए भी ब्राह्मणों को ही प्रधानता दी जाती थी.

ब्राह्मण यह काम धार्मिक अनुष्ठान की दृष्टि से नहीं बल्कि जीविका और आनंद-प्राप्ति की दृष्टि से करते थे, इस के प्रमाण में हम एक प्रसंग पर और चर्चा कर के निबंध समाप्त करेंगे.

दीर्घतमा ऋषि को उन के पुत्रों ने बांध कर गंगा में डाल दिया. वह बहते-बहते काशी पहुंचे. वहां उन्हें काशी नरेश बलि ने निकाला :

'जग्राह चैनं धर्मात्मा
बलिः सत्य पराक्रमः,
ज्ञात्वा चैवं स बव्रेऽथ
पुत्रार्थे भरतर्षभ. ४२
संतानार्थं महाभाग
भार्यासु मम मानद,
पुत्रान् धर्मार्थ कुशलान्-
उत्पादयितु मर्हसि. ४४
एवमुक्तः स तेजस्वी
तं तथेत्युक्तवान् रिषिः,
तस्मै स राजा स्वां भार्यां
सुदेष्णां प्राहिणोत् तदा. ४५
अंध वृद्धं च तं मत्वा
न सा देवी जगाम ह,
स्वां धात्रेयिकां तस्मै
वृद्धाय प्राहिणोत तदा. ४६
तस्यां काक्षीवदादीन्स
शूद्रयौनावृषिस्तदा,
जनयामास धर्मात्मा
पुत्रानेकादशैव तु. ४७
काक्षीवदादीन् पुत्रांस्तान्
दृष्ट्वा सर्वान् अधीयतः,
उवाच तं रिषि राजा
ममेमे इतिभारत. ४८
नेत्युवाच महर्षि स्तं

ममेमे इति चाब्रबीत्,
शूद्र योनौ मया ह्येते
जाता काक्षीऽववादयः. ४६
अंधं वृद्धं च मां दृष्ट्वा
सुदेष्णा महिषी तव,
अवमन्य ददौ मूढा
शूद्रां धात्रेयिकां मम. ५०
ततः प्रसादयामास
पुनः तमृषि सत्तमम्,
बलिः सुदेष्णां तां भार्यां
तस्मै संप्राहिणोत तदा. ५१
तां स दीर्घतमांगेषु
स्पृष्ट्वा देवीमथाब्रवीत्,
भविष्यंति कुमारास्ते
तेजसा दिव्यवर्चसिः. ५२
एवमन्ये महेष्वासाः
ब्राह्मणैः क्षत्रियाभुवि,
जाता परम धर्मज्ञा वीर्यवंतो महाबलाः.
एतत् श्रुत्वा त्वमप्यत्र
माता कुरु यथेप्सितम्.' ५६

(महाभारत आदि पर्व के अंतर्गत संभव पर्व में भीष्मसत्यवती संवाद, अध्याय १०४, पृष्ठ १६२–१६३—चित्रशाला मुद्रणालय, १०२६, सदाशिव वीथी, पूना से शाके १८५० में प्रकाशित)

(गंगा में बहते हुए दीर्घतमा को सच्चे पराक्रमी धर्मात्मा बलि ने पकड़ लिया. जब बलि को दीर्घतमा का परिचय मालूम हुआ तो उन्होंने पुत्र के लिए कहा. बलि बोले, 'मुझे संतान मिल जाए. इस उद्देश्य से आप मेरी पत्नी के धर्मार्थ कुशल पुत्र उत्पन्न करें.' उन तेजस्वी ऋषि ने राजा बलि का प्रस्ताव मान लिया. राजा ने अपनी पत्नी सुदेष्णा उन के पास भेजी. वह देवी सुदेष्णा दीर्घतमा को अंधा और बुड्ढा समझ कर नहीं गई, अपितु उस के पास अपनी धाय भेज दी. उन धर्मात्मा दीर्घतमा ने उस शूद्रा से काक्षीवद् आदि ११ पुत्र उत्पन्न किए. एक बार उन काक्षीवद् आदि पुत्रों को पढ़ाते हुए देख कर राजा ने उन ऋषि से पूछा, 'ये बच्चे मेरे हैं?' ऋषि बोले, 'नहीं, ये बच्चे आप के नहीं, मेरे हैं. इन काक्षीवद् आदि को मैं ने शूद्रा से उत्पन्न किया है. तुम्हारी रानी सुदेष्णा ने मुझे अंधा और बूढ़ा जान कर मेरा अपमान किया और मुझे यह शूद्रा धाय दे दी. इस पर बलि ने उन श्रेष्ठ को पुनः प्रसन्न किया और अपनी पत्नी सुदेष्णा उन के पास भेजी. दीर्घतमा ने उस देवी के अंगों को छू कर कहा, 'तेरे दिव्य शक्ति वाले तेजस्वी पुत्र उत्पन्न होंगे.' यह कथा सुना कर भीष्मजी सत्यवती से कहते हैं, 'इसी तरह ब्राह्मणों ने क्षत्रिय नारियों के उदर से अन्य धनुषधारी, धर्मज्ञ, वीर्यवान एवं महाबली लोग उत्पन्न किए हैं. यह सुन कर हे माता, आप भी जो चाहो वह करो.)

महर्षि दीर्घतमा की यह कथा अनेक नए तथ्य सामने रखती है. उन्होंने धर्मशास्त्र के नियोग संबंधी सभी नियमों को उठा कर अलग रख दिया है. यह जानते हुए कि मेरे पास आई नारी रानी नहीं उस की धाय है, वह संभोग करते रहे. उस के एक नहीं ११ पुत्र हो गए. न तो राजा ने मना किया और न दीर्घतमा ने ही विराम लेना उचित समझा. सारी बात मालूम होने पर जब राजा ने दूसरी बार सुदेष्णा को भेजा तो ऋषिजी ने उस के अंगों को छू कर देखा. इस का क्या मतलब? क्या नियोग में यह विधान भी है कि संभोग से पहले नारी के अंग देख कर आनंद लिया जाए.

दीर्घतमा के प्रसंग में यदि किसी नियम का पालन हुआ तो वह था संभोग के समय अंधकार रहना. दीर्घतमाजी अंधे थे, इस लिए यह अंधेरा हो सका. अगर उन की आंखें होतीं तो वह नियोग के लिए भेजी गई नारी का रूप अवश्य निहारते. जो व्यक्ति आंखें न होने पर किसी नारी को टटोल कर देखता है, उस के अगर आंखें होतीं तो क्या वह उसे देखने का आनंद छोड़ सकता था!

राजा ने दीर्घतमा को वृद्ध और अंधा समझ कर यह काम सौंपा था. राजा ने सोचा होगा, यह नियोग के नाम पर धार्मिक अनुष्ठान ही करेंगे, इंद्रियसुख के नाते उस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में लीन नहीं होंगे. जिस कारण राजा ने किसी युवा ब्राह्मण को नहीं रखा. वही बात सामने आई. इस उदाहरण से नियोग के लिए ब्राह्मण की अनिवार्यता असंदिग्ध हो जाती है.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्मृतियों और धर्मशास्त्रों के वचनों की उपेक्षा कर के नियोग के लिए ब्राह्मण क्यों ग्रहण किए जाने लगे, इस का संकेत महाभारत में इस प्रकार मिलता है :

'एवमुच्चावचैरस्त्रै
भार्गवेणमहात्मना,
त्रि:सप्तकृत्वा पृथ्वी
कृता नि:क्षत्रिया पुन:.४
एवं नि:क्षत्रिये लोके
कृते तेन महर्षिणा,
ततः संभूय सर्वाभिः
क्षत्रियाभिः समन्ततः.५
उत्पादितान्यपत्यानि
ब्राह्मणैर्वेद पारगैः,
पाणिग्राहस्य तनय
इति वेदेषु निश्चितम्.६
धर्मं मनसि संस्थाप्य
ब्राह्मणान् ताः समभ्ययपु:,
लोकेऽप्याचरितो दृष्टः
क्षत्रियाणां पुनर्भवः.'७

(महा० आदि पर्व, अध्याय १०४)

(इन ऊंचेनीचे शस्त्रों से माहत्मा भार्गव अर्थात् परशुराम ने २१ बार धरती क्षत्रियरहित कर दी. इस से सभी क्षत्रिय-नारियों ने चारों ओर से एकत्र हो कर वेदज्ञ ब्राह्मणों के संयोग से संतान उत्पन्न की. वह संतान उन ब्राह्मणों की नहीं अपितु उन क्षत्रिय नारियों के स्वर्गीय पतियों की कहलाई, क्योंकि वेदों में पुत्र पाणिग्रहण करने वाले अर्थात पति का ही निश्चय किया गया है. वे नारियां मन में धर्म का निश्चय कर के ब्राह्मणों के पास गई थीं. इस प्रकार लोक में, बाद में भी ब्राह्मणों के संयोग से क्षत्रियों की उत्पत्ति देखी गई है.)

परशुराम के क्षत्रिय संहार के बाद क्षत्रिय नारियों ने नियोग के लिए विवश हो कर ब्राह्मणों को लिया. आगे चल कर यह विवशता परंपरा बन गई तथा अन्य शास्त्रनिहित लोगों के रहते हुए भी नियोग के लिए ब्राह्मण ही लिए जाने लगे.

क्या इतने सब उदाहरण यह सिद्ध नहीं करते कि नियोग को ब्राह्मणों ने अपने सुख, जीविका, इंद्रियलोलुपता व स्वार्थ का साधन बना लिया था. ●

सरिता-मुक्ता के महत्त्वपूर्ण रिप्रिंट

	दर
पहला सैट लगभग 25 रिप्रिंट	3.00
दूसरा सैट लगभग 32 रिप्रिंट	5.00
तीसरा सैट लगभग 24 रिप्रिंट	3.00

दिल्ली बुक कंपनी, एम-12, कनाट सरकस, नई दिल्ली-110001.

मुद्रक व प्रकाशक : दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली

90:4078

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

State Museum Library • Lucknow •

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh